॥ श्रीः ॥

नैपालका इतिहास ।

जिसको

मुरादाबादनिवासी सुखानंदमिश्रात्मज-

पंडित बलदेवप्रसाद मिश्रने

Indian Antiquary, Journey Asiatic Society of Bengal, Francis Hamilton's Kingdom of Nepal, Kirkpatrick's Nepal, Wright's History of Nepal, Dr. Bhagwan Lall Indraji's History of Nepal, C. Bendall's journey in Nepal.

विश्वकोष, वंशावली इत्यादि ग्रंथ और सामयिक पुस्तकोंसे सार संकलन करके बनाया ।

और

खेमराज श्रीकृष्णदासने

बंबई

अपने "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेसमें मुद्रितकर प्रकाशितकिया ।

संवत् १९६१, शके १८२६.

भूमिका।

धीरे २ आजकल इतिहासग्रंथोंका प्रचार हो रहाहै, यह बड़े आनंदकी बातहै। वास्तवमें ऐतिहासिक ग्रंथोंका प्रचार होनेसे प्राचीन काल व आधुनिक कालकी बहुतसी बातें जानी जातीहैं। आजकल बहुतसे ग्रंथाधीशोंका ध्यान इस ओर आकर्षित हुआहै आशाहै कि हिन्दी भाषासे अनुराग रखनेवाले पाठकगण शीघ्रही बहुतसे आवश्यकीय इतिहासोंको अपनी मातृभाषामें प्रचलितहुआ देखेंगे। प्राचीनकालकी कलाकौशल, प्राचीनकालका धर्म प्राचीनकालका आचार व्यवहार यह सब बातें इतिहाससेही जानी जाती हैं। यही विचारकर "**श्रीवेङ्कटेश्वर**" (स्टीम) यंत्रालय और "**श्रीवेंकटेश्वर समाचार**"के स्वामी श्रीमान् सेठ **खेमराज श्रीकृष्णदासजीने** अबकीबार कई पुस्तकोंके अतिरिक्त "**श्रीवेङ्कटेश्वर समाचार**"के उपहार में "**नैपालका इतिहास**" देनाभी स्वीकार किया. और तदनुसार उसके बनानेकी मुझे आज्ञादी। उक्त श्रीमान्की आज्ञाको शिरपर धार अत्यंत परिश्रम और विचारसे कई अंग्रेजी और देशी भाषाओंके इतिहासोंका सार ले यह इतिहास तैयार किया. आशाहै इसको निहारकर पाठकगण मेरे परिश्रमको सफल करेंगे।

इस इतिहासके प्रस्तुत करनेमें मुझको केवल तीनमासकाही समय मिलाहै, अतएव यदि कहींपर कुछ भूल प्राईजाय तो पाठकगण दयादृष्टिसे सूचित करें तो दूसरीवारके संस्करणमें उस भूलका सुधार करदिया जायगा।

मैं अपने परमहितकारी मित्र पं. कन्हैयालाल उपाध्याय, मुन्नालाल शर्मा गौतम, टेहरी गढवाल निवासी श्रीमान् पं. हरिदत्तजी शास्त्री और पंडित श्रीलालको धन्यवाद देताहूं कारण कि उपरोक्त मित्रोंने इस पुस्तकके संकलनमें समय २ पर मुझको बड़ी सहायता दीहै।

बलदेवप्रसाद मिश्र,

दीनदारपुरा, मुरादाबाद.

श्रीः ।

नैपालका इतिहास ।

हिमालयकी तलैटीमें भारतवर्षके बीच नेपाल एक स्वाधीन राज्यहै । इस राज्यकी वर्त्तमान उत्तर सीमामें तिब्बत राज्य, पूर्वसीमामें शिकम राज्य, दक्षिणसीमामें हिन्दोस्थान और पश्चिमसीमामें कुमायूं तथा रुहेलखंड प्रदेशहै । सन१८१५ ई०के पहिले कुमायूं और उसके पश्चिममें शतद्रुनदीके किनारेतक इस राज्यकी सीमा गिनीजातीथी सन १८१६ ईट की सन्धिमें यह सब स्थान अंग्रेजोंके अधिकारमें आगये । अब केवल पश्चिममें काली या सरयूनदी, दक्षिणमें अयोध्याके बीचका डुण्डवा पर्वत, चम्पारनमें सोमेश्वर पर्वतकी ऊंची भूमि और पूर्वमें मेंची नदी और शृङ्गाट पर्वतही नेपाल और अंग्रेजी राज्यके बीचमें सीमारूपसे विराजमान है ।

शक्तिसङ्गम तंत्रमें नेपालकी सीमा इसप्रकार लिखांहै:–

"जटेश्वरं समारभ्य योगेशान्तं महेश्वरि ।
नैपालदेशो देवेशि साधकानां सुसिद्धिदः ॥"

अर्थात् जटेश्वरसे लेकर योगेश्वरतक नैपालदेश है, यह स्थान साधकोंको सिद्धिका देनेवालाहै ।

नैपालनामकी उत्पत्ति ।

हिमालय पर्वतकी तलैटीके जिस पहाड़ी अंशमें गोर्खा जातिका वासहै, उसको तिब्बतीय और हिमालयके ऊपरवाले अहिन्दू पहाड़ी भाषामें "पाल" देश ÷ कहते हैं ।

वर्त्तमान नैपालराज्यके पूर्वांश और शिकमदेशको वहांकी पुरानी असभ्य लेप्चाजाति 'ने' नामसे पुकारतीथी । लेप्चा, नेवार और दूसरी कई एक परस्पर मिलीहुई जातियोंकी चैन भारतीयभाषामें 'ने' शब्दका अर्थ पर्वतकी गुफाहै, जहां घरकी भांति आश्रय लेकर मनुष्य रहसकें । तिब्बत, ब्रह्म और लामालोगोंकी भाषामें 'ने' शब्दका अर्थ पवित्र गुफा या देवताको समर्पित रक्षित पवित्रस्थान अथवा पीठहै । इससे सहजमेंही जानाजाताहै कि, जो गोर्खा जातिके रहनेका स्थान हिमालयकी तलैटीमें पाल देशहै, जहां काषाकास्तूप ※ और स्वयम्भूनाथ आदि 'ने' अर्थात् पवित्र तीर्थ स्थान हैं, उनको समष्टिको ही नेपाल

÷ तिब्बतीय भाषामें 'पाल' शब्दका अर्थ पशमहै । हिमालयके इस अंशमें पशम (लोम) वाले बहुतसे बकरे पाये जाते हैं, इसकारण वहलोग इस देशको पालदेश कहतेहैं, ऐसा अर्थ भी होसकताहै ।

※ An account of this stamp, see proc of the Bengal Asiatic society 1892.

(अर्थात् पाल राज्यान्तर्गत पवित्र तीर्थ वा रहनेकी जगह) कहतेहैं और फिर कोई २ कहतेहैं कि, इस पार्वत्यदेशके जिस भागमें नेवारजातिका वास था, वह पहिले 'ने' नामसे पुकारा जाताथा। 'ने' नामक स्थानमें रहनेसेही इस जातिका नाम 'नेवार' हुआहै। इस नेवारजातिने पहिले बौद्धमतको मानकर अपने देशमें भगवान् बुद्धकी कीर्तिको प्रकाशित किया, और उनकेही नामसे इस स्थानका नाम नेपाल हुआ। यह जगह 'लिपुवा' कथित 'ने' नामक स्थानसे अलग है।

"नेपाल" यह नाम पूरे देशका नहींहै; जिस स्थानमें इस राज्यकी राजधानी काठमाण्डू नगरहै, उस स्थानका नामही नेपालहै, उससेही सम्पूर्ण राज्यका नामकरण हुआहै। यह राज्य पूर्व पश्चिममें २५६ कोस लम्बा, और उत्तर दक्षिणमें ३५ से लेकर ७५ कोस चौड़ाहै। अक्षा० २६° २५। से ३०° १७। ७०ं और द्राघि० ८०° ६–से ८८°१४। पू०। भूमिका परिमाण ५४००० वर्ग माइल है।

प्राकृतिक विभाग।

नेपालका राज्य स्वभावसेही पश्चिम, मध्य और पूर्व इन तीन बड़ी २ दरियोंमें विभक्तहै। पर्वतके चार ऊंचे शिखर इन तीन उपत्यका–विभागके प्रधान कारण हैं। कुमायूं देशमें जहां अंग्रेजोंका अधिकारहै नंदादेवी शिखरकी छोटी २ नदियोंके मिलनेसे काली नदी बनी है। यह नदीही नेपालराज्यकी पश्चिम दरीकी सीमाहै। नन्दादेवीसे सौ कोस पूर्वमें धवलगिरिशिखर (अर्थात् दूधगङ्गा) विराजमानहैं। इसके ठीक दक्षिणमें गोरखपुर बसा हुआहै। यह शिखर मध्य उपत्यकाकी पश्चिम सीमाकी भांति स्थितहै। नन्दादेवीशिखर और धवलगिरिशिखर इन दोनोंके बीचमें पश्चिम उपत्यका स्थितहै। धवलगिरिसे ९० कोस पूर्वकी ओर गोसाइंथान शिखर स्थितहै। पूर्वोक्त नेपालनामक उपत्यकाके ठीक उत्तरमें यह गोसाईथान पर्वत शोभायमानहै। पर्वतका यह शिखर पूर्व उपत्यकाकी पश्चिम सीमा और धवलगिर तथा गोसाईथान पर्वतके बीचमें मध्य उपत्यका होकर खड़ाहै। गोसाईथानसे ६५ कोस पूर्व शिकम राज्यमें जहां अंग्रेजोंका अधिकारहै वहां काञ्चन जंघा शिखरही नेपालकी पूर्व उपत्यकाकी पूर्वसीमाहै। इस पर्वतके कितनेही दक्षिणके अंशभी शिकम व नेपालराज्यको पूर्वसीमाके सिवाने माने जातेहैं।

पहाड़ी मार्ग।

हिमालयकी पीठको भेदकर तिब्बत जानेके लिये बहुतसे पहाडी मार्ग हैं। किन्तु यह मार्ग बहुधा तुषारसे ढके हुए रहते हैं। इनमेंसे जो मार्ग सबसे नीचीभूमिमें होकर गया है, वह यूरोपके सबसे ऊंचे पर्वतसे भी ऊंचाहै।

१–पकला–खरमार्ग 'वू' आड़िमार्ग नन्दादेवी और धवलगिरि शिखरके बीचमें है। जहां शतद्रु नदी उत्पन्न हुई है उस स्थानके निकट घाघरा नदीसे कर्णाली नामक उपनदी निकलकर इस मार्गसे तिब्बतको छोड़ती हुई नेपालमें आपुसी है। जहां कर्णाली

नदीने तिब्बतकी सीमामें पैर रक्खाहै, वहां थकनामक ग्रामहै। इस ग्रामके नामसेही इस मार्गका नाम थकला हुआहै। थकग्राममें तिब्बतके नमकका बड़ाभारी व्यापार होताहै।

२—मस्तं मार्ग—धवलगिरिसे २० कोस पूर्वमें है। धवलगिरिकी तलैटीमें तिब्बतकी ओर इस नामका एक स्थान है। उसके नामसेही इस मार्गका नामकरण हुआ है यद्यपि मस्तं स्थान धवलगिरिके उत्तरमें है तथापि वहांका राजा नेपालको कर देता है। मस्तं उपत्यका हिमालयके बरफीले उत्तर और दक्षिण पर्वतोंके बीचके एक ऊंचे स्थान पर स्थित है। यह राज्य गोरखा राज्यमालाके अन्तर्गत नहीं है। मस्तंगिरि मार्गके उत्तरभागमें प्रधान मार्गके ऊपर मुक्तिनाथ नामका एक ग्राम है जो तीर्थस्थान कहलाता है और इसस्थानमें भी तिब्बती लवणका व्यापार होताहै। मस्तंसे आठ दिनमें और धवलगिरिके निकटवाली माली भूमिके प्रधान नगर वीनी शहरसे मुक्तिनाथ तीर्थ चार दिनका मार्ग है।

३—केरी मार्ग; गोसाईंथान पर्वतके पश्चिममें है।

४—कुटीमार्ग—गोसाईंथान पर्वतके पूर्वमें है। यह दोनों मार्ग राजधानी काठमाण्डूके निकटही हैं इसकारण इनमेंही होकर तिब्बती तीर्थयात्री और व्यापारी प्रतिवर्ष शीतकालमें नैपालको आतेहैं। नैपालकी राजधानी काठमांडूसे तिब्बत राजधानी लासाको जानेका मार्ग केरा होकरही गया है। टेरी नामक स्थानमें यह मार्ग कुटीमार्गके मार्गमें मिलगया है। कुटीमार्गही तिब्बतमें जानेके निमित्त सीधा और छोटा है। किन्तु इस मार्गमें टट्टू नहीं चल सकता।

चीनको जानेके लिये नैपालके राजदूत कुटीमार्गसे जाते हैं, किन्तु लौटनेपर चीनी टट्टूकी सवारी लानेके कारण केरा पथसे आते हैं। सन् १७९२ ई० के युद्धमें चीनी सेना इस केरामार्गसेही आई थी। कुटीमार्गके पश्चिमवाले बरफसे ढके पहाड़को खुर्द-भूमि (ताम्रभूमि) कहते हैं और उसके पूर्वी पर्वतका नाम तांबाकोशी है इस पर्वतसे ताम्रकोशी नदीकी उत्पत्ति हुई है। जो कोशीनदीकी एक उपनदी है। भोंटिया नदी भी (कोशीनदीकी सात नदियोंसे पृथक्) इसकुटी मार्गमें होकरही बहती है।

५—हतियामार्ग, कुटी मार्गसे २०। २५ कोस पूर्वमें है। कोसीनदीकी सात उप-नदियोंमें प्रधान अरुणनदी भी इस मार्गसे होकर नैपालमें प्रवेश करतीहै।

६—वर्ल वा वलचनमार्ग; काञ्चनजंघाके पश्चिममें नैपालकी पूर्वसीमाके अन्तमें यह मार्ग है। तिब्बतीलोग शीतकालमें इन सम्पूर्ण मार्गोंसे होकर नैपालमें आते जातेहैं।

नदीकी अववाहिका।

नैपालके जिन तीन विभागोंका वर्णन किया है। यह और भी तीन नामोंसे पुकारे जातेहैं। नैपालमें तीन प्रधान नदीहैं घाघरा, गण्डकी और कोसी; यह क्रमानुसार पश्चिम और पूर्व उपत्यकाके बीचमें होकर बही हैं क्रमशः यह तीनों उपत्यका इन नदियोंके नामसे प्रत्येक नदीकी अववाहिका कही जातीहैं। इनके अतिरिक्त गण्डकी और कोसी

नदीके बीचमें नेपाल उपत्यका (दरी) है । इसमें ही काठमांडू नगर बसाहुआहै, यहींपर बागमती नदी बहती है । यह नदी मुंगेरके सामने गंगाजीमें मिलीहै । इन चार नदियोंकी अववाहिकामें पहाड़ी नेपालका समस्त भूखंड स्वयंही विभक्त है । इसके अतिरिक्त पहाड़ी नेपालके दक्षिणमें जो भूभाग नेपालराज्यके अन्तर्गत है, वह "तराई" नामसेही विख्यात है ।

राज्यविभाग ।

ऊपर कहेहुए प्राकृतिक विभागभी अनेक खण्डोंमें बंटेहुएहैं ।

१–पश्चिमउपत्यका वा घाघरा अववाहिका स्थान–२२ खंडोंमें विभक्तहै । इन बाईस खण्डोंको बाईस राज्य कहतेहैं । इन बाईस राज्योंमें बाईस राजा या जिमींदार हैं, उनमेंसे एक राजा प्रधान और इक्कीस राजा उसके अधीन रहतेहैं । जुमला, जमयीकोट, चाम, आचाम, रुगम, मुसीकोट, रोयाला, मल्लिबम्म, बलह, देलिक, दारिमेक, दोती, मुलियाना, तमकी, बेहरी, कालागांव, भदियाकोट, गुटम, और गूजर यह बाईस राज्यहैं । इनमेंसे जुमला राज्यही प्रधानहै । वही दूसरे इक्कीस राज्योंपर शासन करता है । जुमला राजकी राजधानी चिन्ना चिन्ह है । इस राज्यका स्वामी गोरखियोंसे पराजित होनेके पहिले छयालीस राज्योंका स्वामी था । कालीनदी और गोरखाराज्यमें यह ४६ राज्य थे उनमेंसे बाईस कालीनदीकी अविवाहिकामें और छब्बीस गण्डकीनदीकी अविवाहिकामें हैं । यह समस्त राजालोग जुमलाके महाराजको मछली, पशु इत्यादि वस्तुओंसे करदेतेथे । यद्यपि जुमलाराज्यका अब वैसा प्रभाव नहींहै, तोभी दूसरे राजालोग अबतक उसको चक्रवर्ती मानकर नियमित कर देतेथे । उन छयालीस राज्योंमेंसे छब्बीस राज्य बहादुर-शाहने नेपालमें मिला लिये । यहांके रजालोग अबभी जुमलाराज्यसे राजाकी उपाधि पाते और राजवंशीय उपाधिसे माने जाते हैं । अब तो यह लोग केवल नेपालके जागीरदारहीहैं । इन राज्योंकी आमदनी ४। ५ हजारसे लेकर ४।५ लाखतककी है । सबके पास अस्त्रधारी सेवक हैं । जिनकी संख्या कहीं चारसौ पांचसौ और कहीं चालीस पचासतक है ।

जुमलाराज्यके पीछेही दोतीराज्यका नाम लिया जासकताहै । इसकी राजधानीका नाम दोती (द्युति) वा दिपैत (दीप्ति) है । इस राज्यकी लोकसंख्या और राज्योंसे अधिकहै । दोती नगर कर्णालीनदीकी श्वेतगङ्गा नामक शाखाके वाएँ तटपर और बरेली शहरसे ४२॥ कोस उत्तर पूर्वमें बसा हुआहै । यहां दो दल पैदलहैं और कुछ तोपेंभी रहतीहैं ।

मुलियाना । यह नगर अयोध्याकी सीमाके अन्तर्मेंहै, यहां नैपाली छावनी है । लखनऊसे साठ कोस उत्तरमें बसा हुआहै । मुलियाना शहरके २५ कोस उत्तर पूर्वमें 'पेन्ताना' शहरहै । इस शहरमें नैपालियोंका सिलहखाना और बारूदखानाहै । यहां शोरा बहुतायतसे पायाजाताहै । मुलिमन मदी नामक विख्यात उपत्यका राप्ती नदीके दोनों किनारोंपर फैली हुई है ।:

२—मध्य उपत्यका वा गण्डकी अववाहिका प्रदेश—

नेपालीलोग प्राचीनकालसेही इस देशको जानतेहैं और सप्तगण्डकी उपत्यकाके नामसे पुकारतेहैं । सप्त गण्डकीका यह अर्थहै कि, गण्डकी नदीकी उपादान स्वरूप सात नदियां । यह सातों नदीही धवलगिरि और गोसाईंथान शिखरके बरफीले स्थानोंसे उत्पन्न हैं । सात नदियोंके नाम यह हैं—भेरिगर नारायणी या शालग्रामी, श्वेतगण्डकी, मरस्यांगडी (मर्स्यांग्नि) धरमड़ी, गण्डी और त्रिशूलगङ्गा । यह सब उपनदी एक स्थानमें मिलकर फिर तीन शाखामें बटगईहैं । फिर जिस स्थानमें मिलकर गण्डक नाम धारण करके सोमेश्वर पर्वतके एक मार्गद्वारा विहारमें घुसीहै, उस पहाड़ीमार्गको त्रिवेणी कहतेहैं । त्रिशूलगङ्गाके उत्पत्तिस्थानके पास छोटे बड़े २२ तालावहैं । इनमेंसे गोसाईं थान शिखरपर गोसाईं कुण्ड या नीलखियत (नीलकण्ठ) कुण्डही बड़ाहै, और इस सरोवरके नामानुसारही सम्पूर्ण पर्वतको गोसाईंथान कहतेहैं । सरोवरके बीचमेंसे कुछेक नीला और अंडेके आकारका एक पहाड़ी टुकड़ा उठा हुआहै । यह जलको भेदकर नहीं उठाहै, वरन जलसे एक फुट नीचाहै । स्वच्छ जल होनेसे स्पष्ट दिखाई देताहै इसकोही लोग नीलकण्ठ महादेवकी प्रतिमा बनाकर पूजतेहैं । आषाढ, श्रावण और भादोंमें यहां असंख्य यात्रीगण आयकर स्नान और नीलकण्ठकी पूजा करतेहैं । यह मार्ग जैसा दुर्गमहै वैसाही भयंकरहै । इस कुण्डके उत्तर किनारेपर एक ऊंचा पर्वतहै । इस पर्वतके तीन शिखरमेंसे तीन झरने निकलेहैं । इन तीनोंकी जलधारा तीस फुट नीचे गिरकर एक दूसरे सरोवरमें इकट्ठी होतीहै । इस त्रिधाराका नाम त्रिशूलधाराहै । सुनतेहैं कि, समुद्र मथनेके समय विषपान करनेके पीछे महादेवजी विषकी ज्वाला और प्यासके मारे घबराकर हिमालयके इस बरफीले स्थानमें जलकी खोज करने आयेथे । यहां जल न पाकर पर्वतमें एक त्रिशूल मारा उससे तीन सोते निकले । पीछे महादेवजीने नीचे लेटकर इस त्रिधाराको पान किया तबसे इस शयन स्थान गोसाईंकुण्ड वा नीलकण्ठ सरोवरकी उत्पत्ति हुई ।

सरोवरका अंडाकार शिलाखण्डही उन शयित महादेवकी प्रतिमा गिनीजातीहै । तीर्थयात्रीलोग कहतेहैं कि, सरोवरके तटपर खडे होकर देखनेसे ऐसा ज्ञात होताहै कि, मानो भगवान् नीलकण्ठ सर्पशय्यापर सरोवरमें सोयेहुएहैं । मि० ओल्डफील्डका अनुमानहै कि, यह पत्थरका समान शिलाखण्ड पूर्वकालमें किसी बर्फकी शिलाके साथ सरोवरमें इसही भांतिसे गिरकर स्तंभित होगयाहै । इस तीर्थस्थानमें एक छोटे पत्थरका बेल व डेढ फुट ऊंचे सर्पके सिवाय दूसरी कोई प्रतिमा नहींहै । कई स्तंभभीहैं पहले उनमें एक बड़ा घंटा लटकताथा, किन्तु अब वह घंटा टूटगया । सम्पूर्ण गोसाईंथान पर्वतपर और कहींभी शिवमूर्तिका चिन्ह नहीं पायाजाता । इस सरोवरके आगमनमार्गमें चन्दनवाड़ी गांवके निकट एक फुट ऊंचा एक शिलाखंड गणेशप्रतिमाके नामसे पूजाजाताहै । इसको “ लोहीगणेश ” कहते हैं । इस गोसाईंकुण्डसे उत्पन्न होनेके कारण गण्डककी प

उपनदीका नाम त्रिशूलगंगा है। सूर्यकुण्ड नामक सरोवरके उत्तरांशसे त्रिशूलगंगाकी एक दूसरी उपनदी बेत्रवती उत्पन्नहुईहै। इस सूर्यकुण्डसेही टाडी या सूर्य्यवती नदी भी निकली है। देवघाट नामक स्थानमें सूर्य्यवती त्रिशूलगंगामें मिलगई है। यह देवीघाट नयाकोट (नवकोट) नामक एक उपत्यकामें है। जो तीर्थस्थान मानाजाताहै। इस स्थानकी अधिष्ठात्री देवी भैरवीका मंदिर नवकोट शहरमेंहै, प्रत्येकवर्ष बरफ गलजानेपर जब यात्रीलोग यहां आतेहैं, तब दोनों नदीके संगमस्थानमें लम्बे २ तख्ते और बडे २ पत्थरोंसे एक मंदिर तैयार करके उसके भीतर इन देवीकी पूजा करातेहैं। सुनते हैं कि, देवीकी प्रतिमा पहिले इसही स्थानमें थी, फिर स्वप्नाज्ञासे दूसरी जगह स्थापित करदीगई। टाडी या त्रिशूलगङ्गाका वेग स्वभावसेही अधिकहै तिसपर बरसातमें इतनी बढ़ताहै कि, दोनों किनारे टूटजातेहैं, इसकारणही देवीने स्वप्नमें आज्ञा देकर अपनी मूर्ति दूसरी भूमिपर उठवाली। उपरांकित छब्बीस राज्योंका वर्णन कियागयाहै, वह घाघराके खादरमें गिनेजाकर बाईसराज्यके स्वामी जुमला राज्यके अधीन थे; उनके नाम यहहैं-टानाहु, गोलकोट, मालीभूम, शतहं, गढहुं, पोखरा, भडकोट, रेसिं, घेरि, धोयार, पाल्पा, वेतूल, तानसेन, गुलमी, पश्चिमनवकोट, खचिवा, खचि, इसम्बा, घरकोट, मुषीकोट, (पश्चिम, थिली, सलियाना, बोपा, पैठोन, लद्दहुन, दं, कछि, लमजुङ्ग और प्रखन। अब यह सम्पूर्णही गोरखाराज्यमें मिलगयेहैं। गोरखालोगोंने गण्डककी सारी खादरकी मालीभूम, खची, पाल्पा और गोर्खा इन चार भागोंमें बांटलीहै। मालीभूम स्थान ठीक धवलागिरिके नीचे मरिगर नदीतक फैलाहुआ है। इसकी राजधानी विनीशहर नारायणीनदीके किनारेपर बसाहै। खची स्थान मालभूमके दक्षिणपूर्वमें स्थितहै। पाल्पा स्थान अधिक बड़ा न होनेपरभी सबसे अधिक प्रयोजनीय विभागहै जो गोरखपुरकी सीमाके अन्तमें है। इसके उत्तरमें नारायणी नदीहै। इसके नीचे गोरखपुरके ठीक उत्तरमें "बेतूल खास" नामक तराई स्थानहै। यह तराई अयोध्याके अन्तर्गत तुलसीपुरसे गण्डक नदीके पश्चिममें पाली शहरतक फैली हुई है। शालवनमें पर्वतकी निचाई और दक्षिणांशहै। पश्चिम नवकोट विभाग गण्डकनदीके पश्चिममें स्थित है। यह पापला प्रदेशकाही एक अंश है। वर्त्तमान गोर्खालोगोंके प्राचीन पुरुष राजपूत लोग ईस्वीकी बारहवीं शताब्दीमें मुसलमानोंसे हारकर पहिले इसी स्थानमें आकर बसेथे। पीछे श्वेत गण्डकीके तटपर लमजुं स्थानमें उठगये। पापला नगरही प्रधान शहरहै बेतूल और गुलमी ये दो शहर भी प्रसिद्ध हैं। पापला नगरसे २॥ कोस पूर्वकी ओर तानसेन शहर बसा हुआहै। यहां पापलाकी सेना रहती है। इस स्थानमें एक दरबार, बाजार और टकसालहै। इस टकसालमें पैसे बनते हैं। पापलामें गुरांग जातिके लोग कपासके कपड़े बनाकर उनका व्यापार करते हैं।

गोर्खा राज्य गण्डककी खादरके पूर्वोक्त अंशमें त्रिशूलगङ्गा और मरस्यांगदी नादयाक बीचमें स्थित है। राजधानी गोर्खानगर 'हनुमान वनजङ्ग' पर्वतके ऊपर धरमदीनदीके

किनारे काठमाण्डू नगरसे नवकोटके मार्ग होकर १३ कोस दूर है। गोर्खाप्रदेशके पश्चिम दक्षिणांशमें पोखरा उपत्यका है। इस उपत्यकाका प्रधान नगर पोखरा, श्वेत गण्डकी नदीके किनारे बसा हुआहै। यह शहर बड़ा है। मनुष्यसंख्याभी अधिक है। यहां तांबेकी वस्तुओंका व्यापार प्रसिद्ध है। प्रतिवर्ष एक मेला होताहै उसमें पोखरेका उत्पन्न हुआ सब अन्न और तांबेके वर्तन बिकते हैं। नैपाल पहाड़ोंसे पोखरा पहाड़ी बहुत बड़ी है। इस जगह बहुतसे कुंड हैं। सबसे बड़ा कुंड इतना बड़ा है कि, परिक्रमा करनेमें दो दिन लगतेहैं। यह सब सरोवरही प्रायः बहुत गहरेहैं इनके किनारेसे तली कोई १५०। २०० फुट नीचे है, इसकारण खेतीका इनसे विशेष उपकार नहीं होता। पाल्पा और बेतूल स्थानके बीचमें गण्डकके पश्चिम किनारेपर गोड़ ताळीमढी नामक पहाड़ी और गण्डकके पूर्वमें चितवन (वा) चैतनमढी नामक पहाड़ी तथा इसके उत्तरमें माखनमढी नामक पहाड़ियें विशेष प्रसिद्धहैं। चितवन पहाड़ीमें रावती नदी बहतीहै जो भीमफेडी नामक स्थानके कुछ पूर्वमें शेषपाणि पर्वतसे निकलकर सोमेश्वर पर्वतके उत्तर गण्डकमें मिलगई है। इस नदीके ऊपर ही हेटवाड़ा शहरहै। चितवन पहाड़ीमें बड़े २ वृक्षोंके वनकी जगह बड़ी घासका जंगलही अधिक है। इन जंगलोंमें गैंडार अधिक होते हैं। पश्चिम और मध्य पहाड़ोंके प्रधान शहरोंमें होकर एक बड़ा मार्ग है। जो काठ-माण्डूसे नवकोट, गोर्खा, टानाहुं (उत्तरमें एक शाखाद्वारा लर्मजु) पोखरा,शतहुं, तानसेन, पाल्पा (दक्षिणमें एक शाखाद्वारा बेतूल) गुल्मि, पेन्ताना और साळियाना होकर दोति (दीपैत) तक गया है। दोतिसे बगरकोट और जुमलातक एक शाखाहै।

३–पूर्व उपत्यका (वा) कोशी अववाहिका प्रदेश। यह खादर साधारणतः "सप्त-कौशिकी" नामसे विख्यातहै। मिलची व इन्द्राणी, मुटियाकोशी, ताम्बा (ताम्र) कोशी, लिखु, दूधकोशी, और तामोर (वा) ताम्बर नामसे सात उपनदियोंको मिला-कर कोशी वा कौशिकी नदीकी उत्पत्तिहै। यह सात नदियें तुषार क्षेत्रसे निकलकर समान अन्तरसे बहती हुई वर्षक्षेत्र या वड़क्षेत्र नामक स्थानमें सब मिलगई हैं, फिर कोशी या कौशिकी नामसे बहकर पुरनियामें राजमहल पर्वतके पास गङ्गामें मिलीहैं, मिलची वा इन्द्राणी नदी मुटिया कोशीके साथ मिलगई है। ताम्बाकोशी, लिखु, और दूधकोशी यह तीन संकोशी (स्वर्णकोशी) नदीमें मिलगई हैं। पीछे यह दो युक्तनदी और अरुण तथा ताम्बोर बड़छत्रघाटमें आकर मिली हैं। अरुणनदीसे को-शीकी खादर दो भागोंमें बटी है। अरुणके दक्षिणकिनारेपर दूधकोशीतक फैलाहुआ जो भूखण्डहै वह किरातदेशके नामसे विख्यातहै, और वामतटके भूखण्डको लिम्बुआना कहतेहैं। यह दो स्थान फिर छोटे २ सूबोंमें विभक्तहैं। प्रत्येक सूबेमें चार पांच गांव हैं। लिम्बुआना पहिले सिकिमराजके अधिकारमेंथा पीछे राजा पृथ्वीनारायणने सदाके लिये नैपालमें मिलालिया। यहां बीजापुरमढी उपत्यकामें बीजापुर शहर एक प्रसिद्ध स्थान है।

कोशी खादरके दक्षिण में जो तराई है उसकोही खासकर नेपालकी तराई कहतेहैं। यह दो भागोंमें विभक्त है, जंगल तराई और यथार्थ तराई।

नेपालकी तराई।

नेपाल तराई पश्चिममें औरकानदीसे, पूर्वमें मीचीनदीतक फैली हुईहै, लम्बाई करीब ११० कोसकी है। इसके उत्तरमें चेरियाघाटी पहाड़ियें और दक्षिणमें पुरैनिया जिलाहै, तिरहुत, चम्पारन आदि जिलोंकी सीमाके अन्तमे दोनों राज्यकी सीमाको बतानेवाली स्तम्भावलीहै। यहां कोशीनदी नेपालकी तराई छोड़कर अंग्रेजी राज्यमें घुसीहै, यहां नेपाल तराईका विस्तार केवल ६ कोसकाही है, दूसरी जगह कोई १० कोस होगा। दस कोसकी विस्तारवाली यह भूमि लम्बाईमें दो भाग हुईहै। उत्तरांशमें अर्थात् चेरियाघाटी पर्वतमालाके दक्षिणमें गण्डकीके किनारेसे कोसीके किनारेतक के स्थानको भावर वा शालवन कहतेहैं। बिशौलिया नामक स्थानके पश्चिमसे शालवनका फैलाव क्रमशः कम होतागया है। इस वनमें बस्ती नहींहै केवल नदीके किनारे जहां खेतहैं वहां कुछ टूटी फूटी झोपड़ियें देखी जाती हैं। शालवनमें शाल, देवदारु आदि बड़े २ वृक्ष उपजते हैं। चेरियाघाटी पहाड़ियोंके ऊपर यह वृक्ष बहुत बड़े २ होतेहैं। गण्डक वा मीची-नदीके बीचमें वाघमती वा विष्णुमती, कमला, कोसी और कोनकाई नदियेंही प्रधानहैं। कोसीको छोड़कर शेष सब नदियें ही ग्रीष्मकालमें तराईको छोड़कर पार होजाती हैं। कितनीही नदियें गर्म्मीमें सूख जाती हैं, किन्तु कभी २ वनके पार होकर भी फिर जलको बहते हुए भी देखा जाता है। तथापि बरसातमें यह नदियें एक होकर बड़े वेगसे बहती हैं।

नेपाल तराईके दक्षिणांशमें अर्थात् शालवनके दहिनीओर यथार्थ तराई है। औरेकासे कमला नदीतक इस तराईका फैलाव अधिक है और कमलासे कोसीतक कम होता गयाहै। कोसीके पूर्वमें मीचीतकके तराई प्रदेशको मोरङ्गदेश कहते हैं, उसका विस्तार २॥ कोससे अधिक कहीं नहीं है। इस समस्त तराई प्रदेशमें नेपालराजका अधिकार नहीं है। यहांका शासन कर्त्ता खत्तावङ्गनामक स्थानमें रहताहै। वह बिसौलियासे कई कोस पूर्वमें है। उस स्थानपर दो दल सेनाभी सदा तैय्यार रहती है। जो ठीक तराई है वह बढ़ा, परसा, रोचत, शलपसतारि और मोहतारि इन चार जिलोंमें विभक्त है। गण्डकके पासवाले पहिले जिलेमें होकरही काठमाण्डूको मार्ग गयाहै। बिशौलियाके पास परसानामक स्थानके बीचमें सन्१८१५ई० में कप्तान सिलवी हारेथे वहां उनकी दो तोपें शत्रुओंके हाथ लगीं। रोचत जिला पारसाकी सीमातक वाग्मतीतक फैला हुआहै। यामिनी नदीके किनारे रोचतजिलेकी सीमामें वाग्मतीसे ७॥ कोस पश्चिमको सिमरौन नगरका खंडहर दिखाई देताहै। वहांपर गंभीर वनहै। उस टूटे फूटे स्थानमें पुराने मिथिला राज्यकी राजधानी थी। उसकालमें मिथिलाराज्य पूर्व पश्चिमसे गण्डक और उत्तर दक्षिणमें नेपालकी पर्वतमालासे गङ्गाके किनारेतक बसाहुआ था। सन् १०९७ई०

में मिथिलाके राजा नान्यपदेवने सिमरौन नगरको बसाया सन १३२२ ईसवीमें दिल्लीके बादशाह गयासुद्दीन तुगलकने नान्यपवंशीय हरिसिंहदेवको जीतकर सिमरौन नगरको उजाड़ दिया। हरिसिंहदेव नैपालमें भागा और नैपालको जीतकर गद्दीपर बैठा बागमतीके किनारे बाहरवार गांव है जिसका जलवायु, अतिउत्तमहै। सन १८१४ ईसवीको नैपालकी पहिली लड़ाईमें मेजर ब्राडरसने इसस्थानको ही घेर कर जातीथा।

शलय सत्तारी जिला बागमतीसे कमलानदीतक बसा हुआहै। इस जिलेकी सीमाके अन्तमें पुराने नगर जनकपुरका खंडहर दिखाई देताहै। मोहतारी जिला कमलासे कोसीनदी तक फैलाहुआहै। कोसीके दक्षिण किनारे सीमाके पास भानुरवा नामक स्थानमें सेना रहतीहै, कोसीके पूरब मीची नदीतक तराईका नाम मोरङ्गहै। जिसकी भूमि इकसारहै, परन्तु कीचड़ जल वायु और रोगोंसे भरी हुई है। तराई-भरमें यह स्थान सबसे अधिक स्वास्थ्यका बिगाड़नेवालाहै, नदियोंका जल भी बहुत दूषित है, तथा सबही वस्तु विषैली हैं। मोरङ्गको छोड़कर तराईकी दूसरी भूमि साफ सुथरी और बहुत अन्न उत्पन्न करनेवाली है, ईख, अफीम और तमाखूभी इसमें भलीभांतिसे होसकता है। कोसीके पिछले जंगलोंमें हाथियोंकी संख्या दिन २ कमती होती जातीहै! मोरङ्गमें अब बहुत हाथी पायेजातेहैं, किन्तु पहिलेसे वहां भी कम होगये हैं।

नैपाल उपत्यका।

गोसाई थान पर्वतके अन्तर्गत धैवङ्ग पर्वतके ठीक दक्षिणमें सप्तगण्डकी और सप्तकोशिकीके बीच जो ऊंची उपत्यका है, उसहीका नाम नैपाल उपत्यकाहै। यह उपत्यका त्रिकोणाकार है, लम्बाई पूर्व पश्चिममें १० कोस और उत्तर दक्षिणमें चौड़ाव ७॥ कोस है। पश्चिममें त्रिशूल गङ्गानदी है, पूर्वमें मिलाचिपा इन्द्राणी नदी है। उपत्यकाके चारों ओर पर्वत हैं, उनमें उत्तरमें धैवङ्ग पर्वत मालामें शिवपुरी, काकनि पूर्वमें महादेवपोखरा शिखर, देवचौक (देवचोया), पश्चिममें नागार्जुन पर्वत और दक्षिणमें शेषपाणि पर्वत मालामें चन्द्रागिरि, चम्पादेवी और फूलचौका (फूलचोया) आदि पर्वत शिखरही ठीक सीमारूपसे स्थित हैं। नैपाल उपत्यका समुद्रसे ४५०० फुट ऊंचे पर है। चारों ओर छोटे २ पर्वत शिखर होनेके कारण चारों ओर और भी छोटी २ कई दरी हैं। यद्यपि उनमें स्वभावसेही अन्तर पड़ा हुआ है, तथापि वे नैपाल उपत्यकामें गिनीजाती हैं। किनारेकी इन समस्त उपत्यकाओंमेंसे दक्षिण पश्चिममें चित्तलिंग उपत्यका (बाघ-मतीकी उपनदी पानौतीसे धुलनेवाली) है। पश्चिममें धूना और कालपु उपत्यका (त्रिशूलगंगाकी धूना और कालपु उपनदियोंके किनारे) उत्तरमें नवकोट उपत्यका (उसके निकट टोढ़ी लिखू और सिन्दूरा नामक त्रिगंगा इत्यादि नदियोंकी छोटी २ समस्त उपत्यका और पूर्वमें बनेपा उपत्यका) स्वर्ण कोसीकी उपनदीसे धुलती हुई यह कई एक लिखने योग्यहैं। इन सम्पूर्ण उपत्यकाओंमें प्रवेश करनेके लिये पहाडी मार्ग हैं।

नेपालकी पर्वतमाला ।

नेपाल उपत्यकाके चारों ओरकी पर्वतमाला विशेष प्रसिद्ध है । इनके शिखर परस्पर मिले हुए हैं, इस कारण पहाड़ी मार्ग और नदीकी धारके अतिरिक्त दूसरी किसी ओरसे इन उपत्यकाओंमें प्रवेश नहीं किया जासकता ।

उत्तरका शिवपुरी पर्वत ८ हजार फुट ऊंचाहै । उसके शिखर शाल और सिन्दुर वृक्षों-से घिरे हुए हैं, तथा दूसरे पर्वतोंसे यह बड़ा भी है । पश्चिमके काकनि पर्वतके साथ शिव-पुरी पर्वतका मेल है । दोनोंके बीचमें "सङ्खला" नामक पहाड़ी मार्ग है । काकनि पर्वत ७ हजार फुट ऊंचा है ।

पूर्वोत्तरवाले मणिचूर पर्वतके संगभी शिवपुरी पर्वतका मेलहै, किन्तु कोई पहाड़ी मार्ग नहीं है पहाड स्वयंही घूमगयाहै मणिचूर पर्वत ७ हजार फुट ऊंचाहै ।

उपत्यकाके ठीक पूर्वमें महादेव पोखरा शिखरहै जो सात हजार फुट ऊंचाहै । इसके संग पूर्वोत्तर कोणवाले मणिचूर पर्वतका मेलहै । दोनों शिखरके बीचमें कुछ ऊंची पर्वत-माला फैली हुईहै ।

दक्षिणपूर्वमें फूलचोपा या फूलचौक पर्वतहै, जहांपर गंभीर जंगलहै । और लम्बाईमें बहुत दूरतक चलागयाहै । इसकी ऊंचाई आठ हजार फुटहै । महादेव पोखरा शिखरकी ओर इसमेंसे रानीचोपा नामका एक शिखर बाहर निकलता हुआहै । इन दो पर्वतोंमें होकर बनेपा उपत्यकामें जानेका पहाड़ी मार्गहै । पश्चिमकी ओरसे महाभारत शिखरनामक एक पर्वत वाघमतीके किनारेतक चलागयाहै । फूलचोपा पर्वतके बहुत ऊंचे शिखरपर सिन्दूर वनके बीच देवी भैरवी और महाकालका मन्दिर है । इन दो हिन्दू मन्दिरोंके पासही बौद्धोंके मंजुश्रीका मन्दिरभी है । इस पर्वतसे नेपाल उपत्यकाका समतल क्षेत्र और हिमालयके तुषारसे घिरेहुए शिखर मनोहर दिखाई देतेहैं ।

उपत्यकाके ठीक दक्षिणमें पूर्वोक्त महाभारत शिखरहै उसकीही पश्चिम सीमासे होकर वाघमती नदी नेपाल उपत्यकासे बाहर निकलीहै । चारोंओरके पर्वत घेरेमें इस नदके सिवाय और कहींभी विभिन्नता नहीं है ।

दक्षिण पश्चिममें चन्द्रगिरि पर्वत छःहजार छः सौ फुट ऊंचाहै । इसके पूर्वांशको हाथीवन कहतेहैं । यहां वाघमती बहतीहै । चन्द्रगिरिके दक्षिण पूर्ववाले शिखरका नाम चम्पा देवीहै ।

उपत्यकाके ठीक पश्चिममें महाभारत पर्वतके पूर्व इन्द्रस्थान शिखरहै, यह ठीक पर्वत शिखर नहींहै । इसका एकभाग कुछ झुका हुआहै । नैपाल उपत्यकासे १०००।१५०० फुट ऊंचाहै । यथार्थमें यह इसके पश्चिमी देवचोपा या देवचौक पर्वतका अंशहै । इन्द्रस्थान गहरे वनसे ढका हुआहै । दक्षिणभागमें ऊंचे स्थानपर कुछ 'गहरी एक सरोवरहै' उसके किनारेपर दो मंदिरहैं जहां हाथीकी पीठपर इन्द्र और इन्द्राणीकी

प्रतिमा विराजमानहै । इन्द्रस्थान पर्वतके ऊपर केशपुर और चन्दक नामक दो शहरहैं । इसका पूर्वांश थानकोटके नीचे, और एक उपत्यका चन्द्रगिरिकी तलेटीमें है । यह देवचोपा पर्वत नागार्जुन, महाभारत और फूलचोपा पर्वतके संग मिला हुआहै ।

यह पर्वत नैपाल उपत्यकाकी ठीक सीमाके अन्तमें है । इनके अतिरिक्त उत्तर पूर्व कोणमें भीरवन्दी और कुमारपर्वत नामके दो शिखरहैं, भीरवन्दी पर्वत नैपाल उपत्यकाके सब पर्वतोंसे ऊंचाहै । सबसे ऊंचे शिखरको कौलिया कहतेहैं । जो उपत्यका भूमिसेभी चार हजार फुट ऊंचाहै । उसके संग पूर्वकी ओर काकनि पर्वतका मेलहै । दोनोंके बीचमें जो पहाडी मार्गहै वह छः हजार फुट ऊंचेपरहै । इन दोनों पर्वतोंके उत्तरमें नवकोट उपत्यका और पश्चिममें कालपू नदीकी उपत्यकाहै ।

कुमार, भीरवन्दी, काकनि, शिवपुरी, मणिचूड और महादेवपोखरा यह छः पर्वत त्रिशूल गंगासे इन्द्राणीके किनारे तक लम्बे और जितजिविया (गोसाईं थानके दक्षिणकी) पर्वतमालाके साथ समान अन्तरसे खडेहैं । चन्द्रगिरि, फूलचोया, मणिचूड, शिवपुरी, नागार्जुन पर्वतका उत्तरांश यह सबही गहरे वनसे ढके हुए, और चीते, बाघ, भालू तथा बनैले शूकरोंके रहनेको मानों घरहीहैं ।

नैपाल उपत्यकाकी पहिली दशा ।

हिन्दुओंके सिद्धान्तसे यह उपत्यका बहुतकाल पहिले एक डिम्बाकार बडे गहरे सरोवरके रूपमें थी । यह सम्पूर्ण पर्वत उस सरोवरके किनारेसेही उठेथे ।

बौद्धलोग कहतेहैं कि, मंजुश्री बोधिसत्वने ही उस बडे सरोवरका जल निकालकर उसकी सुन्दर रहने योग्य उपत्यकाको बनायाथा उसने अपने खड्गसे कोटवार नामक एक पहाडका शिखर काटा, और उसमार्गसे सब जल बाहर निकालदिया । फूलचोया और चम्पादेवी पर्वतके बीच जो खाई छोडकर बाघमती बहतीहै, सुनतेहैं कि, वह खाई मंजुश्रीने ऐसीही बनाई थी । मंजुश्रीका उपाख्यान छोडदेने पर भी यह उपत्यका एक समय जलमयथी, और प्राकृतिक परिवर्तनसे बहुतकाल पीछे उपत्यका बनगई' यह बात देखनेवाले सहजमेंही समझ सकतेहैं । यह उपत्यका डिम्बाकारहै ।

उपत्यकाकी नदी ।

बाघमती।–शिवपुरी पर्वतके ऊपर उत्तरकी ओर बाघद्वार नामक स्थानमें एक झरनेसे निकलकर शिवपुरी और मणिचूण्डके बीचमें होती हुई घूम फिरकर शिवपुरी पर्वतके ऊपर गोकर्ण नामक तीर्थस्थानके पास शिपालनदी वा शिवानदीके संग मिलगईहै । वहांसे दक्षिणकी ओर प्राचीन बौद्धक्षेत्र केशचैत्यके निकट पहुंचीहै । फिर गंगेश्वरी खाईके बीचसे होती हुई पशुपतिनाथ क्षेत्रको प्रायः तीनों ओरसे घेरकर दक्षिणाभिमुख राजधानी काटमाण्डूके पास आ निकली है । काठमाण्डू इसके दहिने किनारे और पाटन नगर बायें किनारेपर है । पीछे दक्षिणकी ओर एक खाईमें बहती हुई चम्बर

नामक पुराने नगरके पाससे होकर चन्द्रगिरि पर्वतकी तलैटीमें फैलगईहै, वहांसे चम्पा देवी और महाभारत शिखरके बीचमें घूमतीहुई फिर फिङ्गापर्वके नीचे खाई देकर नैपाल उपत्यकाको छोड़ गई है । यहांके बौद्धलोग कहतेहैं कि गोकर्णके पासकी खाई मजेश्वरी खाई, चन्दरके पासकी खाई और फिर फिङ्गपर्वतके नीचेकी खाई मंजुश्री बोधिसत्वकी तलवारकी चोटसे हुई हैं । शिवमार्गी नेवार और दूसरे हिन्दूलोग इसकी उत्पत्ति विष्णुजीसे कहतेहैं विष्णुमती, धोबीकोला या रुद्रमती, मनोहरा और हनुमानमती यह चार वाघमतीकी प्रधान उपनदीहैं । विष्णुमतीका दूसरानाम कृष्णवतीहै, यह शिवपुरी पर्वतके दक्षिणांशमें बड़े नीलकण्ठ सरोवरसे उत्पन्न होकर विष्णुनाथ नामक गांवके पास पर्वतको छोड़ उपत्यकामें घुसीहै । यहांसे दक्षिणकी ओर नागार्जुन पर्वतकी जड़में घूमकर थाङ्काथी और स्वयंभूनाथ तीर्थोंको बाईं ओर छोड़ती हुई काठमाण्डू नगरके पश्चिमांशमें पहुंचतीहै । पीछे नगरके कुछ नीचे दक्षिणमें वाघमतीके साथ मिलीहै । दोनों नदियोंके सङ्गमपर बहुतसे मन्दिर बनेहैं और एक बड़ा घाटभीहै । यहां शवदाह करनेसे मृतकको पुण्यकी प्राप्ति होतीहै, इस कारण सबलोग वहांही शवदाह करतेहैं । वाघमती और विष्णुमतीके उत्पत्ति विषयमें एक उपाख्यान प्रसिद्धहै । बौद्धलोग कहतेहैं कि, ककुच्छन्द नामक चौथे बुद्ध जब तीर्थदर्शनके लिये नेपालमें आकर शिवपुरीपर्वतपर पहुंचे, तब उनके कई अनुचरोंने इस स्थानकी शोभा देखकर बौद्ध होना स्वीकार किया और यहां बहुतकाल तक रहनेकी इच्छा प्रगटकी उनके अभिषेकके लिये ककुच्छन्दको जल कहीं भी नहीं मिला । तब देवशक्तिकी आराधना करके उन्होंने एक पर्वतमें अँगूठा गाड़ा । वहां देवबलसे एक धार निकलनेलगी । वह धाराही वारिमती वा वाघमतीनामसे विख्यातहै । फिर उस जलमें अभिषेक हुआ । नवीन बौद्धोंके मुण्डनके बाल शिला बनगये । यही वर्तमान बौद्धतीर्थ केशचैत्यहै । इन केशोंका कुछ अंश हवासे उड़कर दूसरी जगह जा पड़ा, वहांसे ऐसीही एक और धारा निकलनेलगी, वही केशवती या विष्णुमती नदी है । सुवर्णमती और बदरीनामक विष्णुमतीकी दो उपनदीभी हैं धोबिकोला या रुद्रमती शिवपुरी पर्वतसे उत्पन्न होकर काठमाण्डूके डेढकोस पूर्वमें वाघमतीसे मिलगई है । इसके किनारेपर हरिगाओं और देवपाटनहै । मनोहरा या मनोमती मणिचूड़ पर्वतसे निकलकर पाटन नगरके सामने वाघमतीमें गिरी है ।

हनुमानमती महादेवपोखरा पर्वतके एक सरोवरसे निकलकर भाटगांव नगरको दहिनी ओर छोड़ कंसावतीनदीको सङ्ग लेती हुई चाङ्ग नारायणके नीचे मनोहरामें आमिली है ।

खेती ।

नैपालकी खेती और उपज मौसमके ऊपर निर्भर है । इस राज्यकी भूमि समतल न होनेसे उलटीही बात दिखाई देती है । नैपालकी पहाड़ी उपत्यकाओंमें मधुरफल और भोजन योग्य शाक सब्जी बहुतायतसे होती है । जल वायुके गुणानुसार किसी २

पहाडीस्थानमें बड़े २ बांस और बेंत देखे जाते हैं, किन्तु अधिक स्थानोंमें केवल सुन्दरी और देवदारके वृक्षही बहुतायतसे पायेजाते हैं। इसके अतिरिक्त कहीं २ पिश्ते अखरोट, तूतफल, रसभरी आदि मीठे फलोंके वृक्षभी पाये जातेहैं। छोटी २ पहाड़ियोंपर जहाँ गर्मी अधिक होतीहै अनार. गन्ना तथा दूसरी भूमिमें जौ गेहूं कंगनी आदि नाज बहुत होते हैं। जाड़ेमें नारंगी होती हैं। पर्वतादिकी ऊंची भूमिके मध्य बर्सातमें अधिक वृष्टि होनेसे कभी २ फलादि होकरभी नष्ट होजाते हैं।

दूसरी ओर इस पानीसे भूमि तर होजानेके कारण गर्मियोंमें धान, मक्का आदिकी खेतीको बहुत लाभ पहुंचताहै यहांकी बहुतसी भूमिमें ऋतुभेदसे वर्षमें तीनवार खेती होती है। जाड़ेमें यहां गेहूं, जौ सरसों आदिकी खेती होतीहै, बसन्तके आरंभमें उसही भूमिको जोतकर मूली, लहसुन और आलू आदि बोये जातेहैं, तथा बरसातके समय उन खेतोंमें धान, मक्का और मिर्चें बोईजाती हैं। पहाड़के ऊपरकी ढालू समतल भूमिमें मटर, चना, गेहूं और जौ आदि उत्पन्न होतेहैं। यहाँ सरसों, मजीठ, गन्ना और इलायची बहुत होती है, यहां अधिक जल चाहिये, ऐसा न होनेसे फसल अच्छी नहीं होती।

सबही नैपाली चावल खाते हैं। अतएव राज्यके सब स्थानोंमें धानकी खेती होतीहै। विशेषकरके नीची और जल सींची हुई भूमिमें ही धान जमते हैं। इसके सिवाय नैपालमें और भी कई प्रकारके चावल होतेहैं, उनको नैपालीलोग "पिया" कहते हैं। पियाके पकनेमें गर्मी या बर्सातकी आवश्यकता नहीं होती। पहाडकी ऊंची और सूखी भूमिमें यह अन्न, जलके विना सहायताके उपजता और पकता है। पहाडके ऊपरकी भूमिको एकसा करनेके लिये हल या और किसी यंत्रकी आवश्यकता नहीं होती। नैपालीलोग अपने हाथसेही भूमिको अन्न बोनेलायक बना लेतेहैं। नैपालके तराई नामक स्थानमें चावल, अफीम, सफेद सरसों, अलसी, तमाकू और ऊखकी अधिक खेती होती है। इस स्थानके चारों ओर छोटे २ सोत बहते हैं इस कारण कभीभी जलका अभाव नहीं होता।

तराईके वन विभागमें शाल, सफेद शाल, पियाशाल, खैर, सीसम, आवनूस, कालिकसेट, मुलता, सोनी और "भजा" (इनके अच्छे २ पहिये और धुरे बनते हैं) रुई, डूमर, गन्द उत्पन्न करनेवाले वृक्ष सब स्थानोंमें ही पायेजाते हैं। पर्वतके ऊपरवाले वनमें सुन्दरी, बिल्वपत्र, मन्दार, पहाड़ीकटैल, कजरू, तालीसपत्र मण्डल सिंगाडी, अखरोट, चम्पा, सिरस, देवदारु और झाऊ आदि वृक्षही प्रधान हैं। इनके सिवाय खाने योग्य खूबानी सफरी और चाह तथा शरीरादिको उजला करनेके लिये अनेक प्रकारके सुगंधवाले पुष्पवृक्षभी देखे जाते हैं।

भूमिसे अनेक प्रकारके धान्य उत्पन्न होने परभी यहांकी मट्टीमें भांति भांतिके कन्द और जड़ी बूटियें जमती हैं। चर्परे स्वादवाले और सुगंधवाले वृक्षोंसे भांति २ के रंग तयार होते हैं। नैपाली लोग उन रंगोंका बड़ा आदर करतेहैं।

'जोषा' वृक्षके पत्तेके रससे चरस बनता है। जिसके व्यवहारसे नशा होजाताहै। यही नैपाली चरसके नामसे विख्यात है। नेवारी लोग उक्त वृक्षके सूखे पत्ते कूटकर एक प्रकारका सूत निकालते हैं और उसको बुनकर एक प्रकारका सूती कपड़ा तयार करते हैं।

भूमितत्व ।

नैपालके पहाड़ी अंशसे जो मूल्यवान पत्थर और मैली धातु पाई गई हैं, उनसे अनुमान होता है कि, नैपालके किसी २ अंशमें छिपी हुई खानें हैं। मट्टीके कुछ नीचेसे तांबा, लोहा आदि पायागयाहै। तांबा उत्तम होनेपर भी लोहा दूसरे स्थानोंसे गिरता हुआ है। गन्धक अधिक पाई जाती है, इसही कारण दूसरे स्थानोंको भेज दी जातीहै। नैपालमें जो अनेक प्रकारके मिले हुए और मैले २ खनिज पदार्थ पाये जाते हैं विशेष छान बीन करनेसे जाना जाता है कि, इन मिश्रित पदार्थोंमें बहुतसी मूल्यवान धातुओंका अंश है। इसकेसिवाय यहां कई प्रकारके पत्थर भी पाये जाते हैं उनमेंसे मार्बेल, सिलेट, चूना और लाल पीले पत्थरही वर्णन योग्य हैं।

गोर्खा स्थानके पास एक प्रकारका साफ़ फ़स्तल (Crystal) पत्थर पाया जाता है, अच्छी तरह काटा जाय तो हीरेकीसी चमक देता है। यहांकी मट्टी ऐसी अच्छी है कि, कुछ काल पीछे वह सिमेंटके समान कठिन होजातीहै।

वाणिज्य ।

नेपाल राज्यके वाणिज्य विषयमें कुछ बात कहनेके पहिले देखना चाहिये कि, किस २ राज्यके साथ नैपालियोंका व्योपार होता है, हिमालय पहाड़के दूसरे पार बसा हुआ तिब्बत राज्य, और दक्षिणमें भारत साम्राज्य, इन दोनोंके साथ उनका बहुत घना सम्बंध देखा जाता है। तिब्बतमें जानेके लिये यद्यपि बहुतसे पहाडी मार्ग हैं, किन्तु सबही बरफसे ढके हुएहैं केवल काठमाण्डू नगरको उत्तर पूर्वमें छोडकर जो मार्ग कोसीनदीकी उपनदीके किनारे सीमाके अन्तमें नीलम या कुटी नामक अड्डेतक गयाहै, वह (१४०००) फुट ऊंचाहै और दूसरा जो मार्ग (९०००) फुट ऊंचा। गण्डक नदीके पूर्वाभिमुखी सोतेमें होकर किरङ्ग ग्रामके पाससे ताडम ग्राम होता हुआ खान-पूनदीके किनारेतक आयाहै, इन दो मार्गोंसेही नेवारी लोग तिब्बतमें आते जातेहैं। व्योपारकी चीजें लेजानेके लिये सवारी आदि नहींहै, केवल बकरेकी पीठपर बोझा लाद कर इन सब मार्गोंमें जातेहैं। घोड़ा या छकडा लेकर ऐसे दुर्गम मार्गमें जानेका उपाय नहीं है तिब्बतसे पसमी साल और एक प्रकारका पसमसे बना हुआ मोटा कपड़ा, नमक सुहागा, कस्तूरी, चौंर, हरिताल, पारा, सुवर्ण रेंज, सुर्म्मा, मजीठ, चरस, अनेक प्रकारकी औषधि और सूखे फलादि नैपालमें और आस पासके अंग्रेजी राज्योंमें लाए जातेहैं। इधर नैपालसे तांबा, पीतल, लोहा, कांसी आदि, विलायती कपड़ा, कोहेके

पदार्थ, भारत वर्षके सूती कपडे, सुगंधितमसाला,तमाखू, सुपारी, पान, अनेक धातु और कीमती पत्थरभी तिब्बतमें भेजेजाते हैं।

नैपाली लोग हिन्दोस्थानसे जो वाणिज्य व्यौपार करतेहैं वह बहुधा नैपालकी सीमा-वाले ७०० मीलके भीतरी बाजारोंसे आताहै। नैपालसे भारतके स्थान २ में जो सौदागरी माल भेजाजाताहै, उसके ऊपर नैपालराज्यने कर लगादियाहै, इसी प्रकार भारतसे नैपालमें जो माल भेजाजाताहै उसपरभी कर लिया जाताहै। करसे मिला हुआ रुपया खजानेमें जमा होताहै। राजाकी आज्ञासे नैपाली लोग जो चीजें अपने शौक और भोग विलासके लिये नैपालमें लातेहैं, उनके ऊपर अधिक कर लगताहै, किन्तु आवश्यकी चीजोंके ऊपर थोड़ा कर भी लिया जाताहै।

इस करके वसूल करनेके लिये प्रत्येक बाजार और भिन्न २ देशमें माल लेजानेके लिये मार्गमें एक जांच–परहै। कभी २ जांच परोंका काम ठेकेपर नीलाम करदियाजाताहै। तमाखू, इलायची, नमक, पैसा, हाथीदांत और चकोर, काष्ठादिकका व्यौपार केवल नैपालकी,सरकारही करतीहै, इस काममें राजकुटुम्बका या राजाका कृपापात्र कोई आदमी नियत किया जाताहै। इनको छोडकर सबचीजोंमें ही दूसरे लोगोंका अधिकारहै, किन्तु सबकोही करदेना पडताहै यह वस्तुके बोझ या संख्याके अनुसार लिया जाताहै।

काठमाण्डूसे जिस मार्गद्वारा नैपाली वस्तु भारतवर्षमें लाई जातीहै वह सिगौलीसे राजधानी काठमाण्डूकी ओर पहिले नैपालकी सीमाके अन्तमें एक सौल गांवमें होता हुआ, हथौडा, भीमफड़ी और थान–कोट नगरमें होकर राजधानीमें पहुँचाहै। पहिले इस मार्गसे चम्पारन जिलेमें होते हुए पाटन आतेथे, किन्तु सिगौलीतक रेलकी सडक होनेसे सौदागरोंको सुभीता होगयाहै। इस सरलताके होनेपर भी यहाँ दुर्गम मार्गमें सौ-दागरी माल लेजानेमें बड़ा कष्ट होताहै। कहीं बैल, कहीं घोडा और कहीं गाड़ी आदिकी सहायतासे तथा स्थान विशेषमें कुलियोंकी सहायतासे ही माल लेजातेहैं। सिगौ-लीसे काठ-माण्डूतक जो मार्ग गयाहै, वह ९२ मीलहै। स्थानीय नदी या सोतादिमें केवल साल और दूसरे काठ तैराकर लाये जातेहैं।

चावल और दूसरा अन्न, घी, टट्टू, घोडा, गाय, भेंडा शिकारके लिये शिकरा मैना आदि पक्षी, शाल आदि लकड़ी, अफीम, कस्तूरी, चिरायता, सुहागा, मजीठ, तारपी-नका तेल, खैर, पाट, चमड़ा, ऊन, सोंठ, इलायची, लालमिरच, हल्दी और चौंरके लिये चामरी गायकी पूंछादिक बहुतसी वस्तु भारतवर्षके प्रधान २ नगरोंमें आती हैं और यहांसे रुई, सूत, देशी और विलायती सूती कपडा, ऊनीकपडा, शाल, तौलिया, फलालेन, रेशम, कीमखाब, जरी, चीनी-मिरच मसाला, नील, तमाखू, सुपारी, सिंदूर, तेल, लाख, नमक, चावल, मैदा, बकरा, भेंड, तांबा, तांबेकी चादर, पीतलके गहने, माला, आरसी, शिकारके लिये बन्दूक, बारूद और दार्जिलिङ्ग तथा कुमायूंसे "चाह" इत्यादि वस्तु नैपालमें भेजीजाती हैं। जैसा मार्ग चम्पारनमें होकर पाटन जानेको

है। वैसेही दरभंगा, मिरजापुर, पुरनिया और मीरगंज शहरोंमें नेपालसे सौदागरी माल लेजानेके लिये भी दो मार्गहैं।

सौदागरी माल।

नेपालकी सब जातियोंमें नेवारी लोग अधिक परिश्रमी हैं। नेवारियोंमें स्त्री पुरुष दोनोंही भलीभांतिसे परिश्रम करसकते हैं। नेवारी स्त्रियां और पहाड़ी मगर जातिके पुरुष, कपासका कपड़ा बनानेमें बड़े चतुर हैं। अपने पहरनेके लिये एकप्रकारका मोटा कपड़ा बुनते हैं। और दूसरे देशोंमें चालान करनेके लिये एक और प्रकारका कपड़ा बुनते हैं। साधारण लोग अपना शरीर ढकनेके लिये एक प्रकारके पसमका बनाहुवा कम्बल व्यवहार करतेहैं, इन कम्बलोंको भोटिये लोग बनाते हैं। नेपालके राजपुरुष और धनी लोग जो कपड़ा पहनते हैं वह चीन और विलायती आदि देशोंसे आताहै। अपने देशके बनेहुए मोटे कपड़ेपर उनकी विशेष रुचि नहीं देखी जाती।

नेवारी लोग लोहा, तांबा, पीतल और कांसीकी बहुत चीजें बनाते हैं। पाटन और भाट-गांव नगरमें इन धातुओंका विशेष कारोबार है। यहां अच्छे २ घंटे भी बनते हैं।

बहुत जगहपर बढ़ईका काम भी हो सकता है। लकड़ी आदि काटनेके लिये यह लोग आरीको काममें नहीं लाते, बांस और दरांतसेही यह काम पूरा करते हैं। एक प्रकारके वृक्षकी छालसे कागज तइयार होताहै। इस वृक्षका नाम बेकूवा (महादेवका फूल) (Daphue) है। पहिले वृक्षकी छालको किसी बर्तनमें रखकर गरम जलसे उबालते हैं। पकजानेपर उसको खरलमें डालकर कूटते हैं। जबतक यह काथ मैदाके समान नहीं होता, तबतक कूटतेही रहतेहैं, फिर पानीमें घोलकर छानते हैं। छानस फेंककर जलको सुखाते हैं, फिर उसको एक काठके ऊपर डालकर सुखालेते हैं, फिर घोटकर चिकना करतेहैं। काली नदीके किनारेवाले भोटिये लोग भी ऐसा कागज तैयार करतेहैं। काठमाण्डूमें तीन सेर कागज सत्तरह आनेको बिकताहै। बांधनेके लिये यह कागज अच्छे होते हैं, क्योंकि बहुत मजबूत बनाये जाते हैं।

नेपाली लोग चावल और दूसरे अन्नसे सुरासार और गेहूं, महुआ तथा चावलसे शराब तयारकरके बेचते हैं। वह इस सुराको, रुकसी कहते हैं। यह मीठी होती है, और दूसरी सुराओंके समान नशा करनेकी शक्ति रखतीहै।

वर्त्तमान मुद्रा।

वर्त्तमान समयमें जो मुद्रा नैपालके बीच चलतीहै और समय २ पर जो सुवर्ण चांदी और तांबेकी मुद्रा चलनी थी उन मुद्राओंके भारतवर्षमें कितने दाम हैं, सो नीचे लिखे जाते हैं;–

पहिलां सिका । (सुवर्णका)	दाम ।
अशरफी	२०) रुपये
पाटले	८।−)। आने ।
सूका	४≈) ८ पाई ।
सूकी	२−) ४ पाई ।
आना	१) ८ पाई ।
दाम	।) २ पाई ।

चांदीका सिका ।

रूपी	॥) ४ पाई ।
मोहर	६) ८ पाई ।
सूका	≈) ४ पाई ।
सूकी	−) ८ पाई ।
आना	६ पाई ।
दाम	३ पाई ।

ताँबेका सिका ।

पैसा	२ पाई ।
दाम	आधी पाई ।

नैपाल में जो सिका अब चलता है उसका नाम मोहर है अंग्रेजी राज्यमें उसका दाम । =) आठ पाई है । किन्तु ऐसा सिका अब विशेष नहीं चलता, केवल गणितके लिये आवश्यकता होती है ।

आजकल नैपालमें जिसप्रकारका सिका व्यवहार होताहै वह इस प्रकार विभक्त है ।

४ दामका	१ पयसा ।
४ पयसोंका	१ आना ।
१६ आनोंका	१ मोहरी रूपी

इसके सिवाय नैपालमें और भी तीन प्रकारका तांबेका सिका चलताहै । अंग्रेजोंके बहराषच नगरसे चम्पारनतकके स्थानोंमें जो ताम्बेकी मुद्रा देखी जातीहै, उसको हमारे देशमें ढिपले या मनसूरी पयसा कहतेहैं, किन्तु सर्व—साधारणमें वह भोटिया वा गोरखपुरी पयसेके नामसे विख्यातहै । ऐसे ७५ पयसोंका मूल्य हमारे यहांके एक रुपये के समान है, किन्तु नैपालियोंको इस पयसेका ऐसा अभ्यास है कि वह ऐसे आठ पयसोंके बदलेमें अंग्रेजी राज्यके नौपयसोंसे कम नहीं लेते । यह पैसे पयसे पाल्पा जिलेके अन्तर्गत तानसेन गांवकी टकसालमें बनाये जाते हैं ।

इस राज्यके पूर्व और उत्तर पूर्वांशमें एक प्रकारका काला सिका चलताहै, जो लोहियापयसेके नामसे विख्यातहै, इसमें लोहा मिलाहुआ होनेसे दाम कमहै । ऐसे १०७

पयसे और हमारे यहां का एक रुपया बराबरहै। मोहिया पयसा बनानेकेलिये पूर्वकी ओर पहाड़ियोंमें बहुतसी टकसालेंहैं, उनमेंसे सिका-भिकुछा ग्रामकी टकसाल विख्यात है। अब भी चम्पारन और पुरनियामें होकर यह पयसे उत्तर बिहारमें आतेहैं। सन् १८६५ ईसवीसे काठमाण्डूमें जो नई पातला नामक ताम्रमुद्रा चली सो गोलाकारहै। मशीनकी सहायतासे बनतीहै और उसके ऊपर राजाका नाम भी छपारहताहै। इस नये सिक्केके चलनेसे राजधानीमें मोहिया सिक्केका चलन बन्दहोगया। इसके बनानेको काठ-माण्डू नगरमें एक टकसालहै।

पहिले नेपालराज्यमें जितने चांदीके सिक्के चलतेथे वह वर्त्तमान मुद्रासे बड़े थे। इसराज्यके दक्खनवाले सब स्थानोंमेंही नेपाली मोहरके बदले अंग्रेजी रुपया चलताहै और अंगरेजी नोटकाभी कुछ आदर होनेलगाहै।

आजतक जो चांदीका सिक्का नेपालमें चलताहै, उसकी एक ओर राजा सुरेन्द्र विक्रम-शाह देव और त्रिशूल, तथा दूसरी ओर गोरखनाथ बीचमें श्रीभवानी और तिपात खुदा हुआहै। बेण्डल साहब लिखतेहैं कि नेपालमें जो सातवीं सदीका सिक्का मिलाहै, उससे स्थानीय प्राचीन इतिहासकी अनेक बातें जानीजातीहैं। * किन्तु सोलहवीं सदीके पिछले सिक्कोंसे-ही ऐतिहासिक समय निरूपण और राजगणके निश्चय करनेमें विशेष सहायता मिलीहै। +

तोल और वजन।

इस राज्यमें सोना, चांदी, और दूसरी धातु, सूखे और गीले पदार्थ वजन और उसकी तोल निश्चय करनेकेलिये जो बाट और नाप प्रचलितहैं—

वह इस प्रकारहैं:—

सोना		चांदी	
१० रत्ती या लालके—	१ मासा	८ रत्ती या लालका—	१ मासा।
१० मासेका—	१ तोला	१२ मासेका—	१ तोला।

तांबा और पीतलआदिक धातुओंके नाम।

४॥ तोलेका	१ कुणवा।
४ कुणवाका	१ टुकणी वा पोथा।
४ टुकणीका	१ सेर

३ सेरकी—धारिणी—का वजन अंग्रेजी एवर्डुपएस ५ पौंड होताहै।

---

* Zeitschrift der deutschen morgenlan dischen Gesellschaft, 1882, P. 651.

\+ Bendall's Catalogue of Buddhist manuscripts Cambrige Intro XI.

सूखी वस्तुकी तोल।		तरल पदार्थोंका नाप।	
२ मनाका	१ कुडवा।	४ दियाकी	१ चौथाई।
४ कुडवाका	१ पाथी	२ चौथाईकी	१ आधटुकणी।
२ पाथीकी	१ मूडी	२ आधटुकणीकी	१ टुकणी।
१ पाथी अंग्रेजी एवर्डुपएस ८ पौण्डकी बराबरहै।		४ टुकणीका	१ कुडवा-१ सेर।
		४ कुडवेकी	१ पाथी।

समय निरूपण।

वर्त्तमानकालमें धनवान नैपालीमात्रही योरोपसे मंगाईहुई घडीकी सहायतासे समयको निश्चय करतेहैं। पूर्वकालसे भारतवासियोंके समान उनमें समय निरूपणके लिये जो परिमाण नियत था वह नीचे लिखाजाताहै।

६० विपलका	१ पल।
६ पलकी	१ घडी—२४ मिनट।
६० घडीका	१ दिन या २४ घंटे।

प्रातःकाल जब हाथके रोम अच्छीतरह गिनेजासकतेहैं, ठीक उसही समयसे नैपालियोंके दिनका आरंभ होताहै।

प्राचीन कालमें नैपाली लोग एक ताँबेकी हांडीमें छेद करके जलसे भरीहुई नांदकेऊपर छोड़ देतेथे, हांडीमें ऐसा छेद करतेथे कि एक घडीमें वह जलके भीतर डूबजातीथी। हमारे देशमें भी कटोरेमें छेद करके पानीमें छोडदेतेहैं। इस घडीमें कभीभी अन्तर नहीं पड़ता।

नैपालियोंके यहां दिन और रात चार भागोंमें विभक्त है। १ प्रभातसे पूर्वार्द्धतक, इसके पीछे फिर एकसे आरंभ करके सन्ध्यातक दूसरा भाग रहताहै। संध्यासे आधी राततक तीसरा भाग और आधीरातसे प्रभात तक चौथा भाग होताहै। किन्तु हमारे देशमें दिनरात दो भागोंमें विभक्तहै; अर्थात् रातके बारह बजेसे दिनके १२ बजेतक और फिर एकसे लेकर बारह बजेतक।

जातितत्त्व।

पर्वत श्रेणीसे इस देशके छिन्न भिन्न होनेपर भी राज्यमें बहुतसी भावर बनगईहै। इस ऊंची भूमिमें अनेक प्रकारकी पहाड़ी जाति रहतीहैं। वे लोग यहांके पुराने निवासी गिनेजातेहैं। काली नदीके पूर्वकी ऊंची भूमिमें जो कई एक विशेष जाति रहतीहैं, उनके नाम यह हैं (१) मगर जाति—भेरी और मत्स्येन्द्री वा मत्स्यांग्री नदियोंके बीचकी पहाडियोंमें इनके घरहैं। यह बड़े साहसी होतेहैं और फौजमें नौकरीकरके जीविका निर्वाह करतेहैं (२) गुरङ्ग जाति—उक्त मगर जातिकी बस्तीसे हिमालयके पालेसे घिरे हुवे स्थानतक समस्त पर्वतखण्डोंमें इनका निवास है (३) नेवार जाति—काठमाण्डूकी भांवरके 'ने' नामक स्थानके रहनेवाले प्राचीन रहवासी हैं नैपालके खेती आदि सबकामही यह लोग करते है, तो भी धनहीन है। इस उपत्यका भूमिके पूर्वकी ओर

पहाडी भूमिमें (४) लिम्बू 'वा' याक–युम्बा और (५) किराती वांरबोम्बा जातिका निवास है (६) लेपूचा–जाति–सिकम और दार्जिलिङ्ग विभागके पश्चिममें और नेपालकी पूर्व सीमाके अंतमें रहतीहैं। (७) भोटिया जाति लिम्बू किराती और लेपूचा जातिकी बस्तीके ऊपरवाले पहाडोंकी मावरमें और तिब्बत सीमातकके स्थानोंमें इस जातिका निवास देखाजाताहै। भोटियोंमें 'क्रो' नामक स्थानके रहनेवाले छोकूण और उनके समीपकी जाति दुकुपा नामसे विख्यातहै। हिमालयकी दूसरी पार तिब्बतके पास वाले देशोंमें भोटिया जातिकी बस्तीके मध्य रांगा, सियेना, काट भोटिया, पलू, सेन, था–खेन, सर्प इत्यादि पहाडी जातियोंका निवासहै। इनके अतिरिक्त नीची उपत्यकाओंमें और नेपालके तराई स्थानमें (८) कुशवार, (९) देनवार और (१०) हायु, बोटिया (यह भोटियोंसे अलगहैं) दुरे या दहरी, ब्राम, बोकमा, चेपां, कुसुन्दा, थारू आदि जातियोंका निवासहै। तैसेही (११) सुनवार और (१२) मूर्म्मि या तमर नामक दो जातियां अलग हैं।

काली या सारदा नदीके पश्चिमांशमें कुमायूं स्थानहै, ईसवीकी बारहवीं शताब्दीमें राजपूतानेसे आकर गोर्खा जाति यहां बसी इस जातिके ब्राह्मणोंमें पांडे उपाध्याय, और क्षत्रियोंमें खुश और थापा देखे जातेहैं। इस समय नेपालकी सब जातियोंके ऊपर इनकाही पूर्ण अधिकार है।

अंग्रेजोंका अनुमान है कि, नेपालमें बीस लाखके लगभग आदमी रहते हैं, किन्तु नेपाली राजदरबारकी सूचीसे मनुष्यसंख्या बावन लाखसे छप्पनलाखके बीचतक पाई जातीहै। नेपालमें कभी मनुष्यगणना नहीं हुई, इसकारण निश्चित जनसंख्याका निरूपण होना बडाही कठिन कार्य है।

पूर्वोक्त पुरानी जातियोंके होनेपर भी यहां बोधनाथ और स्वयंभूनाथके मन्दिरके पास भोटान और तिब्बतीय जातियोंका निवासहै। काठमाण्डूमें काश्मीरी और इराकी मुसलमान सौदागर रहतेहैं। इन लोगोंका प्राचीन कालसेही यहां निवास है। नेपालमें देव देवियोंके असंख्य मन्दिर होनेसे ब्राह्मण और पुरोहितोंकी संख्या भी बढगई है। इसके सिवाय प्रत्येक गृहस्थकोही एक पुरोहितकी आवश्यकताहै। यह पुरोहित उपाध्याय और गुरु अपने २ शिष्य और यजमानोंकी दीहुई दक्षिणा पूजाका धन और ब्रह्मोत्तर भूमिसे अपना भरण पोषण करतेहैं। इन लोगोंमें राजगुरुही सबसे अधिक मानाजाता है, उसकी बातको कोई भी नहीं टाल सकता। नेपाल राज्यसे मिली हुई भूमिकी आमदनीके सिवाय वह देशवासियोंमें किसी जातिगत दोषकी मीमांसा करके भी बहुतसा रुपया कमाते हैं। नेपाली लोग ब्राह्मणोंमें विशेष भक्ति करते हैं। किसी प्रकारकी पीडा या विपत्ति आनेपर ब्राह्मण भोजनका नियमभी प्रचलितहै।

ज्ञानवान ब्राह्मणोंके सिवाय यहां ज्योतिषियोंका वास भी है। कोई २ पुरोहिताई करने परभी ज्योतिष विद्यासे निर्वाह करतेहैं। होनहार बातके ऊपर नेपालियोंकी विशेष

श्रद्धा है अधिक, क्या लिखें एक बूंद औषधिका सेवन तथा युद्ध यात्रा इत्यादि कठिन कार्योंमें भी दैवज्ञसे विना मुहूर्त पूंछे हाथ नहीं डालते ।

वैद्यजाति—आयुर्वेदशास्त्रका विचार करनाही इनलोगोंका कामहै । नेपाली लोग चाहें किसीदेशमें हों प्रत्येक कुटुम्बमें एक २ वैद्य नौकर रखतेहैं । यहां सर्वसाधारणके उपकारार्थ कोई औषधालय नहीं है । जो लोग क्लर्क या हिसाब लिखनेका काम करतेहैं, वह नेवारजातिके होनेपरभी अब स्व–तंत्र श्रेणीमें गिने जातेहैं ।

नैपालमें अब पहिलेके समान अराजकता नहींहै । सर जङ्गबहादुरके समयसे नैपालकी विशेष उन्नति हुई, इस कारण नैपाली लोग किसी बुरेकामका साहस नहीं करसकते । यहांका जो प्रधान विचारक होताहै, उसको दो सौ रुपये मासिक वेतन मिलताहै । अतएव विचारकको अपनी ओर करनेके लिये प्रतिवादी लोग घूंसदेकर बहुधा छूट जातेहैं । बंगालके साथ नैपालका बहुत दिनोंसे सम्बंध था, और उसी समयसे नैपालमें बंगालियोंका निवास आरंभ हुआ यह सब बंगाली अपना आचार व्यवहार नैपालियोंसे बदललेनेके कारण नैपालियोंमेंही गिने जाने लगे । परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि, यह लोग धर्मप्रचारके अभिप्रायसे अथवा और किसी कारणसे अपने देशसे निकाले जाकर वा सौदागरीआदिके बहानेसे इस पहाडी देशमें गयेथे ।

ऊपर लिखी जातियोंको छोडकर नैपालके कई स्थानोंमें औरभी कितनीही जाति रहती हैं । काठमोटिया जातिकी बस्तीके पास पहाडियोंमें थकसिया और 'पाकिया' नामक दो जातियोंका निवासहै, वह परस्पर मित्रभावसे रहतीहैं । नैपालके कई स्थानोंमें पहियापधि, वायु, यार्कायु, खस, या खसिया, कोळी, डोम, राझी, हरि, गढवाली, कुनेत, डोमरा, कक, बम्ब, गङ्गर, दर्दु, दूंधर (नैपाल पश्चिमांशमें) और दक्षिण भागमें नैपालके तराई स्थानके निकट और मध्य भागमें कोच, बोदो, धिमाला, कीचक, पळ, कुक्ष, दहि, या दरि, बोथपा और अवलिया जातिके लोग रहतेहैं । इन अवलिया जातिके लोगोंमें औरभी कई थोकहैं, जैसे गरो, दोलखली, वतर या बोर, कुदि, हाजङ्ग, धनुक, मरहा, अमात, केब्रात, यामि आदि ।

जिन प्रधान २ जातियोंका वर्णन पहिले लिखा गयाहै, उनके बीचमें जातिगत व्यापारसे जिस २ सम्प्रदायने विशेष विख्याति प्राप्त कीहै और उन व्यापारकार्योंसे जिस२ थोककी उत्पत्ति हुईहै, उसकी एक सूची दीजाती है ।

चुनारा (बढई) सार्कि (चर्मकार या चमार) कामि (लोहार) सुनार (सेकरा या स्वर्णकार) गाइन (गाने बजानेवाला) मानर (गायक) यह अपनी २ स्त्रियोंको वेश्या बनातेहैं । दमाई (दरजी) आगरी (खोदनेवाला) कुमहल और किन्नरी (कुम्हार) पोप यह जल्लाद और चमारोंका काम करते हैं, कुळ (चर्म्मकार) नाय (कसाई) चमाखल (मंगी मैलाफेंकनेवाला) डोङ्गवा युगी (बाजेवाले) कौ (लोहार) धुसी (धातु शोधनकारी) अव (राज) वाली (किसान) नौ (नाई) कुमा

(कुह्मार) सङ्गत (धोबी) दृढि (दरी और कफन बनानेवाला) गथा (माली) भालो (जोक लगाकर रक्तनिकालनेवाला) छिपि (छीपी) सिकमि (बढई) दकमि (गृहआदि बनानेवाला या राजमिस्त्री) लोहोङ्ग कमि (पत्थर काटनेवालासंगतराश)

वस्त्र और गहने।

नेपालियोंमें गोरखा जातिही शरीरकी सवलतामें दूसरी जातियोंसे श्रेष्ठ बनीहै। गर्मियोंमें सर्व साधारण लोग सादे वा नीले रंगके कपासी कपड़ेका पायजामा कुर्त्ता या परितक लटकता हुआ जामा जो चपकनकी भांति होताहै पहरतेहैं। सबकी कमरमें कई हाथ लम्बा कपड़ेका कमर बन्द रहताहै और उसमें कुकरी नामक टेढा छुरा लटकता रहताहै। शीत कालमें भी वह वैसीही पोशाक पहनतेहैं, किन्तु उसके भीतर रूई भरवा लेतेहैं, जो लोग धनीहैं उनकी व्यवस्था अलगहै। धनी लोग जामेके भीतर बकरेके लोम मढ़वालेतेहैं। शिरकी शोभाके लिये टोपी ओढ़तेहैं। जो काले कपड़ेकी बनी हुई गोल होतीहै, औरभी कई रंगके कपड़े उसमें लगे रहते हैं, अधिक लोग उस प्रकारकी पगड़ी जरी और फीता लगाकर शिरके नाप अनुसार टोपीकी भांति ओढ़ते हैं।

नेवारी लोग कमरतक कपड़ा पहनते हैं, और गर्मी जाड़ेकी अधिकतामें मोटे सूती या ऊनी कपड़ेका जामा पहनतेहैं। इनमें जो लोग सौदागरीसे धनी बनगयेहैं, और जो लोग बहुतसे कामोंके लिये तिब्बतमें जातेहैं, वह चूड़ीदार पायजामा, चपकनकी तरह लम्बा जामा पहनते और सिरपर ऊनी टोपी ओढ़तेहैं।

हरि सिद्धि नामक स्थानमें जो नेवारी लोग रहतेहैं। वह स्त्रियोंके घाघरेके समान वा संन्यासियोंके समान पैरकी गांठतक नीचा जामा पहिनाते हैं। माथेपर काले कपड़ेकी टोपी रहतीहै, जिसके भीतर भी रुई भरी जाती है और चारोंओर १ इञ्च अस्तर रहता है।

नेपालमें और जितनी जातियेंहैं, उनका पहनावाभी बहुधा ऐसाहीहै जैसा कि, ऊपर लिखा गयाहै, तौभी स्थानविशेषमें कुछ अदल बदल होजाताहै। समस्त जातिकी स्त्रियें थोड़ा कपड़ा लेकर सामनेकी ओर घाघरेके समान चुन कर पहरतीहैं। इनके पहरनेकी चाल अद्भुत भांतिकीहै, सामनेकी ओर जो कपड़ेकी चुन्नट रहतीहै वह दोनों पैरोंको ढक कर भूमिमें लगतीहै, किन्तु पीछेका कपड़ा इतना छोटा होताहै कि, वह भी परियोंसे नीचे नहीं गिरता, राजघरानेकी स्त्री और धनी लोगोंकी स्त्री तथा लड़कियां घाघरेके समान जिस कपड़ेको चुनकर पहनतीहैं, उसकी लम्बाई ६० से ८० गजतक होतीहै। यह कपड़ा बारीक होताहै। धनी लोगोंकी स्त्रियें ऐसा कपड़ा पहन कर कभी बाहर नहीं जाती हैं। धनी या ऊंचे कुलकी स्त्रियें अपने वंशकी मर्य्यादा रखनेके लिये ऐसी पोशाक पहरती हैं और इसही वेशसे उनका विशेष आदर होताहै। सब स्त्रियेंही जामा और साड़ी (शाल या जरीकी ओढ़नी) पहरतीहैं। भारतवर्षके समतलक्षेत्र

वासियोंके समान कभी सब शरीरमें और कभी कमरतक लपेटती हैं। शिर ढकनेके लिये कोई विशेष कपडा नहीं होता। नेवारी स्त्रियें अपने बाल माथेके ऊपर जूडाकारसे बांध लेतीहैं, किन्तु दूसरी स्त्रियें वेणी गूंधकर सर्पके समान पीठ पर लटकातीहैं, और सिरे पर रेशम या सूतका डोरा बांधकर बालोंकी शोभाको बढातीहैं नैपाली स्त्रियोंको गहने बहुत प्यारे होतेहैं। वह यथाशक्ति अपने शरीरकी शोभाके लिये अनेक प्रकारके गहने पहरतीहैं। धनीलोगोंकी स्त्री कन्या जैसे मणि मुक्ता जडे हुए सोने और चांदीके गहने पहनती हैं, वैसेही दूसरी पहाडी स्त्रियें अपनी २ सामर्थ्यके अनुसार गहने पहनतीहैं। धनी लोगोंकी स्त्रियें शरीरकी शोभा बढानेके लिये माथे पर (सोने या पीतलका) जडाऊ फूल, गलेमें सोने मूंगेकी माला, हाथमें अंगूठी, कानमें बाले और करनफूल, नाकमें नथ आदि बहुतसे गहने पहरतीहैं। असभ्य भोटिये लोग अपनी स्त्रियोंके लिये सुलेमानी पत्थर, मूंगा और दूसरे कीमती पत्थरोंकी माला, या भारी हार, चांदीका कठला और बाले आदि अनेक प्रकारके गहने बनवाते हैं।

नैपाली स्त्रियें सुगंधितफूलोंको बहुत पसंद करती हैं। वह शिरकी शोभा बढानेके लिये सदाही शिरमें फूल लगातीहैं। किसी त्यौहारके समय वह अपने बालोंको फूलोंसे खूबही सजातीहैं। व्यभिचारिणी स्त्रियेंभी फूलोंसे शृंगार बनातीहैं। जो स्त्री जहां फूलको पाती हैं हाथसे तोडलेतीहैं।

राजपुरुषोंका पहरावा और प्रकारका है। वह शिरपर ज़री और अनेक भांतिके पर, मणि, मुक्ता जडाहुआ ताज, शरीरमें घुटनोंतक लम्बा रेशमी जामा, पायजामा और पैरमें जूता पहरतेहैं। रूमाल और तलवारका व्यवहार सबही करतेहैं। राना जङ्गबहादुरके शिरपर जो मुकुट रक्खा जाताथा उसका मूल्य एकलाख पचास हजार रुपयाथा। अच्छे वंशके लोग सब समय शिरपर टोपी, बनियानकी तरह घोंटोंतक लम्बा जामा, कमरबंद, कुकडी, पायजामा और जूता पहनतेहैं. सैनिक विभागके अध्यक्ष लोग अंग्रेजी सेनापतियोंके समान पोशाक धारण करतेहैं।

खानपान।

नैपालराज्यमें ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, और शूद्र आदि जातिविभाग होने परभी खान पान सम्बंधमें विशेष कुछ पृथकृता नहीं देखीजाती। यहां जो लोग ब्राह्मण नामसे विख्यातहैं, उनका आचार व्यवहार और खान पान भारतके समतल वासी ब्राह्मणोंके समानहै किन्तु राज्यमें अधिक लोगोंकोही मांस प्याराहै। गोरखा लोग साधारणतः उत्तरके पहाडी स्थान और तराईसे लायहुए बकरे तथा खस्सी मेंढे आदिका मांस खाते हैं। यह लोग शिकारके बडे शौकीनहैं। धनी लोग शिकार खेलना भली भांतिसे जानतेहैं। वह सबही समय शिकार खेलनेको बाहर जातेहैं और इच्छानुसार हिरन, बनैले शूकर व सोणालू, गोर्खोण्ड, कुवाक, देरी, हरेल बुद्दन, चील आदि पहाडी पक्षियोंको मारकर उनका मांस खाते हैं।

बहुतसे लोग शूकरका बच्चा पालतेहैं और इङ्गलेण्डकी रीतिके अनुसार उसको खिला-पिलाकर बडा करतेहैं। बचपनसे पालेजानेके कारण सुअरका बच्चा पालनेवालेसे अत्यन्त पोष मानता है अधिक क्या कहें, कभी २ ऐसा देखागयाहै कि यह सुअरका बच्चा कुत्तेकी तरह अपने स्वामीके पीछे २ चलाजाताहै। नेवारी लोग भैंसा, भेड, बकरा, हंस और मोर आदि पक्षियोंका मांस खाते व भारतवर्षके दुम्बेका मांस खानेकी विशेष इच्छा दिखातेहैं। यहांके मगर और गुरङ्गजातिके लोग अपनेको हिन्दू बतातेहैं। मगर जातिके लोग शूकरका मांस बडे प्रेमसे खाते हैं। किन्तु भैंसका मांस नहीं खाते। इसके विपरीत गुरंग लोग भैंसेकाभी मांस खाते हैं। किन्तु शूकरका मांस छूतेतक नहीं। लिम्बु, किराती और लेपचा आदि बौद्ध धर्म्मावलम्बियोंकी भोजन प्रणाली नेवार जातिके लोगोंके समानहै।

साधारण धनी लोग यद्यपि मांस आदि भोजन और विलासकी दूसरी सामग्री भोगनेमें समर्थहैं, किन्तु दरिद्र और नीची श्रेणीके लोग सदा मांस आदिका भोजन नहीं कर सकते। यह लोग मांसप्रिय होनेपरभी धनके अभावसे प्रतिदिन मांस नहीं खरीद सकते। इसकारण शाक सब्जीसेही अपना पेट भरलेते हैं। विशेषकर चावल, शाक आदिकी तरकारी कच्चा और रांधाहुआ लहसन या प्याज और मूली आदिकी तरकारी रांधकर खातेहैं। मूली पचानेके लिये वह एक प्रकारकी चटनी बनाके भोजनके संग खातेहैं। नेपाली लोग इसको (सिनकी) कहते हैं। यह चटनी अत्यन्त घृणित और दुर्गंधयुक्त होती है।

नेवारी लोग और दूसरी नीच जातियें मदिरा खूब पीती हैं। वह अपनी प्यास बुझानेके लिये चावल अथवा गेहूंसे एक प्रकारकी अधम शराब तैयार करते हैं। वही (रुक्सी) नामसे विख्यात है। यहां ऊंची श्रेणीके लोग मदिरा नहीं पीते। क्योंकि जो लोग जातिके नेता और जातिमें श्रेष्ठ हैं, उनके लिये शराब पीना बहुतही बुरा है। अच्छे कुलीन लोग मद्य पीनेके कारण जातिसे गिर जाते हैं। अचरजकी बात तो यह है कि नेपाली मद्यके बदले अब वहां पर विलायती ब्राण्डी और शामपीन मद्य अधिकतासे व्यवहार होताहै।

नेवार लोग अपने शौकके लिये जो मद्य पीतेहैं उसको अपने घरहीपर तयार करतेहैं। इसके लिये राजाको कुछ कर नहीं दिया जाता। किन्तु यदि कोई ऐसी बनी हुई रक्सी शराब बाजारमें बेचै तो उसको महसूल देना पड़ताहै। नेवार लोग सब समयही मद्य पीतेहैं। पहाडी कोल जातिमें 'हांडियां' का जैसा चलनहै, प्रचलित "रक्सी" मद्यकाभी इनमें वैसाही प्रचारहै।

चाहको सबही नैपाली पीते हैं। नीच लोगोंमें जो बहुत गरीब हैं और जिनके पास दाम नहींहैं, वह लोग चाह नहीं पीते। चाह तिब्बतसे आतीहै। नैपाली लोग दोप्रकारसे चाह बनाते हैं, (१) मसालेके साथ पकाकरके जो चाह बनतीहै उसका स्वाद

मद, चीनी, नींबूका रस और जायफल मिले हुए द्रव्यके समान है। (२) घी और दूधके साथ भी बनती है। यह कुछ २ अंग्रेजी चकोलेट (Chakolate) के समान है। इसके सिवाय नेपाली लोग चाइके पिष्टकभी खातेहैं। जिनके बनानेकी रीति यहहै कि चाइके ताजे पत्तोंके साथ चर्बी चावलका पानी, अथवा खार युक्त पदार्थ मिलाकर कुछ देर गीला रखतेहैं। जब वह फूल जाताहै तब किसी लम्बे वर्त्तनमें भरके आगपर सुखा लेतेहैं, दूध आदिके साथ भी इसको खातेहैं। चाइना भाषामें इसका नाम 'तुङ्काउ' है। अंग्रेजी ढंगसे बनीहुई चाइका विशेष आदर नहीं केवल ऊंची श्रेणी-के नैपाली लोग जो कलकत्तेमें होगये हैं, इसके पक्षपातीहैं।

विवाह प्रथा।

नैपालियोंमें एक २ मनुष्यके कई २ विवाह होतेहैं। विवाह उनके लिये एक प्रकारका शौकहै। जो धनवान् हैं वह कई स्त्रियें रखतेहैं। बहुतसी स्त्रियोंका होना नैपालियोंके लिये सन्मानका चिन्हहै। इसही कारणसे कोई २ धनी पचास २ और साठ २ स्त्रियें रखतेहैं। तथापि उनका मन तृप्त नहीं होता। बहु विवाहकी रीति जैसी नैपालमें प्रबलहै वैसेही विधवाविवाहका कठिन निषेध है। पूर्वकालमें यहां असंख्य पतिव्रता स्त्रियें स्वामीके साथ जलती थीं, स्वामीकी मृत्युसे स्त्रीका यह अपूर्व स्वार्थ त्यागना नैपालियोंके कठोर हृदयमें असाधारण धर्मज्योति प्रकाशित करताथा। यह सम्पूर्ण स्त्रियें भी अपने सती नामको चारितार्थ करके भारतमें धर्मका स्तंभ गाड़कर सम्पूर्ण जगत्में अपनी चिरस्मरणीय कीर्त्ति फैलागई हैं। आज इतने दिन पीछे भी इसबातको सुनकर मनमें अपूर्वभक्तिका सञ्चार होताहै, और एक बार प्रेमाश्रु बहाकर उन स्त्रियोंको धन्य २ कहे बिना नहीं रहाजाता।

पुराने राजपुरुषोंकी नियमावली स्वच्छंदताके दोषोंसे दूषित होनेके कारण, तथा राजाके राज्यप्रबंधमें शिथिलता रहनेसे राज्यमें गड़बड़ मची। राजपुरुषोंके परस्पर फूटसे गदर हुआ। उससमय हो जङ्गबहादुरने राजाको सिंहासनसे उतारकर स्वयं राज्य लेलिया। राना जङ्गबहादुरने नैपालका राज्यभार अपने हाथमें लेकर भी जब देखा कि, शत्रुओंकी बुरी दृष्टि अपने ऊपरहै, तब नैपालके ऊंचे ऊंचे बहुतसे कुलोंमें विवाह सम्बन्ध किया, बहुतसे विवाहोंका यही अभिप्राय था कि शत्रुलोग उनके विपक्षमें न रहें। अभिप्रायके सिद्ध करनेको उन्होंने उससमय देशके बडे २ रईस और शक्तिशाली कुलोंमें अपने पुत्र पौत्र भ्राता इत्यादिको विवाह सूत्रसे बांधदिया। इसप्रकार अपनेको शत्रुओंसे निरापद समझ-कर सन १८५१ ईसवीमें वह इंग्लेण्ड गये वहां एकवर्षतक रहकर अंग्रेजोंकी चाल-ढाल देखी, पीछे सन १८५२ ईसवीकी ८ फरवरीको नैपालमें लौटआये। आतेही नैपालका फौजदारी आईन बदलकर देशमें अच्छा प्रबंध बांधा। सतीदाह निवारणके विषयमें कई एक नये नियमोंका प्रचारकिया। सतीदाहके विषयमें उनकी संशोधित नियमावली इसप्रकार है। पुत्रवती स्त्रियें इच्छा रहतेभी जलनेके लिये नहीं आस-

कैगी । (२) श्मशानमें जाकर जो स्त्री अपने स्वामीकी चिताको देखकर डरे, और साक्षात् कालरूप अग्निमें जलनेसे कांपे तो वह कभीभी सती नहीं होसकेगी । पहिले यह नियमथा कि, यदि कोई स्त्री एकवार स्वामीके संग जलनेको कहती, और श्मशानमें चिताका भयंकर दृश्य देखकर चौंकती, तौभी उसके घरके लोग उसे बलात् चितामें डालदेतेथे । यदि स्त्री भागनेकी चेष्टा करती, तो लकड़ी मारकर उसका शिर फोड़देते और चितामें डालदेतेथे । जङ्गबहादुरकी कृपासे अबला स्त्रियें ऐसे भयंकर अत्याचारके पञ्जेसे बचगईं । यद्यपि ब्राह्मण पुरोहितोंने इसके विरुद्ध बहुत कुछ कहा, तथापि उन्होंने किसीकी बात न मानकर अपने इन नियमोंको स्थापन करनेका दृढ संकल्प करलिया ।

यदि गोरखोंको अपनी स्त्रीके चालचलनपर किसीप्रकारका संदेहहो, व्यभिचारिणी होनेका खटकाहो तो वह स्त्रीको बड़ा कष्ट देतेहैं । कोई स्त्री यदि भ्रमसे कुमार्गमें चली जाय, तो पहिले उसको नियमसे घरमें रखकर उसके चरित्र सुधारनेकी चेष्टा करतेहैं, या उसको पाप कर्मके बदले बेंत इत्यादिका दण्ड देकर उसको फिर सुमार्गमें लानेकी चेष्टा करतेहैं । किन्तु जब देखतेहैं कि, उसकी कुचाल नहीं छूटी तो जन्मभर कैदमें रखतेहैं । जो पुरुष जार बनकर दूसरेकी स्त्रीसे प्रेमकरे तथा उसका धर्म्म भ्रष्ट करना चाहे और स्त्रीका स्वामी यह बात जानले तो स्त्रीका पति अपनी स्त्रीके उपपतिको पहिलीही बार देखनेसे कुकड़ी द्वारा मारदेताहै । सर जङ्गबहादुरने देखा कि, ऐसे कुत्सित प्रेममें जातीयताकी अवनतिहै, तथा ऐसे सतीत्व हरणमें देशकी बदनामी होती है, यह विचार कर उन्होंने उसके निवारण करनेको इस प्रकारका आईन प्रचार किया कि, यदि कोई पुरुष किसी दूसरेकी स्त्रीसे प्रेम करेगा तो उसको राजद्वारसे भारी दण्ड मिलेगा । दोषी आदमीको हवालातमें रखके उसका विचार आरंभ होताहै, विचारमें दोष प्रमाणित होनेपर स्त्रीका स्वामी सबके सामने अपनी स्त्रीके जारको दो टुकडे करदेताहै; किन्तु मृत्युके समय उसको प्राणरक्षा करनेका एक अवसर दियाजाताहै, वह यह कि, दोषी और प्राण लेनेवाला दोनों कुछ अन्तरसे खड़े किये जातेहैं,। फिर दोषी आदमीको भागजानेकी आज्ञा दीजातीहै, यदि दोषी भागकर किसीप्रकारसे अपने प्राण बचाले, तो बचजाताहै । फिर उसका विचार नहीं होता । इसके अतिरिक्त जारकी प्राणरक्षाके और भी दो उपाय हैं, किन्तु नैपाली लोग ऐसी प्राणरक्षाको बुरा समझतेहैं । वह प्राणदेना प्रसन्नतासे स्वीकार करलेंगे, किन्तु अपनी पत्नीके उपपतिके पैरनीचे होकर नहीं निकलेंगे । नैपाली लोग ऐसे कुकर्म्म करके जाति छोडनेकी अपेक्षा प्राण देनाही अच्छा समझतेहैं और यदि स्त्री कहे कि, मेरा यह पहिला उपपति नहींहै । यास्सबसे पहिले मुझको यह कुमार्गमें नहीं लगयाहै तो राजा स्त्रीका विश्वास करके विचारके लिये लाये हुए उपपतिको छोड़ देताहै । इस प्रकार दूसरेकी स्त्रीके संग प्रेम करके सैकड़ों कुलीन युवक अकालमेंही कालके कराल गालमें गिरचुकेहैं । भागनेकी आज्ञा रहनेपर भी उपपति भाग नहीं

सकता, क्योंकि भागनेके समय कोई न कोई पकड़ही लेताहै। इस प्रकार व्यभिचार और जातिभङ्ग दोषके लिये पूर्वकालमें नैपालियोंको बड़ा भारी दण्ड भोगना पड़ताथा। इस दोषमें ऐसे दण्डका होना वास्तवमेंही अत्याचार था। अब यह सब आईन बदल गये हैं। नेवार, लिम्बू, किराती और भोटिया जातिके लोग यद्यपि बौद्धहैं, तथापि उनमें हिन्दू धर्मका अधिक प्रभाव पाया जाताहै। अतएव इन जातियोंमें कई २ विभाग होगये हैं। आचार व्यवहार परस्पर बहुधा एकसाही है। नेवार आदि दूसरी जातियोंकी अपेक्षा गोर्खालोगोंके विवाह बन्धनमें कुछ विशेषता देखी जाती है। भारतवासी हिन्दुओंके समान एकवार विवाह होनेपर दोनोंमेंसे एककी मृत्युके बिना किसी प्रकारसे विवाह विच्छेद वा स्त्रीका त्याग नहीं होसकता। स्त्रीका त्याग या स्त्रीका किसी दूसरेके घरमें चलेजाना बहुत बुरा और जातीय गौरवका नष्ट करनेवाला समझा जाताहै। नेवारलोग अपनी २ कन्याका बालकपनमें ही एक बेल (श्रीफल)के साथ विवाह करदेतेहैं। जब कन्या ऋतुमती होतीहै, तब उसके लिये एक अच्छा वर ढूंढकर लाते हैं॥ यदि इस नवीन दम्पतीमें प्रेमका संचार नहो और सदा कलहमें दिन कटें तो वह कन्या अपने स्वामीके सिराने एक सुपारी रखकर बाहर चलीजातीहै इतनेसे ही स्वामी समझ जाताहै कि, मेरी नवीन स्त्री मुझे छोड़कर दूसरी जगह चली गई अब यह स्वामी त्यागकी रीति नियमबद्ध होगईहै, अतःइस समय इतनी सरलतासे कोई भी अपने पतिको छोड़कर दूसरी जगह नहीं जासकती॥

इनमें विधवा विवाहभी प्रचलितहै। एक प्रकारसे तो इन लोगोंमें कोई स्त्रीभी विधवा नहीं होती। इस जातिका विश्वासहै कि, एक पतिसे दूसरा पति करनेपर भी बालकपनमें बेलके संग विवाह करनेके कारण सीमन्तका सिंदूर कभी नहीं छूटता।

इस जातिकी स्त्रियें व्यभिचारदोषसे दूषित होनेपर साधारण दण्ड पातीहैं। किन्तु जिस यारके सहवाससे उनका पातिव्रतधर्म नष्ट होताहै वह उपपति स्त्रीसे त्यागेहुए स्वामीके विवाहका सम्पूर्ण व्यय देताहै और नहीं देता तो उसको जेलमें भेजदिया जाताहै।

इनलोगोंमें मृतक देहको जलातेहैं, और इच्छाकरनेसे विधवा अपने स्वामीके साथ जलभी सकतीहैं, किन्तु विधवाविवाह प्रचलितहै, इसकारण उनको दूसरे मार्गमें नहीं जाना पड़ता। कभी २ इस जातिमें दो एक सतीदाह भी देखे गयेहैं।

शासन-प्रणाली।

प्राचीन कालके समय यदि नैपालियोंमें कोई विशेष दोष करता, तो उसका अङ्गभङ्ग करदिया जाताथा या शरीरमें जगह २ डोरेसे काट देतेथे, अधिक क्या कहें प्राणतक लेडालतेथे। बेंतभी मारे जातेथे। सरजङ्गबहादुरने विलायतसे लौटकर इस प्रकारके कठिन दंड उठादिये और नीचे लिखेहुए नियम बनाये "कोईपुरुष राजद्रोह करे या राजकीय कामोंमें विश्वासघातकता करे अथवा संग्राममेंसे भागने आदिका राजसम्बन्धी कोई अपराधकरे तो उसको जन्मभरका जेल या शिर काटनेका दण्ड दिया जायगा।

कोई सरकारी आदमी घूसले, या राजतहवील नष्टकरे, अथवा दूसरेकी अनजानीमें राजकोषसे रुपये लेकर किसीको सूदपर देदे तो उसके ऊपर विशेष रूपसे धनदण्ड कियाजायगा या कैदकी सजा दीजायगी और उसही समय नौकरीसे अलग कर दिया जायगा।

गाय अथवा मनुष्यकी हत्या करनेपर शिरकटनेकी आज्ञा दीजायगी। यदि कोई गायका चमड़ा किसी अस्त्रसे काटेगा अथवा क्रोधसे हत्या करडालेगा उसको जन्मभरका जेल करदिया जायगा। कानूनसे बाहर चलनेवाले आदमीकी उसही धारा अनुसार धन-दण्ड या जेल भोगना पड़ेगा।

कोई नीचश्रेणीका आदमी यदि अपनेको ऊंचे वंशका बतावे और किसी अच्छेकुल-वाले आदमीको जूठखिलाना चाहे, तथा उसको जातिसे गिरानेका यत्नकरे तो उसके ऊपर यथोचित धनदण्ड और कारावास कियाजायगा, अथवा उसकी सम्पत्ति छीनली-जायगी। अपराध विशेष होनेपर उसको दास बनाकर बेचदियाजायगा। जो लोग जातिभ्रष्ट होजातेहैं वह उपवासादि प्रायश्चित्त करके या गुरु और पुरोहितको नियत धन देकर अपनी जातिमें फिर मिलजातेहैं।

ब्राह्मण और स्त्रियोंका शिर नहीं काटाजाता। ईश्वरकी अनुगृहीत अबला जातिको सबसे ऊंचा औ कठिन दण्ड जीवनभरका कठिन कारावासहै।

ब्राह्मणोंके लियेभी यही नियमहै, केवल विशेषता यहहै कि ब्राह्मण लोग जेलमें जाकर जातीय गौरवके सङ्ग २ ही जातिसे भी पतित होजातेहैं।

सेनाविभाग।

राज्यरक्षा और राज्यशासनके संबंधमें नैपालराज्यका बहुत रुपया खर्च होताहै जिन-सुनियमोंके संग युद्धविद्या सिखाईजातीहै, वैसेही तीर तोप और बंदूक बनानेमें बहुतसा रुपया खर्च कियाजाताहै। गोरखा दलही सैनिकदलकी पुष्टि करताहै। यहां राजकोषसे वेतन पानेवाले सोलह हजार सैनिकहैं। यह सेनादल २६ रिजमटमें बटा हुआहै, इसके सिवाय नैपाल राजके नियमानुसार और बहुतसे लोग सेना विभागमें निय-मित समयतक युद्धविद्या सीखकर कामसे छुट्टी लेसकतेहैं। यह सबलोग गृहस्थीके कामोंमें लगे रहने परभी आवश्यकता होनेपर सेनामें भर्ती करलिये जातेहैं। नैपालमें इसनियमके होनेसे नैपालराजको सेनासंग्रह करनेका विशेष सुभीता रहताहै। वह इच्छा करतेही एकदिनमें लगभग सत्तर हजार शिक्षित नैपाली सेना इकट्ठी कर सकतेहैं।

यहांके सिपाही अंग्रेजीरीतिके अनुसार शिक्षितहैं, किन्तु सब विषयमें अंग्रेजी नियम नहींहै। सेनाका विभाग, सेनाके नायक, अधिनायक आदि सबही पद अंग्रेजी फौजके समान होनेपर भी क्रमानुसार उन्नति नहीं होती। राजपुत्र या राजकुटुम्बके लोग एक २ वर्षमें क्रमानुसार ऊंचा पद पाते हैं। किन्तु बूढे चतुर

कर्मचारियोंको प्राय: सेना विभागके नीचेही काम करते हुए देखाजाताहै, उनकी उन्नति सहजमें नहीं होती।

सैनिकोंका दैनिक पहिरावा नीले रंगका सूती जामा और, पायजामाहै, सामयिक, वेश,—लालरंगका जामा, काला इजार, बगलमें लाल डोरा, पांवमें जूता, शिरपर टोपी, और अपने दलका चिन्हयुक्त एक चांदीका तमगा रहताहै। तोपखानेके सिपाहियोंकी पोशाक नीली होतीहै। घोड़े आदिके चलानेका स्थान न होनेसे नेपालराज्यमें घुड़सवार सेनाकी संख्या बहुतही कम है। यहां बारूद, गोला और गोली बनानेका कारखाना भी है।

नेपालमें अबभी सेनाकी शिक्षाके लिये कवायद होतीहै। पहाड़ी देशमें यह लोग बड़ी चतुरतासे युद्ध करतेहैं। अंग्रेजोंके साथ युद्धमें इन्होंने दो बार कार्यतत्परता और युद्धकी चतुराई दिखाई थी, यही इसजातिके वीर्य्यशाली होनेका पक्का प्रमाणहै। नेपालकी तोप और बंदूक आदि अस्त्र बहुत अच्छे नहीं होते। राज्यमें चार तोपें (Mountain battery) हैं। सर्दार बावरजंगने नेपालसेनाध्यक्ष बनकर जब अंग्रेज सेनापतिको अपने व्यवहारसे तृप्त किया, तब अंग्रेजराजने मित्रताके चिन्हमें यह चार यंत्र नेपालराजको उपहार दिये थे। राजाके अस्त्रागारमें अगणित तोपें होनेपरभी प्रतिदिन यहां तोप और अस्त्रादि बनाये जाते हैं।

दास प्रथा।

नेपालमें अबभी दासदासियों के बेचनेकी चालहै। साधारण दशाके लोगभी अपने अपने गृहकार्यके लिये दास दासी मोल लेतेहैं। किन्तु यह दासप्रथा अफ्रीकाके पूर्व प्रचलित दासव्यवसायका दूसरा रूपहै। यहांके दासलोग केवल घरका कामही करते और बहुधा स्वाधीन रहसकतेहैं। अफ्रीकाके मोललिये हुए दास अपने स्वामीसे कभी२ बहुतही सताये जातेथे, किन्तु नेपाली दासदासियें भारतवासियोंके घरमें रक्षित दासदासियोंके समान हैं। नेपालमें केवल खरीदते समय दाम देने होतेहैं। धनी लोग ऐसे बहुतसे दास दासी खरीदलेते हैं।

नेपालकी वर्त्तमान दास संख्या ५५ हजारहै। अगम्यागमन या ज्ञातिसे संसर्ग आदि पापमें लिप्त होने अथवा जातिगत किसी दोषके करनेसे स्त्री पुरुष परिवार सहित दासरूपसे बेचदिये जातेहैं। इसप्रकारसे नेपालकी दाससंख्या दिन २ बढ़ती ही जाती है।

खरीदी हुई दासियें सदाही घरके कामों में लगी रहती हैं, तथा बकरे और घोड़ेके लिये घास काटना आदि बहुतसे पुरुषोचित कामभी करने पड़तेहैं। कोई २ धनी इन दासियोंको अपने घरके बाहर नहीं निकलनेदेते; किन्तु अधिकतासे सब जगह दासियें अपनी इच्छानुसार घूमती हैं। दासियोंका चरित्र बहुत शुद्ध नहीं होता। घरके किसी न किसी आदमीसे प्रत्येकदासी फँसी रहतीहै। यदि खरीदनेवाले गृहस्वामीके सहवाससे दासियोंके सन्तान होजाय तो दासियें स्वाधीन होसकती हैं। किन्तु

उस समय वह ऐसी ममतामें जकड जातीहैं कि किसी भांति भी उस घरको नहीं छोडतीं । दासीका मूल्य (१५०) रुपयेसे लेकर २००) तक और दासका मूल्य (१५०) से २००) रुपयेतक पडताहै ।

देव देवियोंकी पूजा और उत्सवादि ।

देवता और ब्राह्मणोंमें भक्ति होनेके कारण नेपालमें देव देवियोंके असंख्य मंदिर हैं । २७३३ लिखने योग्य तीर्थ क्षेत्र या देवालय हैं, और इन सब देव मंदिरोंमें पर्वोपर उत्सव होतेहैं । प्राय:प्रतिदिनही एक दो उत्सव होतेहैं । वर्षमें छि:महीने तो उत्सव और पूजादिमें कटतेहैं । दूसरे देशका आदमी नैपालमें जाकर देखेंगा कि वहांकि पर्व और उत्सवोंका अन्त नहीं है । अचरजकी बात तो यहहै कि सब उत्सवोंमें लगे रहनेपर भी नैपाली लोग गृहस्थीका निर्वाह करतेहैं । प्रत्येक निर्दिष्ट पर्व दिन और उसके उत्सव आदिकी एक २ कथा लिखी गई है । पुस्तक बढ जानेके भयसे हम उसको नहीं लिख सकते । नेपालमें जितने प्रधान २ पीठ या देवालयहैं उनके पर्वदिन और उत्सव आदिकी बात बहुत संक्षेपसे लिखतेहैं ।

१—मत्स्येन्द्रनाथयात्रा—नैपालके देवता मत्स्येन्द्रनाथ पाटनके अन्तरगत भोगमती ग्राममें हैं, वहां लिङ्ग भी स्थापितहै । वर्षके पहिले दिन (वैशाखकी १ तारीखमें) पहिले उत्सवका आरंभ होताहै । उत्सवके दिन विग्रह स्नानके पीछे राजाकी तल्वार उनके चरणोंमें रखकर पूजी जाती है । पूजा होजानेपर मत्स्येन्द्रनाथकी मूर्त्तिको एक सजेहुए रथमें विराजमानकर पाटनमें लेजातेहैं, और वहां एक मास रहकर पुण्यदिन व शुभ मुहूर्तमें फिर वेगमती ग्राममें लौटालाते हैं । उस मूर्त्तिको कम्बल उढाया जाताहै और स्थान २ में सबके सामने कपडा उठाकर दिखातेहैं इससे लोग समझतेहैं कि देवता एक कंबलमेंही सन्तुष्ट है वह उपदेश देतेहैं ।कि सबको अपनी २ दशामें सन्तुष्ट रहना अच्छाहै । इसका नाम गुदडीझाडा उत्सवहै । पाटनसे लौटते समय जहां २ सेवकोंके भोजनको मूर्त्तिका अधिष्ठान होताहै, वहांके रहनेवाले भोजनादिका प्रबंधकर देतेहैं । नेवारियोंमें भी नैपालके अधिष्ठाता आर्य्यावलोकितेश्वर—मत्स्येन्द्रनाथ देवके बडे और छोटे दो पर्वदिन नियतहैं ।

२—नेता देवीकी यात्रा ।

३— पशुपतिनाथ यात्रा ।

४—वज्रयोगनी यात्रा—बौद्धोंका उत्सव है—

बौद्धोंके अतिरिक्त हिन्दूलोग भी अब उनकी उपासना करतेहैं । शङ्कु प्रदेशसे मणि-चूड नामक पर्वतपर इस देवीका मन्दिर है । वैशाखकी तीजको उत्सव आरम्भ होता है। उस समय एक खाटपर वज्रयोगिनीकी मूर्त्ति रखकर शङ्कुनगरकी प्रदक्षिणा करते हैं । इस मन्दिरके सामने खड्गयोगिनीका मन्दिर है । देवी मूर्त्तिके सम्मुख सदा आग जलती रहती है और एक मनुष्यके मस्तकका एक आकारभी वहां है ।

५–सीथी यात्रा–काठमाण्डू और स्वयम्भुनाथके मध्यवर्ती विष्णुनदीके तटपर ज्येष्ठ मासमें यह उत्सव होता है। सब लोग भोजनकर तीर्थ स्थानमें जाते और वहां दोदलोंमें बट जातेहैं। और दोनों दल एक दूसरेके ऊपर ईंटें फेंकतेहैं। पूर्वकालमें यदि कोई ईंटकी चोटसे मूर्छित होजाता, तो दूसरे दलके लोग उसकी चेतनाहीन देहको कद्रेश्वरीके मन्दिरमें लेजाकर बलि देतेथे। राजकी आज्ञासे अब बालकोंका ईंट फेंकना वर्जित है।

६–गोथिया मंगल वा घंटाकर्ण–घंटाकर्ण नामक राक्षसको देशसे निकालदेनाही इस उत्सवका अभिप्राय है। बंगालमें प्रवाद है कि घंटाकर्ण वा घेंटूकी पूजा करनेसे गृहस्थ लेडके लडकियोंको मारक रोग नहीं होता। नेवारबालक फूंसकी एक प्रतिमा बनाकर जगह २ लिये फिरते हैं और प्रत्येक मनुष्यसे भिक्षा मांगतेहैं। उत्सवके अन्तमें बालक गण उक्त मूर्त्तिको जलाकर आनन्द मानतेहैं। यह उत्सव श्रावणमें होता है।

७–बांडायात्रा–बौद्धमार्गी नेवार जातिके पुरोहित लोग श्रावणकी ८ और भादोंकी १२ इन दो दिन प्रत्येक गृहस्थके पाससे वार्षिक करस्वरूप चावल और दूसरे अन्न लेनेके लिये बाहर निकलतेहैं। इस भिक्षा वृत्तिका यह अर्थ है कि, प्राचीन कालमें बांडालोगोंके पूर्वपुरुष बौद्ध पुरोहित गण भिक्षुक थे। उन महात्मा लोगोंके वंशवाले पुरुष उनके अनुष्ठित सत्कर्मका पालन करनेके लिये वर्षमें केवल दोबार भिक्षावृत्ति करतेहैं। इस भिक्षान्नसे ही वर्ष भरतक उनका निर्वाह होताहै। उक्तदिन नेवारी लोग अपने २ घर और दूकानोंको पुष्पादिसे सजातेहैं, और स्त्रियें चावल और दूसरा अन्न लेकर दूकान और घरके बाहर बैठजातीहैं। बांडालोगोंके द्वारपर आतेही उनको बहुतसा अन्न देकर बिदा करती हैं। कोई धनी नेवारी इन दोनों दिनको छोडकर यदि और किसीदिन गुप्त भावसे अर्थात् इकलाही बांड लोगोंको ऐसी भिक्षा देकर बिदा करनाचाहे तो बहुतसा धन बिना खर्च किये उसकी यह इच्छा पूरी नहीं होसकती। इस उत्सवमें जो बांडा जिस गृहके द्वारपर पहिले आयगा उसको कुछ अधिक देना होगा। यदि कोई गृहस्थ इस उपलक्षमें राजाको निमन्त्रण करै, तो वह राज सन्मान रक्षार्थ एक चांदीका सिंहासन, छत्र और रांधनेके वर्तन राजाके चरणोंमें अर्पण करके अपनी मर्य्यादाका परिचय देगा।

८–राखी पूर्णिमा–श्रावणमासकी पूनोंकेदिन बौद्ध और हिन्दू दोनों सम्प्रदायही इस उत्सवको मानतेहैं किन्तु दोनों दलोंकी क्रिया स्वतन्त्र है। बौद्धलोग उस दिन पवित्र नदीमें स्नान करके देव दरशनको मन्दिरमें जातेहैं और ब्राह्मण पुरोहित लोग अपने शिष्य या यजमानके हाथमें रँगाहुआ डोरा बांधकर उनसे दक्षिणा लेते हैं। बहुतलोग पुण्यसंचयके अभिप्रायसे गोसाईं थान पर्वतके निकटवाले नीलकण्ठ सरोवर या गोसाईं कुण्डनामक स्थानमें स्नान करने जातेहैं।

९–नागपंचमी–प्रतिवर्ष श्रावण मासकी पञ्चमीको नाग और गरुड़के युद्ध उपलक्षमें यह उत्सव होताहै। चाम्बू नारायणके मन्दिरमें जो गरुडमूर्त्ति प्रतिष्ठितहै, नैपालियोंका

विश्वासहै कि इसदिन देवमूर्त्ति युद्धके श्रमसे पसीजतीहै। पुरोहित लोग एक अंगोछेसे पसीनेको पोंछतेहैं। उनको विश्वासहै कि इस अंगोछेका एक डोराभी सर्पविषके दूरकरनेको रामवाण है।

१०–जन्माष्टमी–श्रीकृष्णके जन्मोपलक्षमें यह उत्सव होताहै।

११–गोष्ठ यागामी–यात्रा–केवल नेवार जातिमेंही यह उत्सव होताहै, जिस गृहस्थके घरका कोई आदमी मरजाताहै, उस परिवारके सब लोग भादोंकी पड़वाको गोरूप धरकर राजमहलके चारों ओर घूमते व नृत्य करतेहैं। अब केवल मुख ढककर साधारण नाचगानही होताहै।

१२–बाघयात्रा–गामीयात्राके पीछे भादोंकी तीजको नेवार लोग बाघरूप धारणकर नाचते गातेहैं। यह भी गामीयात्राकी छायामात्रहै।

१३–इन्द्रयात्रा–भादोंमें यह उत्सव होताहै और आठ दिनतक बराबर रहताहै। पहिले दिन राजमहलके सामने एक ऊंचे काठकी ध्वजा फहराई जातीहै और राजाकी ओरसे नियत हुआ नाचनेवालोंका दल महलके चारों ओर नाचता गाताहै। तीसरे दिन राजा बहुतसी कुमारियोंको बुलाकर कुमारी पूजा करताहै; फिर सवारीमें बिठाकर नगरके बीचमें से निकालाजाताहै। जब कुमारियें नगर घूमकर फिर राजमहलमें लौटती हैं, तब एकगद्दीके ऊपर महाराज बैठतेहैं अथवा राजखड्ग उसके ऊपर रखदिया जाता है;। राज कर्म्मचारी अनेक प्रकारकी भेटें देतेहैं। इसदिन अनन्त चतुर्दशी होती है। गोरखोंके राजा पृथ्वी नारायणने इस पर्वदिनमें दल सहित आकर काठमाण्डू नगरमें प्रवेशकिया था। महाराजके बैठनेकी गद्दी बिछाई गई, गोरखा राजगद्दीपर बैठगये। नेवार लोग उत्सवमें मग्न और नशेमें चूरथे, इसलिये राजाका सामना नहीं करसके। नेवार राजा नगरसे भागगया, पृथ्वीनारायणने बिना किसी बखेड़ेके नेपाल राज्यको अपने अधिकारमें किया। नेपालियोंको विश्वासहै कि इस अवसर पर यदि भूकम्प हो तो विशेष अनिष्ट होनेकी सूचनाहै। इसकारण नेवारी लोग भूकम्पके दूसरे दिनसे फिरभी आठ दिनतक उत्सव मानतेहैं।

१४–दशहरा या दुर्गोत्सव–महालयासे विजयादशमीतक १० दिन यह उत्सव होता है। भारतवर्षके अन्य २ स्थानोंमें इससमय जैसा उत्सव होताहै, यहां भी ठीक वैसाही होताहै। उत्सवके इन दशदिनमें अनेक भैंसे और बकरोंकी बलि दीजातीहै। किन्तु बंगालके समान यहां मिट्टीसे दुर्गाकी प्रतिमा नहीं बनाई जाती। पहिले दिन अर्थात घट स्थापनके समय ब्राह्मण लोग पूजाके स्थानमें पञ्च धान्य बोकर पवित्र नदीके जलसे सींचतेहैं और दशमें दिन शिष्यादिसे प्राप्तहुए धनके बदलेमें आशीर्वाद स्वरूप न्योरते देतेहैं।

१५–दिवाली–धनाधिष्ठात्री लक्ष्मीदेवीकी पूजामें कार्त्तिककी मावसको यह उत्सव होता है, और लोग सारी रात जुआ खेलतेहैं, आईनमें जुआ खेलनेकी मनाई होनेपरभी इस

त्सवके समय तीन रात और तीनदिनमें किसीप्रकारकी बाधा नहीं । जुआ खेलनेवालोंके आने जानेसे मार्गोंमें बड़ी भीड़ होजातीहै । रुपये पैसे आदिकी बाजी हारजानेपर कभी २ अपनी स्त्रीतकको जुएमें हारजातेहैं । किसीसमय एक आदमीने अपने हाथ काटकर बाजी बदी, और जब वह जीतगया तो उसने दूसरे खिलाडीसे कहा कि तुम अपने हाथ काटकर मेरी बाजीका बदला दो, या अपना जीताहुआ सब रुपया उसके बदलेमें मुझे दो । संसारमें जुएके ऐसे शौकीन विरलेहीहैं ।

१६–किचा पूजा–नेवारजातिमें केवल यही उत्सव कार्तिकमें होताहै, सब नेवारीलोग कुत्तेकी पूजा करतेहैं, उसदिन नैपालके सब कुत्ते, गलेमें फूलोंकी माला पहरतेहैं, इसही प्रकारसे भैंस, काग, और मैंडकोंके पूजनका भी दिन नियतहै ।

१७–भाईपूजा या भइयादोयज–कार्तिकशुक्लद्वितीयाको सब स्त्रियें अपने २ भाईके घर जाकर भाईके दोनों पैर धोतीहैं फिर माथेपर टीका लगाकर गलेमें माला पहरातीहैं और मिष्टान्नादि भोजन करातीहैं, भाई भी बहनको प्रसन्न करनेके लिये उसको कपड़े गहने रुपये आदि देतेहैं ।

१८–बाला चतुर्दशी या शन्तु–अगहनकी चौदसको यह उत्सव होताहै । उत्सवके दिन सब देशवासी पशुपतिनाथ मन्दिरके दूसरीओर मृगस्थली नामक वनमें जाकर वानरोंके भोजनके चावल और मिष्टान्नादि फेंकतेहैं ।

१९–कार्त्तिककी पूर्णिमा–इस पर्वोत्सवमें एकमास पहिलेसे अनेक स्त्री पुरुष पशुपतिनाथके मन्दिरमें जातेहैं, और पूरे एक मासतक उपवास करतेहैं । सब स्त्रियें केवल मूर्त्तिके धोएहुए जलके अतिरिक्त और कुछ नहीं पीतीं । कार्त्तिककी पूर्णिमाको उपवासके अन्तमें लोग उत्सवादि करतेहैं । उसी दिन पशुपतिनाथका मन्दिर दीपकोंसे सजायाजाताहै और सारी रात नाच गान होताहै । दूसरे दिन जिस पर्वतपर मन्दिरहै, उस कैलाश पर्वतके ऊपर स्त्रियें ब्रह्मभोज कराकर अपने २ घर लौट आतीहैं ।

२०–गणेशचौथ या चतुर्थी–माघमासमें गणेशपूजाके लिये यह उत्सव होताहै । सारेदिन उपवास करके रातमें भोजनादिक करतेहैं ।

२१–वसन्तोत्सव या श्रीपञ्चमी–भारतवर्षके समान होतीहै ।

२२–होली या दोललीला–फागुनकी पूर्णिमाको यह उत्सव होताहै उसदिन राजमहलके सामने चीर या काष्ठादि एकत्र करके उसमें निशाना लगातेहैं, और रातको आग लगादेतेहैं । नेपालियोंमें प्रवादहै कि पुरानेवर्षको जलाकर नए वर्षकी बाट देखनेका यह उत्सवहै ।

२३–माघीपूर्णिमा–माघमासमें नेवार युवक प्रतिदिन पवित्रसलिला बाघमतीके जलमें स्नानकरते हैं । इच्छानुसार प्रत्येक मनुष्य महीनेके पिछले दिन कोई हाथ, कोई पीठ, कोई छाती और कोई २ पैरोंपर दीप बालकर डोलीमें लेटतेहैं और स्नान करनेके घाटसे दर्शनको जातेहैं और स्नानके यात्रीभी उनके पीछे एक २ घड़ा लिये चलतेहैं ।

घड़ेमें एक छेद होताहै, उसमेंसे बूंद २ पानी नीचे गिरताहै, रूप उसको पवित्र समझकर अपने २ शिरपर छिड़कतेजातेहैं । उसदिन बहुतलोग जलती अग्निको लियेहुए मार्गमें जातेहैं । इसकारण नेवारीलोग आंखोंकी रक्षाके लिये नीले रंगका चश्मा लगातेहैं ।

२४–घोड़ा यात्रा–घोड़ोंका एक मेलाहै । चैतकी मावसको राजाकी आज्ञासे सब कर्मचारी अपने २ घोड़े लेकर साधारण परेडके स्थानमें इकट्ठे होते हैं वहां सरजंगबहादुरकी प्रतिमाके पास राजा और ऊंचे कर्मचारी आनकर बैठतेहैं । सब अपने २ घोड़े पर चढकर घुड़दौड़ दिखातेहैं । जिसखंभेके ऊपर जंगबहादुरकी मूर्त्ति स्थापितहै; उस स्तम्भनिर्माणके वार्षिकोत्सवमें एक बड़ा मेला होताहै । गवर्नमेंट कर्म्मचारीलोग पेंडके लिये निर्दिष्टस्थानमें आकर डेरे गाड़तेहैं । उसदिन भी सारी रात आनंद मनाया और जुआ खेलाजाताहै । अन्तिमदिन प्रतिमाके चारोंओर दीपक जलाकर उत्सव समाप्त होता है ।

२५–पिशाच–चतुर्दशी–वत्लेश्वरी वालादेवीका पर्वदिन है । चैत्रकृष्ण द्वादशीको बहुतसे लोग इसमन्दिरमें आकर एकत्र होतेहैं । उसदिन देवीके सन्मुख नरबलि होती है । त्रयोदशीके दिन कन्या और बटुकको भोजन कराया जाताहै । तथा पिशाच चतुर्दशी व्रतकल्प आरंभ होताहै । सारीरात दीपक जलता रहताहै और अग्निकी रखवाली करतेहैं । दूसरे दिन प्रभातकाल वत्लेश्वरी देवीको एक रथमें बिठलाकर नगरमें घुमातेहैं, परिक्रमाके पीछे । मन्दिरके निकट महादेवकी मूर्त्तिके पास लाकर स्थापन करतेहैं । देवीका रथयात्रापर्व बड़ी धूमधामसे समाप्त होताहै ।

२६–पञ्चलिङ्ग भैरवयात्रा–आश्विनशुक्ल पञ्चमीको यह उत्सव आरंभ होताहै । कहते है कि उसदिन महाभैरवजी आकर खड्गनी या काशायनी देवीके संग उस स्थानमें भोगविलास करतेहैं ।

२७–ईल्पा–यात्रा–कान्तिपुर स्थापनके बहुत पहिलेसे देवमाहात्म्यको प्रकाशित करनेके लिये इस उत्सवका आरंभ हुआहै ।

२८–कृष्णयात्रा–देवकीर्त्तिका डंका बजानेके लिये यह उत्सव होताहै । कान्तिपुर स्थापनके पहिलेसे यह प्राचीन उत्सव नैपालमें प्रचलितहै ।

२९–लाखियायात्रा–शाक्यमुनि जब बोधिवृक्षके नीचे ध्यानमें मग्नथे, तब इन्द्र उनका ध्यान भंग करने आया, और उनके योगबलसे परास्त होगया । पीछे ब्रह्मादि देवगण शाक्यबुद्धको आशीर्वाद देने आयेथे । उसहीके स्मरणको यह उत्सव होताहै ।

३०–भैरवीयात्रा और विषकाटी उत्सव–भातगाँओं नगरके अधिष्ठाता भैरवदेवके लिये नेवारजातिका यह उत्सवहै । वैशाखके पहिले दोदिनमें यह उत्सव होताहै । उसके निकटही शक्तिस्वरूपिणी भैरवीमूर्त्तिनेतादेवीका मन्दिरहै । उसदिन भैरव मन्दिरके सामने चकोरकी लकड़ी गाड़कर उसकी पूजा होती है । इसका नाम लिङ्गयात्रा या विषकाटी उत्सव है ।

३१–अमितामिबुद्धका उत्सव–स्वयम्भूनाथके मन्दिरसे अनेक प्रकारकी पवित्र मा-दी और अमितामबुद्धका मुकुट लाकर काठमाण्डमें यह उत्सव मनाया जाताहै। ताके पीछे बांदा नामक बौद्ध ब्राह्मणोंको अन्न और अनेक प्रकारके पदार्थ दिये जाते । पीछे देवोच्छिष्ट नैवेद्यादि मार्गमें फेंक देतेहैं, उस समय आए हुए बौद्ध नेवारी-लोग बुद्धका पवित्र प्रसाद लेतेहैं । फिर बांदालोगोंको भोजन कराके सब लोग एक रंग मार्गमें निकलतेहैं ।

३२–रथयात्रा–इन्द्र यात्रासे यह उत्सव अलगहै । सन १७४० और १७५० ईसवीके बीचमें राजा जयप्रकाशके राज्यकालमें इस उत्सवका आरम्भ हुआ । एक समय एक आठवर्षकी बांदा लड़कीने प्रलाप करते २ कहा कि, मैं कुमारी देवी या शक्तिके अंशसे उत्पन्न हुईहूं । राजाने उसको मिथ्या देवी समझकर नगरसे बाहर निकालदिया, और उसकी सम्पत्ति छीनली । उसही रातमें रानीको वायुरोग हुआ । उसने प्रलाप करते २ कहा कि "मेरे ऊपर देवी बैठी हैं" राजा यह बात सुनकर विस्मित होगया, और सबके सामने बांदाकन्याको देवी कहकर यथोचित पूजासे उसका क्रोध शान्तकिया । राजाने उस कन्याको अपने देशमें लाकर सब सम्पत्ति लौटादी । तबसे प्रत्येक वर्ष इस कन्या-को रथमें बैठालकर सारे नगरमें घुमातेथे, इससेही रथयात्रा उत्सवका आरम्भ हुआहै । जैसे उड़ीसामें जगन्नाथ, बलराम और बीचमें सुभद्रादेवी स्थितहैं, वैसेही यहांभी देवी-मूर्तिकी रक्षाके लिये दो बांदाबालक नियुक्तहैं । यह भैरव या महादेवके पुत्र गणेश और कुमार (स्वामि कार्त्तिक) रूपसे गिनेजाते हैं । यही कुमारी इस देशमें अष्ट मातृका, अथवा बंगालेकी काली देवीवत् पूजीजाती है ।

३३–स्वयम्भूमेला या स्वयम्भूकी उत्पत्तिका दिन–स्वयंभू देवके जन्मदिनमें आश्वि-नकी पूर्णिमाको यह उत्सव होताहै । वर्षाऋतुके आरंभमें ज्येष्ठमाससेही स्वयम्भूनाथ मन्दिरके शिखर आदिको कपड़ेसे ढकदिया जाता है । पर्वके दिन कपड़ा उतारतेहैं । बौद्ध धर्मावलंबियोंका यह बड़ा पवित्र दिनहै, उसदिन नेपालकी सबही भाबरोंमें बुद्ध-देवकी पूजा होतीहै ।

३४–मत्स्येन्द्रनाथकी छोटीयात्रा–काठमाण्डू नगरका एक वार्षिकोत्सवहै । पाटनमें जैसा पद्मपाणिका उत्सव होता है, यहांभी वैसेही समन्तभद्रके लिये एक उत्सव होता है, किन्तु समन्त भद्रका नाम सर्व साधारणमें विशेष व्याप्त न होनेसे यह पर्वोत्सव नेपा-लके अधिष्ठाता मत्स्येन्द्रनाथके नामानुसार मत्स्येन्द्रनाथकी छोटीयात्राके नामसे विख्यात है । चैतकी शुक्लाष्टमीतिथिको उत्सव होताहै । चार दिनतक रहताहै । किन्तु दैवदुर्घट-नासे यदि रथका पहिया टूटजाय या रथयात्रामें कोई विघ्न होजाय तो एक दिन अधिक होजाताहै । पहिले दिन रानीपोखरासे आसनताल, दूसरे दिन आसनतालसे दरबार, तीसरे दिन दरबारसे लाधन ताल और चौथेदिन यहांसे फिर रानीका रथ लौटकर पोख-रामें आताहै ।

३५–रामनवमी उत्सव–श्रीरामचन्द्रके जन्मोपलक्षमें गोर्खालोगोंका उत्सवहै। चैत्रमा सकी शुक्लाष्टमीको सूर्य्यदेव उत्तरायणमें चरण रखतेहैं, गोर्खा लोग उस शुभदिन अपने २ परिवारके सहितपूजा और देवगणको इच्छानुसार द्रव्य चढातेहैं। हिन्दुओं यह उत्सव देखकर बौद्धनेवारियोंने इसी अष्टमीसे एकादशीतक समन्तभद्रके उत्स मनानेको दिन नियत किये हैं।

३६–नारायणपूजा और उत्सव–शिवपुरी पर्वतके पास नीलकण्ठगांवमें और नागार्जु पर्वतके नीचे बालाजी ग्राममें विष्णुपूजाकी बड़ी धूमधाम होतीहै पहिले बड़े नीलकण्ठ यह उत्सव होताथा, जहां एक छोटी पुष्करिणीके मध्यभागमें शेषशय्याशायी नारायण की बहुत बड़ी मूर्तिहै। विष्णु मूर्तिके हाथोंमें शंख, चक्र, गदा, और शालिग्रामहैं गोसाईं थान पर्वत वाले नीलकण्ठ सरोवरके पास महादेवकी बड़ी मूर्ति देखकर नेपाल लोग इन नारायणकी मूर्तिको भी महादेवकी मूर्ति समझते हैं।

बड़े नीलकण्ठ तीर्थमें नेपाल राज्य और राज्य परिवारके सब लोगोंको जानेका निषे है, बौद्ध और हिन्दू इसतीर्थमें जासकतेहैं। लगभग डेढसौवर्षके हुए कि जब नेवारि लोगोंने इस मूर्तिके अनुकरणसे बालाजीमें वाला नीलकण्ठ नामसे नई नारायण मूर्ति स्थापनकी थी। दोनों स्थानोंमें ही हिन्दुओंके विष्णुजी बौद्ध लोगोंसे पूजे जातेहैं। हिन्दू लोग यहां नारायणमूर्तिको पूजतेहैं, और मानसिक द्रव्यादि उपहार देतेहैं, किन्तु बौद्ध लोग पूजाके अन्तमें नागार्जुन पर्वतवाले बौद्ध चैत्यके दर्शनको जातेहैं।

३७–उपरोक्त यात्राओंके अतिरिक्त मछन्दरयात्रा, (३८) शृङ्गवेरयात्रा (३९ लोकेश्वर यात्रा, (४०) रक्तर्पलोकेश्वर यात्रादि बहुतसी यात्राहैं।

स्कन्दपुराणके हिमवद् खण्ड और स्वयम्भू पुराणमें उक्त यात्राके किसी २ अंग वर्णन है।

नेवार जातिके उत्सवोंमें पर्वका काम हो या नहो, किन्तु उत्सवके बहाने नाच, गा मांस भोजन और मद्यपान तो खूबही होताहै।

फागुनमासकी शिव चौदसको नेपाली लोग शिव पूजा और रात्रि जागरणादि कर हैं। सब लोग पशुपति नाथके मन्दिरमें जातेहैं, और बाघमतीमें स्नान करते हैं।

प्रसिद्ध स्थानादि।

नेपालराज्यमें चार नगरहैं किसी समय यह चारों नगरही अलग २ राजाओंकी राज धानी बनेथे। वर्त्तमान राजधानी काठमाण्डू और पुरानी राजधानी कीर्त्तिपुर, पाटन औ भातगांव यह चारों नगर विष्णुमती नदीके किनारे पर हैं। इसके अतिरिक्त और बि प्रसिद्ध स्थानहैं उनमेंसे अधिकांश तीर्थ स्थान या मन्दिरादिके लियेही विख्यात हैं, अ कोई भी कारण उनके विख्यात होनेका नहीं सब गांव हैं, नेपालमें ऐसे जितने स्थान उनमें बड़ा नीलकण्ठगांव बालाजी या छोटा नीलकण्ठग्राम, स्वयम्भूनाथ ग्राम, (यह विष्णुमतीकी खादरमें हैं। हारिग्राम, हय, रुद्रमतीके तटपर) चविलायगांव और बो

नाथ ग्राम (रुद्रमती और बागमती नदीके बीचकी ऊंची भूमिमें) गोकर्ण गांव देव पाटन ग्राम, चरहहर, किरकिड़ नगर (बागमतीकी खादरके ऊपरी भागमें) शङ्कु शहर चाङ्गु नारायण ग्राम, तिम्मि शहर (मनोहरा नदीके निकट) गोदावरी गाँव, (गदो-डीकूल चोपापर्वतकी तलैटीमें) थानकोटशहर, (चन्द्रागिरिपर्वतकी तलैटीमें) इन सबका नामही लिखने योग्यहै ।

काठमाण्डू, कीर्तिपुर, पाटन और भातगांओं यह चारनगर नेवारी राजालोगोंके समय चारोंओर परकोटेसे घिरे हुएथे, और आनेजानेके लिये भीतोंके अनेक स्थानोंमें फाटक बनाये गयेथे । गोरखोंके समयसे यह सब भीतें गिरतीआतीहैं । बहुतसे तोरण बिलकुल गिरगयेहैं, किन्तु नगरकी सीमा इन प्राचीन भीतोंकी बराबरमें अबतक चलीगईहै । उससमयके अनुसार नीचजातिके हिन्दूलोग (भंगी, कसाई, जल्लाद, इत्यादि) किसी-नगरकी सीमाके भीतर नहीं रहसकतेथे । मुसलमानोंके लिये ऐसा विधान नहींहै बहुतसे मुसलमान नगरमेंही रहतेहैं । सब नगरोंके प्रत्येक फाटकसे मिलाहुआ एक २ टोला या मोहल्लाहै । इन सब टोलोंकी म्युनिसीपिल्टी अलग २ हैं । म्युनिसिपिल्टियोंके हाथमें इन मोहल्लोंकी सफाईका भार सौंपागयाहै । इन चारों नगरोंमें एक २ राजमहल या दरबार है, जो नगरोंके बीचों बीचमें बनेहुएहैं । प्रत्येक दरबारके सामने कई खुलेहुए मैदानहैं, इनके मार्गसे महलमें आना जाना होताहै । मैदानोंके चारोंओर बहुतसे मन्दिर हैं । नगरके अतिरिक्त और २ स्थानोंमें भी यह मैदान देखेजातेहैं । काठमाण्डूमें ऐसे बीस मैदानहैं । कचहरी आदि साधारण कार्योंके स्थान ऐसीजगह बनायेगयेहैं । काठ-माण्डू, पाटन और भातगांवके प्रधान २ मन्दिर दरबारोंके निकटहैं । कई मन्दिर दर-बारकी सीमाके भीतरही बनेहैं कीर्तिपुरका दरबार पर्वतके ऊंचे स्थानमें था जो अब नष्ट होगयाहै । उसके निकट टूटे फूटे मन्दिर अब भी हैं । दरबारोंके पीछे राजबाग हाथी घोड़े बांधनेके घर बनेहुएहैं ।

काठमाण्डूनगर तिरछा बसाहुआहै, बौद्धलोग कहतेहैं कि मंजुश्रीने इस नगरको अपने खड्गके आकारमें बसायाहै । हिन्दूलोग कहतेहैं कि भवानीके खड्गाकारमें यह नगर बना हुआहै । खड्ग चाहे जिसकाहो, किन्तु इसका मुष्टिभाग दक्षिणकी ओर बागमती और विष्णुमतीके सङ्गमस्थलमें और उत्तरकी ओर तिम्मिलग्राममें नौकाका आकार कल्पित हुआहै ।

काठमाण्डूसे उत्तर दक्षिणको आधेकोसकी चौड़ाईमें कहीं २ इससे अधिकहै काठ-माण्डूका पुराना नाम मंजुपाटनहै । दरबारके सामने वाले और पुराने कठेलेघरको नेवारी-लोग सदासे ही काठमाण्डू(काठमण्डप)कहतेहैं इससे नगरका नामभी काठमाण्डू होगयाहै सन् १८९६ ईसवीमें राजलक्ष्मीन्द्रसिंहमल्लने काठमंडप बनवायाथा यह कोई देवमन्दिर नहींहै, देशी और परदेशी सन्यासियोंके रहनेके लियेही बनायागयाथा, अबभी इसमें यही लोग ठहरतेहैं, शिवमूर्त्तिभी प्रतिष्ठित होगईहै । काठमाण्डूके पुराने ३२ फाटकोंमेंसे अबभी

कई फाटक टूटीफूटी दशामें खडेहैं। इन बत्तीस फाटकोंसे लगेहुए बत्तीस टोले वैसेके वैसेही हैं, उनमेंसे आसन टोला (शहरके उत्तरांशमें रानी तलाओंके पास) इन्द्रचौक दरवारचौक, काठमाण्डूटोला, टोवाटोला और लघनटोला, आदि मोहल्ले लिखने योग्य हैं।

दरवारचौकमें दरवार या महल है। महलके उत्तरओर तलिजुमन्दिर, दक्षिणमें बसन्तपुर नामक मंत्रणागार, तथा नवीन दरवार (अभ्यर्थना घर) पूर्वमें राज्योद्यान, हस्तिशाला, तवेला, तथा पश्चिममें सिंहद्वार है। महलमें पुराने नेवारियोंके बनाये हुए प्राचीन गठनके घर और क्रमशः बनेहुए नये २ गठनके घर हैं। अब विलायती नमूनेके घरभी बनगये हैं।

काठमाण्डू नगरमें जितने हिन्दू मन्दिरहैं, उनमेंसे तलिजु मन्दिरके अतिरिक्त और कोई मन्दिरभी देखने योग्य नहीं है।

नगरमें साठसे अस्सी हजारतक आदमी रहतेहैं, जिसमें नेवारियोंकी संख्याही अधिक है। नगरके बाहर पूर्वकी ओर टण्डी खेलनामक मठमें कवायदका मयदानहै, बीचमें पत्थरके चबूतरेपर सरजंगबहादुरकी एक गिल्टीकरी हुई मूर्त्तिहै। सन् १८५६ ईसवीमें जंगबहादुरने स्वयंही इस मूर्त्तिको स्थापन कियाथा। बारूद खानेमें जगन्नाथका मन्दिरहै। सन् १८५२ ईसवीमें जंगबहादुरने ही इसको बनवाया था। टण्डीखेलके मार्गमें महाकालका एक बहुत पुराना छोटा मन्दिरहै। नैपालके सब मन्दिरोंकी अपेक्षा यहां पर यात्री अधिक आतेहैं। इसके बीचमें महाकालनामक शिवकी जो मूर्त्ति है, बौद्धलोग उस मूर्त्तिको ही पद्मपाणि बोधिसत्व लिखतेहैं। महाकालके शिरपर और एक छोटी मूर्त्तिबनी हुईहै। हिन्दूलोग इसको क्या कहतेहैं सो तो ज्ञात नहीं (कदाचित् चन्द्रमूर्ति कहते हैं) किन्तु बौद्धलोग उसको पद्मपाणिकी अमिताभ मूर्ति कहतेहैं। जो कुछभी हो इस मन्दिरमें हिन्दू और बौद्ध दोनोंही विभिन्नभावसे पूजा करतेहैं।

नगरके उत्तर पश्चिमकोणमें जो पोखरा बनाया गयाहै उसके बीचमें देवीका मन्दिर है। मन्दिरमें जानेके लिये पश्चिम किनारे एक पुल है। उसके ऊपर घास जमकर बड़ी ही शोभा देती है। पहिले इस सरोवरकी अतुल शोभा थी, किन्तु सर जङ्गबहादुरने चारों-ओर दीवारहाता कराके वह शोभा नष्टकरदी॥

रानीपोखरा सरोवरके पूर्वोत्तरकोणमें नारायणका एक छोटा मन्दिर है। उसके चारों ओर देवदारुका सुन्दर वनहै। जो बड़ा मनोहर है। पासही एक झरना है। इस स्थानका नाम नारायण हटी है। मन्दिरके सामने फतेगंज चौंतरा नामक स्थानहै, जो थोड़ेही दिनोंका बनाहुआ है। पहिले यहां फतेगंग रहतेथे। रानी पोखरेके दक्षिणमें एक पत्थरके हाथीपर राजा प्रतापमल्ल और उनकी रानीकी पथरीली मूर्त्तिहैं। इस रानी-नेही उक्त सरोवरको बनवायाथा।

काठमाण्डू नगरके पश्चिममें स्वयम्भूनाथ पहाडके दक्षिणको ऊंची भूमिपर छावनी

और कवायदका मयदानहै । यह गोलन्दाज सेनाकी छावनीहै । शहरके दक्षिणमें बाग-मती और विष्णुनदीके संगम स्थलपर बागमतीके दक्षिण किनारे सेनापति भीम बहादुर द्वारा निर्म्मित दो तीन सौ गज लम्बा एक पत्थरका पक्का घाट है जो काठमाण्डू कान्तिपुर विनदेशी आदि नामोंसेभी विख्यातहै । सुनाहै कि राजा गुणकामदेवने कलि सम्वत ३८२४ (सन ७२ ईसवी) में यह नगर बसाया था ।

रानी पोखरेके औरभी दक्षिणमें टन्डीखेल या तुडीखेल नामक छावनीहै । जिसके पश्चिममें धराराानामका एक पत्थरका खम्भा है । भीमसेन थापानामक सेनापतिने इसको बनवायाथा इसकी लम्बाई २५० फुटहै बीचमें सीढियें और द्वारहैं । १८५६ ईसवीके भूचालसे यह कई जगह टूट गयाथा, अब फिर मरम्मत होगई है । यहीं पर भीमसेन का बनाया हुआ औरभी एक स्तंभ था, वह सन १८३३ ईसवीके भूचालमें गिरगया । वर्तमान स्तंभका गठन और कारीगरी कोष्टक सुंदर है । काठमाण्डूके आधकोस उत्तरमें अंग्रेजी रेजीडेण्टका बंगला और बाग है ।

काठमाण्डूसे जिस पुलके नीचे होकर बागमती पाटनमें घुसी है, उसके उत्तरांशमें पत्थरके बने एक बड़े कछुएकी पीठपर पत्थरका स्तंभहै स्तंभकी चोटीपर पत्थरके सिंहकी मूर्त्ति बनीहै । यह अद्भुत स्तंभ सेनापति भीमसेन थापाने बनायाथा सेतुकी भी उसही की कीर्त्ति कहतेहैं । पाटन, नैपालके सब नगरोंसे बड़ा है । इस नगरका दूसरा नाम ललितपत्तन है जो काठमाण्डूसे दक्षिण पूर्वको पौनकोसकी दूरीपर बागमतीके दक्षिण और ऊंची भूमि पर है, गोर्खाविजयके पहिले नैपाल जिन तीन राज्योंमें विभक्तथा, यह पाटनभी उनहीमें से एक होकर नेवारकी राजधानी था ।

कीर्त्तिपुर—चंद्रगिरि पर्वतके ऊपर वाले पहाडी मार्गके नीचे जितने गांव और नगर हैं, उनमेंसे थानकोट नगर कुछ विख्यातहै । इसकेही पूर्वमें पर्वतके ऊपर बहुतसे ग्राम हैं, उनमें कीर्त्तिपुरही प्रधान है । पहिले एक स्वाधीन राजाकी राजधानी था, पीछे पाटन राजने इसको अधिकारमें किया । कीर्तिपुर निकटकी समतल भूमिसे चारसौ फुट ऊपर और पाटन तथा काठमाण्डू नगरोंसे डेढकोसकी दूरीपर है किंतु सदासेही इसका दुर्भेद दुर्ग विख्यातहै । सन १७६५ से १७६७ ईसवीतक तीन वर्ष घिरे रहनेके पीछे गोर्खा राज पृथ्वीनारायणने इस नगरको छलसे लिया और विश्वासघातसे नगरमें प्रवेशकर बालक स्त्री वृद्ध इत्यादि सबही नगरवासियोंकी नाक कटवाली जो लोग बांसुरी बजाना जानतेथे उनको इस दंडसे बचा दिया उस समय कादर गैसनी नामक एक पादरी कीर्ति पुरमें था, उसने अपने लिखे नैपालके इतिहासमें राजाके अत्याचारकी बहुतसी बातें कहीं जो उस नाक काटनेके समय हुईथीं और कर्नलपैट्रिकभी इस घट-नाके ३० वर्ष पीछे जब कीर्तिपुरमें गयेथे तब उन्होंने कटीनाकवाले बहुतसे लोगोंको वहां देखाथा । कीर्तिपुरकी जनसंख्या लग भग चारहजारके है । पृथिवीनारायणकी आज्ञासे कीर्तिपुरका नाम बदलकर " नाककाटापुर " रक्खागया । तबसे नगर क्रमशः

ध्वंस होतारहा, मन्दिर और अटारियोंके संस्कारकी कोई चेष्टा नहीं हुई। पुराने फाटक और परकोटा टूटी अवस्थामेंहैं। यहां केवल नेवार लोग रहतेहैं । जल वायु स्वास्थ्य दायकहै। पहाडमें कंठमाला रोग बहुत होताहै। परन्तु कीर्तिपुरमें ऐसा रोगी एकभी नहीं, यहाँका दरबार और आसपासके मन्दिर पश्चिम सीमामें छोटे पर्वतके ऊपर बनेहैं जो कुछ खंडहर बचाहुवाहै, उससे असली आकारका निश्चय करना अत्यन्त कठिनहै। पीलेरंगके पत्थर (अब नेपालमें ऐसा पत्थर नहीं बनता) के बने हुए दो मन्दिर अभी खड़ेहैं। छत गिर गईहै, दीवारों पर घास जम गईहै, किन्तु हाथी सिंहादिकी कई मूर्तियें अबभी रक्षित अवस्थामेंहैं यह मन्दिर सन १५५५ ईसवीमें बनवाये गये। इनमें हर गौरीकी मूर्ति प्रतिष्ठित हुईथी।

यहांके सबही मन्दिर टूटे फूटेहैं केवल जिनका व्यय राजकोषसे दिया जाताहै उनकी ही मरम्मत होतीहै, भैरवका मन्दिर प्रधान मन्दिरहै उत्सवके दिन बहुतसे यात्री आतेहैं मन्दिरमें कोई मनुष्याकार या लिंगरूपी देवप्रतिमा नहींहैं। उन सबके बदले एक कई रंगके पत्थरकी व्याघ्रमूर्तिहै। यही देवमूर्तिकी भाँति पूजी जातीहै। इन मन्दिरोंके पास औरभी दो तीन मन्दिरोंके पुराने खंडहर हैं।

कीर्तिपुरके उत्तरांशमें पर्वतके ऊपर गणेशका एक मन्दिरहै । मन्दिरकी कारीगरी बहुत सुन्दरहै। इसके ऊपर बनेहुए अधिकांश चित्र पौराणिकहैं। सन् १६६५ ईसवीमें जैमी जातिके सारिस्तेने इस मन्दिरको बनवाया। इस तोरणकी कपालीके बीचमें गणेश, बायें मोरपै चढी कुमारी, उसके बांये महिषारोहिणी वाराही, उसके बांये शिवारोहिणी चामुण्डा और गणेशके दक्षिणमें गरुडारोहिणी वैष्णवी, दायें ऐरावतपै चढी इन्द्राणी, उसके दायें सिंहपै चढी महालक्ष्मीजी और गणेशके ऊपर बीचमें भैरव, शिव, उनके बायें हंसपै चढी ब्रह्माणी और दायें वृषारोहिणी रुद्राणी मूर्ति बनीहै। अष्टदेवीकी इस मूर्तिको अष्टमातृका कहतेहैं। दोनों द्वारके कोणमें मध्यबिन्दुयुक्त षट्कोण यंत्रहै और दोनों ओर पक्षयुक्त सिंहकी मूर्तिके नीचे कलश और श्रीवत्स बना हुआहै।

कीर्तिपुरके दक्षिण पूर्वांशमें "चिलनंदव" नामवाला एक बौद्ध मन्दिरहै यद्यपि मन्दिर छोटाहै तौभी ऊपर बौद्धदेव देवियोंके, बौद्धशास्त्रोंकी वातोंके और बौद्ध चिन्हादिके चित्र बने रहनेके कारण मन्दिरका विशेष आदरहै । कीर्तिपुरके पूर्व और काठमाण्डूके एक कोस दक्षिणकी ओर चौवहालनामक गांवहै, उसके डेढकोस पूर्वमें भातगांवहै।

भातगांओं—महादेव पोखराशिखरसे डेढ कोस और काठमाण्डूसे दक्षिण पूर्वमें चार-कोसकी दूरी पर हनुमाननदीके बाएं किनारे भातगांओं नगर बसा है। इसनगरके पूर्व और दक्षिणमें हनुमानमती नदी और उत्तर तथा पश्चिममें कंसावती नदी बहतीहै, यह नगर शंखाकार है। भातगांओं और काठमाण्डूके बीचमें नदी बूदी और खेमीनामक गांवहै। खेमीग्राममें सुवर्णकी चीजें बहुतही अच्छी बनती हैं।

फिरफिङ्ग–यह छोटा सा नगर बागमतीके दक्षिणमें है।

चम्पागाओं–पाटनसे दक्षिणकी ओर जो मार्ग गयाहै, उसके ऊपर यह छोटा सा नगर बसा हुआहै। इसके पासकी पवित्र कुञ्जमें एक बहुत पुराना मन्दिरहै।

हरिसिद्ध–पाटनसे दक्षिण पूर्वको जो मार्ग चलागयाहै। उसके ऊपर यह पुराना गांवहै। इसको छोटा सा नगर भी कहसकतेहैं।

गोदावरी या गदौरी–फूलचोया पर्वतकी तलैटीमें और पाटनसे दक्षिण मार्गके ऊपर यह नगरहै। यह नगर नेपालको वालेहुए बडा पवित्र माना जाताहै। यहां बारह वर्ष पीछे एक झरनेके पास एक महीने तक मेला होताहै। स्थानीय लोगोंमें ऐसा प्रवादहै कि, दक्षिणकी गोदावरी नदीके सङ्ग इस नदीका मेलहै और उसके अनुसारही इस स्थानका नामकरण भी हुआहै। इसके आसपास बहुतसे छोटे २ मन्दिर और सरोवर हैं। गोदावरीका इलायची खेत बहुत बड़ाहै। यहांकी इलायची बेचनेमें बड़ालाभहै। पर्वत शिखरोंके ऊपर, गुलाब, चमेली, जुही, फूल इतने अधिक होतेहैं कि, वैसे नेपालके किसी स्थानमें नहीं होते। फूलोंकी अधिकतासेही इस पर्वतका नाम फूलोचया "फूलचोया" हुआहै। इस पर्वतकी चोटी पर एक छोटा सा पवित्र मन्दिरहै, जहां बहुतसे यात्री जाते हैं। मन्दिरके पास दो मिट्टीके थंभ बनेहैं, उनमें से एकके ऊपर वस्त्र बुननेके यंत्रका चिन्ह और दूसरेमें एक त्रिशूल बना हुआहै।

पशुपतिनाथ–काठमाण्डूसे पूर्वोत्तरकी ओर एक मार्ग निकल कर नवसागर, नन्दीगाओं, हरिगाओं, चवाहिल और देशोपाटन ग्रामके बीचमें होता हुआ पशुपतिनाथ तक चला गयाहै। पशुपतिनाथ तीर्थ काठमाण्डूसे पूर्वोत्तरकी ओर डेढकोसकी दूरीपर है।

चंगुनारायण–पशुपतिनाथसे दो कोसकी दूरीपर यह नगरहै। इसके निकट मनोहरी नदी बहती है। चंगुनारायण चारगांवकी समष्टिहै। प्रत्येक गांवमें चार नामके चार नारायण मन्दिरहैं। मन्दिरके देवताका जो नामहै, उसके अनुसारही ग्रामोंका नाम रक्खा है। एकही दिनमें इन चार नारायण मूर्तियोंका दर्शन करना बहुत पुण्यदायक गिनाजाता है। लोग सैकडों कष्ट उठाकर भी दर्शन करनेको जातेहैं। इन चार मूर्तियोंके नाम यह हैं। चंगुनारायण, विशंकुनारायण, शिखरनारायण, एचंगुनारायण, इन चारों गांवकी सीमा २२ कोस है।

शंकु–चंगुनारायणसे पूर्वोत्तरकी ओर एक कोसकी दूरीपर शंकु नगरहै। जो तीर्थस्थान मानाजाताहै। यहां भी बहुतसे यात्रियोंका समागम होताहै। इस स्थानमें सिद्धिविनायक (भातगाओंमें सूर्य्यविनायक) जो काठमाण्डूके आशुविनायक और चवरनगरके विघ्न विनायक नामसे विख्यातहैं।

गोकर्ण–पशुपतिनाथके पूर्वोत्तरको बागमतीके किनारे विराजमान है जो नेपालके तीर्थोंमें विशेष प्रसिद्ध है। इसके निकट सरजंगबहादुरके यत्नसे शिकारका वन बनाया गया है।

बौधनाथ—पशुपतिनाथ और काठमाण्डूके बीचमें, पशुपतिनाथसे आध कोसकी दूरी[illegible] उत्तरमें बौधनाथ (बुद्धनाथ) नामक गांवहै । एक बडे बौद्ध मन्दिरके चारोंओर चक्र[illegible]कारमें एक गांव बसाहुआ है । मन्दिरकी वेदी गोलाकार है जो ईंटोंकी बनी हुई [illegible] उस वेदीके ऊपर पूर्णगर्भ गुम्बजाकार मन्दिर है । कलश पीतलका बनाहै । वेदी[illegible] ऊपर कुलंगीके बीचमें बोधिसत्वोंकी प्रतिमा है । कुलंगियें १५ इञ्च ऊंची और [illegible] इञ्च चौडीहैं । मन्दिरका व्यास १०० गजहै । भोटिये और तिब्बती बौद्ध इस मन्दिर[illegible] विशेष आदर करतेहैं । जाडेमें उक्त बौद्धलोग इस मन्दिरका दर्शन करने आतेहैं । [illegible] त्रियोंके आनेपर यहां धातु निर्मित बडे २ तावीज कवच, तमगे और कण्ठी आ[illegible] बहुत विकती हैं । भोटियालोगही इनको अधिक पहरतेहैं ।

नीलकण्ठ—शिवपुरी पर्वतकी तलैटीमें नीलकण्ठ सरोवरके किनारे नीलखेत [illegible] नीलकण्ठ नामसे एक गांवहै । यहां भी नीलकण्ठ देवता विराजमान हैं ।

बालाजी—काठमाण्डूसे विष्णुमती पार होकर एक निकुञ्जप्रान्त तथा नागार्जुन पर्व[illegible]तकी तलैटीमें बालाजी गांव है । इस पर्वतके कुछ अंशको सरजंगबहादुरने हातेमें कर[illegible] दियाहै जिसमें सुरक्षित मृगवनहै । पर्वतकी तलैटीमें कुछ झरनेहैं । और इन झरनों[illegible] ऊपर शयन किये हुए महादेवजीकी मूर्ति है । यहांपर नैपालके राजाका एक बाग भी है [illegible]

स्वयम्भूनाथ—काठमाण्डूसे पश्चिममें पौनकोसकी दूरीपर स्वयम्भूनाथ गांवहै । इस गांवमें पर्वतके शिखरपर बौद्धदेवता स्वयम्भूनाथका मन्दिरहै । मन्दिरतक पहुँचनेके लिये चारसौ सीढियां हैं । मन्दिर दोसौ पचास फुट ऊंचेपर है । सीढियोंके नीचे शाक्यसिंहकी एक बहुत बड़ी मूर्तिहै वहींपर तीन फुट ऊंची वेदीपै इन्द्रके वज्रकी एक मूर्ति है ।

भोगमती—कीर्तिपुरके ढाई कोस दक्षिणमें बागमतीके पूर्व किनारेपर यह गांवहै [illegible] इस गांवमें छःमहीने तक मत्स्येन्द्र नाथकी प्रतिमा रथमें ही रहती है । कहतेहैं कि [illegible] नरेन्द्रदेव और उनके आचार्य जब पाटनसे पवित्र जल भरा कलश लिये कपोत पर्वतपर[illegible] लौट रहेथे, तब एक दिन इस गांवमें ठहरेथे ।

नवकोट—नवकोट (नयाकोट) उपत्यकाका प्रधान नगरहै । काठमाण्डूसे पूर्वोत्तरकी ओर ८॥ कोसकी दूरीपर धैवङ्ग या जिनजिनियाके दक्षिण पश्चिममें जो शिखाहै, उसके ऊपर यह नगर बसा हुआहै । इस नगरके पूर्वमें आध कोसकी दूरीपर त्रिशूलगङ्गा और पूर्व तथा दक्षिणमें आधकोसकी दूरीपर ताडी या सूर्यमती नदी बहतीहै । यहां दो दरबार या महलहैं । नैपालकी विख्यात भैरवी देवीका मन्दिर इसही नगरमें है । अंग्रेजोंके संग नैपालका पिछला युद्ध होनेतक नैपालराजका ग्रीष्मावास इसही नगरमें था । सन् १८१३ ईसवीमें नैपालराजने यहांका रहना छोड़कर काठमाण्डूमें ही स्थायी रूपसे रहनेका प्रबन्ध किया और तबसे यहांके महल आदि गिराऊ खड़ेहैं । सुर्यनदीकी ओर

ा शालवन है चैतके महीनेमें, नया कोट उपत्यका और तराईमें जाड़ा बुखार बहुतही
लता है।

देवीघाट—नयाकोट नगरके पौन कोसकी दूरी पर देवीघाट नामक स्थानहै। यहांपर
शूल गंगा और सूर्य्यमती नदीका मेल हुआहै। इस संगम स्थलपर भैरवी देवीका
न्दिरहै वैशाखमासमें बुखार फैलनेके समय इस देवीके मन्दिरमें बहुतसे यात्रियोंका
मागम होताहै। मन्दिरमें कोई प्रतिमा नहीं परन्तु नयेकोटकी भैरवी देवी यहां लाई
ती हैं।

भानुवां—तराई प्रदेशहै। इस नगरसे नेपाल जानेके लिये कोशी नदीको उतरना पड़-
है इस स्थानके पास बहुतसा जंगल और मयदान है अतएव सेना निवासके लिये
च्छा स्थलहै।

रंगोली—मोरङ्गतराईके बीचमें यह स्थान अच्छे जल वायुका गिना जाताहै। यहांका
ल वायु बहुत अच्छाहै। नदीका जलभी निर्मलहै। तराई प्रदेशमें हनूमानगञ्ज, जलेश्वर
हरवा आदि शहरहैं।

नेपाल उपत्यकासे पश्चिमको कुमाऊँमें जाना हो तो नीचे लिखे प्रसिद्ध स्थानोंमें होकर
ाना पड़ताहै।

थानकोट—नेपाल उपत्यकाकी सीमाके अन्तमें है। यह एक छोटा और अच्छा नगरहै।

महेशडोवंग—काठमाण्डूसे दशकोस पश्चिममें है। इस गांवके नीचे त्रिशूल गंगा और
हेराखोला नदीका संगमहै।

भंगकोटधार—काठमाण्डूसे बीसकोस पश्चिममें है। यहां सेनापति भीमसेनके बनाये हुए
ई पाषाण मन्दिरहैं।

गोर्खानगर—धरमड़ी नदीके पूर्व या दक्षिण किनारे पर काठमाण्डूसे २६ कोसकी
रीपर यह नगर बसाहै। हनुमानवनभञ्ज पर्वतके उत्तर प्रतिष्ठितहै जो वर्त्तमान राजवंशकी
ीन राजधानीहै।

टानाहंगु—काठमाण्डूसे ३४ कोसकी दूरीपरहै। इसही नामकी छोटी राजधानी भी
हां है। इसका दरबार गिराऊ खड़ाहै।

पोखरा—सेतुगञ्जनदीके तटपरहै। यह एक छोटे परन्तु स्वाधीन राज्यकी राजधानीहै।
गर बड़ा और बहुतसे लोगोंकी बस्तीकाहै। सब प्रकारका अन्न पायाजाताहै। तांबेकी
ी चीजोंका यहां व्यापार होताहै। एक बड़ा वार्षिक मेलाभी होताहै।

यतहूँ—पोखराके समान यहभी एक छोटे स्वाधीन राज्यकी राजधानी है। यहांभी एक
बारहै।

तानसेन—पोखरेकी नाईं यहभी एक सामन्त राजाकी राजधानी है, पाल्पादेशकी छाव-
ी यहां है जिसमें १००० सेनाके साथ एक काजी साहब रहते हैं। एक नया दरबार

और हाट है। गुर्रंगणके बने सूती वस्त्रका बड़ा भारी कारोबारहै। यहांकी टकसा तांबेका सिक्का बनताहै। काठमाण्डूसे ६१ कोसकी दूरी पर पश्चिममें यह न बसा हुआहै।

पापलानगर—काठमाण्डूसे ६३ कोसकी दूरीपर है। यहां एक दरबार और भैरवना मन्दिरहै।

पेन्टाना—काठमाण्डूसे ६३ कोसकी दूरीपर पश्चिममें है। यहां बारूद और बन्दू कारखाना है। निकटके मुपिनिया-मनभंग गांवसे यहां सोरा बहुत आताहै।

सल्यिाना—पोखरा राज्यके समान स्वाधीन राज्यकी राजधानीहै काठमाण्डूसे सौ दशकोशकी दूरी पर पश्चिममें इरंबलखोलानदीके ऊपरहै। यहां दरबार और न्दिर आदिभी हैं।

जाजुरकोट—एक प्राचीन राजधानी भेड़ी गंगानदीके किनारे बसीहै। यहां दरब और देवी मन्दिर गिराऊ खड़ाहै।

तरिया—भैरंगपर्वत और जिशिबिया पर्वतकी एक शाखाके ऊपर तरियागांव है। भोटियाजाति रहतीहै। इसके निकट एक बड़ी स्वाभाविक गुफा है। उसमें दो सौ त सौ आदमी रह सकते हैं। गोसाईं थान पर्वतके तीर्थ यात्री लोग यहां विश्राम लेते हैं नेवार लोग इसको भीमलपाकु और पहाड़ी लोग "भीमलगुफा" कहते हैं कहते हैं कि, भीमल नामक एक नेवार कार्यीने तिब्बत जीतनेके लिये सेनाका दल भेजाथा, तिब्बत के लामाने ऊपरसे इस गुफाके छतके समान पर्वतखण्डको नीचे सेनाके दबानेको छोड़ा, किन्तु भीमलने हाथसे रोककर उस पर्वत खंडको थामदिया तबसे यह वैसाही बनाहै।

दुमचा—भीमल गुफासे डेढकोसकी दूरीपर दुमचा गांव है। यहां एक पत्थर बना हुआ बुद्ध मन्दिर है। मन्दिरकी मूलकु ऊंगीमें बौद्ध त्रिमूर्ति और शिखर दो छत्र हैं। इस गांवके पास चन्दन वाडी पर्वतके ऊपर लौडी— विनायकका मन्दिरहै लौडी विनायकके मन्दिरमें मूर्तिहीन पत्थरका खंडही गणेशकी प्रतिमा बनाकर पू जाता है। जो कोई इस मन्दिरके दर्शन करने जाता है वह अपने हाथकी लाठी छोड आता है। यदि नहीं छोड़ता तो उस पर गणेशजी क्रोधित होजाते हैं।

इतिहास और पुरातत्त्व।

नेपालका विश्वास योग्य पुराना इतिहास नहीं पाया जाता। पौराणिक ग्रन्थोंमें अथर्व परिशिष्ट, स्कन्द पुराणके नागर खण्ड (१०२ । १६) सह्याद्रिखण्ड (३९।९ रेवाखण्ड, देवीपुराण, गरुडपुराण (८० । २) अरिष्टनेमि पुराणान्तर्गत जैन ह वंश (११ । १२) बृहन्नील तन्त्र, वाराही तंत्र, वराह मिहरकी बृहत संहिता और हे चन्द्रके स्थविरावली चरितमें नेपालका सामान्य वर्णन पाया जाता है। बौद्ध तन्त्र, बौ

म्मू पुराण और स्कन्द पुराणके हिमवत खण्डमें नैपालका कुछ थोड़ा बहुत वर्णनहै। न्तु इस थोड़े बहुत वर्णनसे पूर्ण इतिहास नहीं पायाजाता।

सुनते हैं कि, नैपालके अनेक स्थानोंमें पुराने वंशके धनी लोगोंमें समय समयकी शावली संग्रहीतहै। प्रसिद्ध प्रत्न तत्ववित भगवानलाल इन्द्रलालजीने नैपालमें हनेके समय ऐसी वंशावलीका समाचार पाया था किन्तु दुःखकी बातहै कि वह उसको ग्रह नहीं करसके (१) आज कलकी बनी पार्वतीय वंशावली नामक पुस्तकमें संक्षेप तिसे नेपाल राजगणका संक्षेप वर्णन मिलता है। किसी २ यूरूपियनने इस वंशावलीके धारसे नैपालका इतिहास बनानेकी चेष्टा कीथी (२) किन्तु इन सब आधुनिक न्थोंमें ऐतिहासिक घटना क्रमानुसार नहीं लिखीहैं, उक्त वंशावलीके रचनेवालोंने तत्कालके इतिहासको पूरा करनेकी इच्छासे जो कुछ सुना वही लिख मारा है, हम नहीं हते कि, उन पुस्तकोंमें असली इतिहास नहींहै, किन्तु घोलमेल होनेके कारण उनमेंसे न सा अंश असली और कौन सा मिलावटीहै इसका जानना कठिनही नहीं वरन संभव होगया है। इस कारण जो लोग ऐसी वंशावलीकी सहायतासे नैपालका इतिहास खने बैठेथे, उनमेंसे किसीका भी अभिप्राय सिद्ध नहीं हुआ।

बौद्धपार्वतीयवंशावलीके मतसे, नेमुनीके द्वारा सबसे पहिले गोपालवंशने नैपालके न्तर्गत माता तीर्थमें राज्य प्राप्तकिया। यह वंश ५२१ वर्षतक नैपालमें राज्य करता रा। इसके ५३६ वर्ष पीछे जितेदास्ति नामक किरात वंशमें एकमनुष्यने ज्य पाया महाभारतके युद्धमें इस जितेदास्ति राजाने पाण्डवोंका पक्ष लियाथा और क्षेत्रके युद्धमेंही उसकी मृत्यु हुई (३) यह बात कहांतक ठीकहै सोतो हम नहीं हसकते तथापि ऐसा ज्ञात होताहै कि, जब किसी सभ्यहिन्दू सन्तानका नैपालमें ज्य नहीं था, उससमय नैपालमें ग्वाले गड़रिये तथा मृगपाशील गोपाल और किरात गोंहीकी प्रधानता थी।

नैपालकी तराईसे जो अशोक लिपि निकलीहै, उससे जाना जाताहै कि, नैपालके क्षिणाञ्चलमें एक समय शाक्य राजा राज्य करतेथे और वहीं पर ज्ञानावतार शाक्य बुद्ध पदहुए। वायु और ब्रह्माण्ड पुराणमें शाक्यवंशीय एक राजाका नाम पाया जाताहै,

---

(1) Indian Antiquary Vol. XIII P. 411.

(2) (२) इन सब इतिहासोंमेंसे Franci's Hamilton's king-om of Nepal, Kirkpatrick's Nepal, J. Prinsep's useful bles D. Wright's History of Nepal इतने इतिहास अच्छे हैं।

(3) Some considerations on the History of Nepal by andit Bhagwan Lall Indraji.

इससे अनुमान होताहै कि, बुद्ध देवके पीछे भी शाक्य वंशके ५ । ७ पुरुषोंने यश... किया था । फिर सम्राट् अशोकको राजसिंहासन मिला ।

इसके पीछेही नैपालमें पराक्रमी लिच्छविराज गणका उदय हुआथा । यद्यपि ... वंशावलीमें लिच्छवि नाम नहीं लिखाहै किन्तु हमने प्रसिद्ध प्रत्न तत्त्वविद् भग... लाल इन्द्रजीके यत्नसे इस लोप हुए राजवंशका परिचय भलीभांतिसे पायाहै । नैपा... पुरातत्व संग्रह करनेके लिये नैपालमें जाकर भगवानलालनेही सबसे पहिले २३ पु... शिलालिपियोंका उद्धार किया । उनकी संग्रहीत शिला लिपियोंमें १५ लिच्छवि... गणके समयकी हैं (१) । पीछे बेन्डेल साहबने और भी तीन शिला लिपियोंकी ... प्रकाशितकी थीं (२) इन २८ लिपियोंको आश्रय लेकर डाक्टर ल्फिट और डा... होरनली ने लिच्छविराज गणका धारा वाहिक इतिहास लिखनेकी चेष्टाकी, ... खेदका विषय है कि, मसाला रहने परभी उन्होंने यथार्थ घटना की ओर वैसा ध... नहीं दिया जैसा चाहिये । अब यह दिखलाया जाताहै कि, उन्होंने किस प्रक... लिच्छविराजाओंके समयको निर्णय कियाहै ।

पन्डित भगवान लालने अपनी संग्रहीत १५ शिला लिपियोंसे नैपाल राजगणका ... धारावाहिक नाम और कालनिर्णय कियाहै सो नीचे लिखतेहैं । (३)

१—जयदेव पहिला अनुमान सन १ ई० पंद्रहवीं शिलालिपि ।

२ दूसरा, बारहवां इन ११ पुरुषोंके नाम शिलालिपियोंमें छोड़ दिये गयेहैं ।

(पंद्रहवीं लिपि) ।

१३—वृषदेव अनुमान सन २६० ई० ।

(पंद्रहवीं और पहली शिलालिपि)

१४—शङ्करदेव अनुमान सन २८५ ई० ।

(पहली और पंद्रहवीं शिलालिपि)

१५—धर्मदेव (राज्यवतीके संग विवाह हुआ । अनुमान सन ३०५ ई० ।

(पहली और पंद्रहवीं लिपि)

१६—मानदेव सम्वत् ३८६—४१३ या सन ३२९—३५६ ईसवी ।

(पहली, तीसरी और पंद्रहवीं लिपि)

---

(1) Dr. Bhagwan Lall Indraji's 23 Inscription fro[m] Nepal, translated from Guzrati or by Dr. Buhler.

(2) Bend all journey in Nepal. P. 71–79 इन साहबने औ... आठ शिला लिपियोंको संग्रह किया है जो अभीतक पढी नहीं गई ।

(3) Indian Antiquary. 1884. P. 427.

१७–महादेव अनुमान सन् ३६० ई० ।

१८–वसन्तदेव या वसन्तसेन–सम्वत् ४३५ या सन् ३७८ ई० ।

(चौथी लिपि)

१९–उदयदेव अनुमान सन् ४०० ई० ।

२०–से२७–इन आठ पुरुषोंके नाम पंद्रहवीं शिलालिपिमें छोड़ दिये गयेहैं ।

२८–शिवदेव पहला अनुमान सन् ६१० ई० ।

(पांचवीं लिपि)

महासामन्त अंशुवर्म्मा (पीछे महाराज) ३४–४५ श्रीहर्ष सम्वत् या ६४०–१ से ५१–२सन ई० ।

(छठी, आठवीं लिपि)

२९–पंद्रहवीं लिपिमें छोड़ दिया गयाहै ।

३०–ध्रुवदेव–श्रीहर्ष सम्वत् ४८ या ६५४–५५ सन् ई० ।

(नौमी दशमी लिपि)

विष्णु गुप्त श्रीहर्ष सम्वत् ४६ या सन् ६५४–५५ ई०

(नौमी लिपि)

३१–पंद्रहवीं लिपिमें नाम छोड़ दिया गयाहै । कदाचित् विष्णुगुप्त हो ।

३२–विष्णुगुप्त । (नौमी लिपि)

३३–नरेन्द्रदेव–अनुमान सन ६९० ई० ।

३४–शिवदेव दूसरा । आदित्यसेनाकी कन्या और मौखरिराज भोगवर्म्माकी कन्या ...देवीसे इसका विवाह हुआ श्रीहर्ष सम्वत् ११९–१४५ या सन् ७२५–६–५१–२ ई० ।

(बारह और तेरहवीं लिपि)

३५–जयदेव दूसरा परचक्रकाम । (गौडोड्र कलिङ्ग कोशलाधिप) भगदत्तवंशीय ...देवकी कन्या राज्यमतीसे इसका विवाह हुआथा (श्रीहर्ष सम्वत् १५३ या सन् ५९–६० ई० (पंद्रहवीं लिपि)

उक्त विवरण प्रकाशित होनेके पीछे बन्डल साहबने नैपालसे सम्वत् ३१६ को सु-...त करनेवाली शिवदेवकी एक शिलालिपि प्रकाशकी, इसमें अंशुवर्म्माका नाम हो-...से, प्रत्नतत्त्ववित् फ्लिटसाहबने यह अङ्क गुप्त सम्वत् ज्ञापक अर्थात् ६२५–६ सन् ई०

बताएहैं । इस लिपिकी सहायतासे ही उन्होंने पूर्वोक्त भगवानलाल और डाक्टर बुह
साहबका मत उलटा करदिया ।

डाक्टर फ्लिटसाहबका मत ।

डाक्टर फ्लिटसाहबके मतसे, शिवदेवके समयमें खुदी हुई ३१६ अंक चिन्हि
लिपिही सबसे पुरानीहै । उसका आश्रय लेकर उन्होंने समयानुसार संक्षिप्त राजविव
प्रकाश किया है (१) उसेही संक्षेपसे लिखतेहैं ।

१–मानगृहसे । भट्टारक महाराजलिच्छविकुलकेतु शिवदेव (१ म) इन्होंने म
सामन्त अंशुवर्म्माके उपदेश या अनुरोधसे ३१६ (गुप्त) सम्वत्में अर्थात स
६३५ ईसवीमें एक ताम्रशासन दिया । इस शासनके दूतक स्वामी भोगवर्म्मनहैं (२

२–(कैलासकूट भवनसे) महासामन्त अंशुवर्म्माने ३४ से ४५ हर्ष सम्वत् अ
र्थात् सन् ६४० से ६४९–५० ईसवीतक राज्यकिया ।

३–अंशुवर्म्माके पीछे कैलासकूट भवनसे श्रीजिष्णुगुप्तकी लिपिमें ४८ सम्वत् अ
सन् ६४३ ईसवी और मानगृहके स्वामी ध्रुवदेवका नामहै ।

४–उदयदेवके परपोते, शङ्करदेवके पोते और धर्मदेवके पुत्र मानदेव ३८३ गुप्त सम्
अर्थात् सन ७०५ ईसवीमें राज्य करतेथे ।

५–परम भट्टारक महाराजाधिराज श्रीशिवदेव (दूसरा) ११९ हर्षसम्वत्में अर्थात् स
७२५ ईसवीमें राज्य करतेथे ।

६–पीछे ४१३ गुप्तसम्वत्में अर्थात् सन् ७३२–३३ ईसवीमें मानदेव नामक ए
राजाका नाम पायाजाताहै ।

७–इसके पीछे दूसरे शिवदेवकी एक दूसरी लिपिसे जानाजाताहै कि वह १४३ ह
सम्वत्में अर्थात् सन ७४८ ईसवीमें राज्यशासन करतेथे ।

८–मानगृहके स्वामी श्रीवसन्तसेन ४३५ गुप्तसम्वत्में अर्थात् सन् ७४८ ईसवी
विद्यमानथे ।

९–जयदेव (दूसरा) विरुद परचक्रकाम–१५३ हर्ष सम्वत् या सन् ७५८ ईसवी
इनकी लिपिमें प्राचीन लिच्छविराजगणकी वंशावली वर्णन कीगईहै ।

१०–राजपुत्र विक्रमसेन ५३५ गुप्तसम्वत अर्थात् सन् ८५४ ईसवीमें हुआ
डाक्टर फ्लिटने उपरोक्त राजगणकी पर्य्यालोचना करके निश्चय किया है कि नेपाल
दो स्थानोंमें दो राजवंश राज्य करतेथे, उनमेंसे एक वंश नेपालके प्राचीन लिच्छविरा

---

(1) Dr. Fleet's carpus Inscriptionum Indicarum, Vol
III P. 177. ff.

(२) डाक्टरफ्लिटने इस भोगवर्म्माको महासामन्त अंशुवर्म्माका बहनोई समझाहै ।

श और दूसरा वंश महासामन्त अंशुवर्म्मासे आरंभ है, उन्होंने ऐसे दो विभिन्न राजवंशोंकी सूची प्रकाशकी है–

मानगृहका लिच्छवि या सूर्य्य वंश		कैलासकूट भवनका ठाकुरीवंश	
	१ जयदेव १ म अनुमान ३३०–३५५ सन ई०		
	२ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ — शिलालिपिमें इनपुरुषोंकेनाम नहीं पाये जाते। अनुमान ३५५–६३० सन ई०		
महाराज शिवदेव पहला ६३५ सन ई०	१३ वृषदेव अनुमान ६३० सन ६५५ ई०	अंशुवर्म्मा महासामन्त के पीछे ६३५–६५ ई०	
महाराज ध्रुवदेव ६५३ सन ई०	१४ शंकर देव (१३ श,का पुत्र अनुमान सन ६५५–६८० ई०	जिष्णुगुप्त ६५० सन ई०	
	१५ धर्मदेव (इसी १४ श,का पुत्र) अनुमान सन ६८०–७०४ ई०		उदयदेव अनुमान सन ६७५ ७०० ई०
	१६ मानदेव (१५ श,का पुत्र) सन ७०५ ७३२ ई०		नरेन्द्रदेव (उदयका पुत्र अनुमान सन ७००–७२४
	१७ महीदेव (१६ श, का पुत्र) अनुमान सन ७३३–७५२ ई०		शिवदेव (२ य) नरेन्द्रका पुत्र सन ई० ७२५-७४८
	१८ वसन्तदेव (१६ श,का पुत्र) सन ७५४ ई०		जयदेव (२ य) शिवदेवका पुत्र सन ७५०–७५८ ई०

पीछे डाक्टर होरनलीने उक्त सूची ग्रहणकी थी (१)

ऊपर जो मत लिखे हैं उनमेंसे पिछला मत सबही ग्रहण करतेहैं । किन्तु जहांतक विचार कियाजाताहै उससे ज्ञात होताहै कि यह ठीक नहींहै । पूर्वोक्त शिलालिपियोंके अक्षर, पूर्वापर घटनावली और सामयिक वृत्तान्तसे जानसक्ते हैं कि डाक्टर फ्लिट और डाक्टर होरनलीने बहुतसी छानबीन करके जो सिद्धान्त ठहराया अब उसका सम्पूर्ण परिवर्त्तन करना आवश्यक हुआहै ।

पण्डित भगवानलाल और बुलरसाहबने जो मत प्रकाश कियाहै, उसका कोई २ अंश भ्रान्तिपूर्ण होनेपर भी उसमें इतिहासकी बहुतसी यथार्थ बातें आगईहैं ।

उक्त शिलालिपियोंके अक्षरोंका विचार ।

पण्डित भगवानलाल संग्रहीत प्रथम लिपिसे ही आलोचना करके देखना चाहिये ।

१ म अर्थात् मानदेवकी लिपि ३८६ (अज्ञात) सम्वत्में खोदीगई । पण्डित भगवानलाल और बुलरसाहबने इसकी अक्षरावलीको गुप्त अक्षर कहाहै । किन्तु डाक्टर फिलटसाहबके मतसे खृष्टीय अष्टम शताब्दीके अक्षरहैं । हमारे विचारमें इसकी अक्षरावली पांचवीं ईसवी शताब्दीकीहै। कारण कि ईसवीकी आठवीं शताब्दीमें जो लिपि उत्कीर्ण हुई और उत्तर भारतसे आविष्कृत हुई हैं, उनमें मात्राकी पुष्टिका आरंभ देखाजाता है । इसके अतिरिक्त उससमयके व्यञ्जनयुक्त स्वरादिकी अर्थात् ा, ि, और े आदि स्वर चिन्होंकी अनेक पूर्णता देखीजाती है, किन्तु मानदेवकी लिपि मात्राहीन और इसके स्वर चिन्ह वैसे पक्के नहींहैं । अक्षरविन्यास गुप्तसम्राट् समुद्रगुप्तकी इलाहाबाद लिपिके समानहै । इसमें व्यञ्जनयुक्त स्वर वर्णोंका जो ढालहै, वह सन् २ से ४ ईसवीकी लिपिमालामें ही पाया जाताहै । इसके बहुतसे स्थानोंमें क, ख, त, द, ध, प, इत्यादि अक्षरोंका बनाव सन् २ से ४ ईसवीमें खुदी हुई शिलालिपिमें दिखाई देताहै । केवल इसके न, म, श, प, यह कईएक अक्षर हमने पुरानी लिपिमें नहींपाये, सन् ४ और ५ ईसवीमें खुदी हुई लिपियोंमें पाये गयेहैं । इसके अतिरिक्त अ, आ, इ, इन तीन स्वरोंका जैसा रूपहै, वह केवल सन् २ से लेकर ४ शताब्दीकी खुदीहुई लिपिमें बहुत पता लगानेपर भी नहीं पासके ।

सन् ६ ईसवीमें उतारीहुई मानदेवकी गयावाली लिपि÷ और सन् ७ शताब्दीमें उतारेहुए सुवर्णपत्रसे प्राप्त सम्राट्हर्षवर्द्धनकी लिपिका विचार करनेसे सहजमें जाना जासकताहै कि, उक्त मानदेवकी लिपि, पिछले कहेहुए समयकी लिपिसे कितनी प्राचीनहै ।

---

(1) Journal of the Asiatic Society of Bengal, for 1889, Pt. I. Synchronistic table.

÷ Fleet's corpus inscription indicarum, Vol. III, Plates XLI. and XXXII, B.

अत: मानदेवकी शिलालिपिके अक्षरोंका गठन देखकर सन् ७ या ८ शताब्दीकी लिपि किसीप्रकार नहीं कहसकते, किन्तु सन ४ या ५ शताब्दीकी लिपि मानकर सहजमें ही ग्रहण करसकतेहैं। अतएव मानदेवकी लिपिमें जो अंक पडेहैं, उनको शकाब्द ज्ञापक अंक मानकर ग्रहण करनेसे कोई दोष नहीं होसकता। पण्डित भगवान् लालने उनको विक्रम सम्वत् का अंक मानाहै। किन्तु उत्तर भारतकी निकली पांचवीं ईसवी शताब्दीसे पहली किसीलिपिमें, बिक्रम सम्वत्के बतानेवाले अंक अबतक नहीं पायेजाते। किन्तु सन ईसवीकी पहली, दूसरी, तीसरी तथा चौथी शताब्दीमें खुदीहुई उत्तर भारतकी बहुतसी लिपियोंमें केवल "सम्वत्" नामसे शक सम्वत्का ही प्रमाण पाया जाताहै।-इस कारण हम शक सम्वत्के नामसे ही उसको ग्रहणकरतेहैं।

तीसरी अर्थात् वसन्तदेवकी लिपि है। डाक्टरफ्लिटने इसको सन ईसवीकी आठवीं शताब्दीका मानाहै। किन्तु जिन कारणोंसे हमने मानदेवकी लिपिको प्राचीन समझाहै, उन्हीं कारणसे वर्त्तमान शिलालिपिको भी सन् ईसवीकी पांचवीं व छठवीं शताब्दीके अक्षरवाली अर्थात् ४३५ शकसम्वत्की लिपि कहकर ग्रहण करसकतेहैं।

चौथी अर्थात् ५३५ सम्वत् सूचक लिपि, डाक्टर फ्लिटसाहबके मतसे सन ९ ईसवीकी नवीं शताब्दीकी लिपि है। किन्तु इस लिपिके अक्षरोंका ढाल चौथी और छठीशताब्दीके बीचमें उतारी हुई लिपियोंमें ही देखाजाताहै (१) इस शिलालिपिके किसी पूरे शब्दके अक्षर उस शिलालिपिमें जो ईसवीकी आठ या नवीं शताब्दीमें बनीहै पाये जातेहैं॥ (२)

प्रथमत: शिवदेव और अंशुवर्म्माके समयकी लिपि देखनेसे ई० सातवीं शताब्दीकी लिपिही ज्ञात होती है। किन्तु जब जापानके "होरीउजूमठ" की ताड़पत्रपर लिखी पोथियोंका लेख देखतेहैं तब शिवदेवकी लिपिको ईसुई सातवीं शताब्दीकी लिपि मानलेनेमें सन्देह होताहै। होरीउजूमठकी सब पोथियांही भारतके लेखकद्वारा उत्तर भारतमें लिखी गई और सन ५२० ई० के कुछही पहिले बौद्धाचार्य्य बोधिधर्मद्वारा चीनमें लाईगई हैं। चीन देशसे सन ६०९ ई० में जापान गई। (३)

इस पोथीकी प्रतिलिपि प्रसिद्ध अध्यापक मैक्समूलर साहबने प्रकाशित कीहै और

---

(1) Dr. Buhler's gundriss (Indischen Palxographaie) IV tafel.

(2) इन लिपियोंको देखो The inscription of Gopala (Cunningham's Mahabodhi) and Devapala (Ind. Ant. XVII, P. 310.)

(3) Professer Max Muller's Latter, in the transactions of the 6th International Congress of orientalists held at Leiden, P. P. 124-128.

उसको देखकर डाक्टर बुलरने इस पोथीकी लिखावटको सन् छठी ईसुई शताब्दीके प्रथम भागकी लिपि माना है (१) इस पोथीकी लिखावट और शिवदेव तथा अंशुवर्म्माके समयकी लिखावटमें बहुत कुछ समानता है । दोनों अक्षरोंकी बनावट और भाषामें बहुतसा मेल होनेपर भी शिवदेवकी शिलालिपिमें बहुत प्राचीनता पाई जातीहै । डाक्टर बुलरने बहुत कुछ विचार करनेके पीछे निश्चय किया है कि शिलालिपिके अक्षरोंकी बनावट ऐसीहै, जैसी राजकीय कागजपत्रोंपर लिखे जानेसे बहुत पहिले विद्वानोंकी लिखावट समझी जातीथी ।

लिखने पढनेमें पहिले जिसका व्यवहार होताथा, राजकीय खुदी हुई लिखावटमें भी बहुधा उसहीका व्यवहार हुआ करताहै । किन्तु प्रश्न होताहै कि यदि विद्वानोंमें पुस्तकरचनाके समय किन्हीं विशेष अक्षरोंका व्यवहार हो तो उस समयकी राजलिपियोंमेंभी वही लिखावट क्यों नहीं पाईजाती प्राचीन शिलालिपियोंको देखनेसे जान पडताहै कि राजकीय शासनादिको राजसभाके प्रधान २ पण्डित लिखतेथे यहांतक कि ताम्रशासनके किसी २ श्लोकको राजालोग स्वयं भी बनाकर अपनी कविताशक्तिका परिचय देतेथे अब यह समझमें नहीं आता कि ऐसे अवसरपर राजालोग सामयिक पुस्तकोंके अक्षरोंकी बनावट न लेकर पुराने अक्षरोंकी बनावट क्यों लेंगे; इससे ज्ञात होताहै कि राष्ट्रकूट राजदद प्रशान्तरागके हस्ताक्षर देखकर डाक्टर बुलरने लिखाहै ।

अधिक संभवहै कि, सन ईसवीकी छठी शताब्दीके प्रथम भागमें भी उत्तर भारतके आधे अंशमें दो प्रकारके हस्ताक्षर प्रचलितथे (२)

पहिलेही लिखचुके हैं कि, शिवदेवकी लिपिको डाक्टर फ्लिटने मानदेवसे बहुत पहिलेकी मानाहै । किन्तु खुदी हुई लिपिके धारावाहिक कालानुसारी अक्षरोंका विचार करनेसे, मानदेवकी लिपि बहुत पुरानी जान पडतीहै । ऐसे अवसरमें कौनसी बात ग्रहण करनी चाहिये ? यदि हम सातवीं शताब्दीमें अर्थात् ६३५–६५० ईसवींमें शिवदेव और महासामन्त अंशुवर्म्माका यथार्थ समय मानें, तो सामयिक इतिहासके साथ विरोध आपड़ैगा । ऐसे स्थलमें यदि बुलरसाहबके इस मतको कि, एक समयमें दो प्रकारकी वर्णमाला प्रचलित थी मानकर शिवदेव और उस महासामन्तको सन ५ ईसवीका मानलें तो किसी प्रकारका बखेड़ा नहीं रहता ।

उक्त लिच्छविराजके समयकी खुदी हुई दो लिपियोंकी प्रतिलिपि बेन्डल साहबने प्रकाश की है, वे दोनों एक समयकी हैं, तथापि अक्षरोंमें कुछ अन्तर पाया जाताहै । पहलीके स्वर चिन्होंकी बनावट जैसे ('ा' 'ि') देखनेसेही दूसरेकी अपेक्षा नई अर्थात् छठी ईसवी शताब्दीके पीछेकी जानपड़तीहै । किन्तु दूसरी लिपिके अपुष्ट स्वर-

---

(1) Anecdota Oxoniensia Vol. I, Pt. III, P. 64.

(2) Dr. Buhler's Remarks on the Hariuzi Palmleat M. S. S. (Anecoxon Vol. 1, Pt. III, P. 65.)

चिन्होंकी बनावट (ि) और (ा) देखनेसे इसकी प्राचीनतामें वैसा सन्देह नहीं रहता। पंडित भगवान्‌लालकी प्रकाशित पांचवीं शिलालिपि भी उक्त शिवदेवकी दी हुई है, तथापि इसका 'आ' देखनेसे बेन्डल साहबकी प्रकाशित लिपिके समयकी नहीं जानपड़ती। इसही प्रकार पंडित भगवान्‌लालकी सातवीं लिपिका आकार (ा) और बेन्डल साहबकी पहली लिपिका (ा) मिलाकर देखनेसे पिछला (ा) बहुत शताब्दी पीछेका माना जायगा। पंडित भगवान्‌लालकी पहिली लिपिका आकार उनकी सातवीं लिपिमें कुछ २ पुष्ट हुआहै इस ही कारणसे पंडित जीने सातवीं लिपिको पहिली लिपिसे बहुत पीछेकी बताया है। किन्तु बेन्डल साहबकी प्रकाशित पहली और दूसरी शिलालिपिके और पंडित भगवानलालकी ५-६-७-८ वीं शिलालिपिके अक्षरोंका विचार करनेसे आठवीं सबसे पीछेकी खोदी हुई होने परभी सबसे पुरानी ज्ञात होतीहै आठवीं लिपिकी तीसरी पंक्तिके "वार्तेन" शब्दका "ता" और पहली लिपिके द्वितीयांशकी सोलहवीं पंक्तिका "या" मिलाकर देखनेसे कुछभी भेद ज्ञात नहीं होता। किन्तु प्रथम संख्याकी वर्णावली मात्रा शून्य है और ५ से ८ में कुछ मात्रा आरम्भ हुई है। इधर "होरि वजीकी" पोथीमें स्पष्ट मात्रा होनेसे पांचवींसे आठवीं लिपि सन ईसवीकी पांचवीं शताब्दीके किसी समयमें खोदी गई हैं इसको मान लेनेसे कोई आपत्ति नहीं रहती। नवीं दसवीं ग्यारहवीं इन तीनका वर्णन पाठ करनेसे पांचवींसे पीछेका ही ज्ञात होताहै बारहवींसे लेकर पंद्रहवीं शिला लिपिकी अक्षरावलीके सम्बन्धमें जो राय, पुरा वृत्त जानने वालोंने प्रकाशित कीहै, उसके संग हमारा विशेष मत भेद नहीं है। तथापि इन शिला-लिपियोंमें लिखे हुए दूसरे शिवदेव और दूसरे जयदेवके राज्यकाल सम्बन्धमें, हमको जो संदेहहै सो आगे लिखेंगे।

पंडित भगवान्‌लाल, डाक्टर बुलर और डाक्टर फ्लिट इन सबने ही बारहवीं लिपिके अंकको '११९' पढाहै। किन्तु उन्होंने बीचके अक्षरको दशका अंक कैसे माना सो समझमें नहीं आता। नैपाल और उत्तर भारतकी खुदी लिपियोंके संख्या वाचक अक्षरादि निर्णय करनेके लिये जितनी सूची हैं उनमें भली भाँति मिलाकर देखनेसे उक्त मध्य अक्षरको (१०) नहीं कहा जासकता, किन्तु (१०) की जगह (४०) अंक ज्ञात होताहै, इसके अनुसार इस लिपिके अंक १४९ पढे जासकते हैं।

इसही प्रकार पन्द्रहवीं लिपिके संख्या सूचक अंकोंको उक्त साहबोंने १५३ पढाहै। किन्तु इस संख्याके बतानेवाले तीन अक्षरोंमें पिछला अक्षर और बारहवीं लिपिके पिछले अक्षर एकसे हैं। अब प्रश्न यह है कि, एकको उन्होंने (३) और दूसरेको (९) क्यों पढा ! संभव है कि, दोनोंका पिछला अंक (९) हो इस कारणसे पन्द्रहवीं लिपिके संख्या अक्षरोंको (१५९) समझना चाहिये। ×

× गुप्तराजवंश शब्दके पिछले अंशमें इससे पहिले जो लिच्छविराजगणकी तारीख सनके साथ लिखी है, बहुतसी छानबीन करनेसे अब उसमें भी बहुतसी भूलें दिखाई देती हैं।

धारावाहिक इतिहास ।

पंडित भगवान् लालके संग्रहीत लिच्छविराजजयदेव परचक्रकामके शिलापट्टमें निम्न लिखित वंशावली हैं—

लिच्छवि (सूर्य्यवंश)
|
सुपुष्प (पुष्पपुरमें वास)
|
(फिर यथाक्रमसे २३ पुरुष पीछे)
|
जयदेव (१ नैपालका राजा)
|
इसवंशके ६११ राजा ।
:
वृषदेव ।
|
शंकरदेव ।
|
धर्मदेव ।
|
मानदेव (३८६–४१३ शकाब्द ।
:
महीदेव ।
|
वसन्तदेव (४३५ शकाब्द)
|
उदयदेव (१)
|
नरेन्द्रदेव ।
|
शिवदेव दूसरा (१४३–१४९ अज्ञात सम्वत ।
|
जयदेव–परचक्रकाम (१५९ अज्ञात सम्वत)

---

(१) पंडित भगवान्लालजीने जो पाठ उद्धार किया है, उसके अनुसार उदयदेवके पीछे १३ राजा हुए और उनके पीछे नरेन्द्रदेव राजा हुआ किन्तु इस अंशका पाठ ठीक नहीं है। शिलालिपिसे ठीक २ यह बात नहीं जानी जाती कि, उदयदेवके पीछे यथार्थमें कौन राजा हुआ। आगेको इस वंशमें नरेन्द्रदेव राजा हुआ था।

नेपाल राजलिच्छवि राजगणके समयकी जितनी शिलालिपि प्रकाशित हुई हैं, उनमेंसे पन्द्रहवीं शिलालिपिमें जो वंशावली लिखीहै, वह बारा वाहिक है, और कुछ २ पूर्णभीहै। उक्त वंशावलीके आश्रयसे ही हम नेपालका प्राचीन और प्रमाणिक संक्षित इतिहास लिखते हैं।

यद्यपि नेपालकी पार्वतीय वंशावली विश्वासके योग्य नहीं, व उसमें बहुतसी बातें इधर उधरकी हैं, तौभी उसमें बहुतसी यथार्थ व ऐतिहासिक बातें भरी हुई हैं, इस बातको पंडित भगवान्लाल आदि सबही विद्वानोंने स्वीकार कियाहै। इस वंशावलीके एक स्थानमें लिखाहै–

सूर्य्य वंशीय राजा विश्वदेव वर्म्माने ठाकुर वंशीय अंशुवर्म्माको अपनी कन्या अर्पण की। इस राजाके समयमें विक्रमादित्य नेपालमें आये और अपना सम्वत् चलाया।

अंशुवर्म्माभी राजा हुआथा। उसने मध्यलखु (कैलाशकूट) नामक स्थानमें अपनी राजधानी बनाईथी। उसके समयमें त्रिभुवर्म्माने सात सोतेवाली एक नहर तइयार करके उसके निकट एक खुदा हुआ शिला पट्ट (१) स्थापन किया (२)

पंडित भगवान्लाल और डाक्टर बुलर साहबने कहाहै कि, 'अंशुवर्म्माके समय विक्रमादित्यके नेपाल आनेकी बात सम्पूर्णत: मिथ्याहै। ज्ञात होताहै कि- श्रीहर्षदेवके विजय उत्सवमें उसका सम्वत् नेपालमें ग्रहण कियागया होगा वही क्षीण स्मरण इस उलटी पुलटी वंशावलीमें भ्रमसे दिखायागयाहै। (३)

इसकेही अनुगामी होकर डाक्टर फ्लिट साहबने भी अंशुवर्म्माके समयमें खुदी हुई शिलालिपियोंके अङ्क श्रीहर्ष सम्वत् ज्ञापक लिखेहैं।

अब प्रश्न यहहै कि, सम्राट् हर्षदेव क्या नेपालमें गयेथे? और वहां जाकर क्या उन्होंने अपना सम्वत् चलायाथा? इस विषयमें कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहींहै। बाणभट्टके हर्षचरित, चीनपरिव्राजक हिउ एन सियाङ्गके भ्रमण वृत्तान्त, मतोयान–लिनके विवरण और राजा हर्ष वर्द्धनकी लिपियोंमें जो उसने स्वयम् खुदवाई थीं, हर्षके द्वारा नेपाल विजय और हर्ष सम्वत प्रचारकी कोई बात कहीं नहीं लिखी। इस बातका अब तक कोई प्रमाण नहीं मिलता कि, किसी समय हर्षदेवने नेपालको जीताथा अतएव हर्षदेवका नेपालमें जाकर अपना सम्वत् चलाना निरा गप्पही है।

यदि हम अंशुवर्म्माकी खुदवाई हुई लिपिके अंकोंको श्रीहर्ष सम्वत् सूचक मानलें तो सामयिक वर्णनके साथ विरोध होताहै। अंशुवर्म्माके प्रसंगमें जो–३४–३९–४४ या–४५–अङ्कोंके चिन्ह हैं, उनको श्रीहर्ष सम्वत्के अङ्क मानलें तो सन ६४० से सन

---

(१) पं० भगवान् लाल इन्द्रजीकी प्रकाशित आठवीं शिलालिपि।

(2) Wright's History of Nepal, and Ind. Ant. 1884. P. 413.

(3) Indian Antiquary 1881, P. 424.

६५१ इसवी होतेहैं । किन्तु हिउयन सियाङ्ग सन् ६३७ ईसवीकी ५ फरवरीको नेपालमें गयाथा । (१) उसने नेपालको देखकर लिखाथा कि, "अंशुवर्म्मा नामक यहां भी एक राजा था, जो स्वयं विद्वान् था और विद्वानोंका आदर भी करताथा । उसने आपभी शब्द विद्याके संबंधमें पुस्तक बनाई थीं, नेपालमें उसकी कीर्त्ति फैली हुई है (२)।"

चीनी सन्यासीके उक्त विवरणको पढ़कर उपरोक्त पंडितोंने निश्चय कियाहै कि, 'चीनी सन्यासी' नेपालमें गयाही नहीं । वृजिकी राजधानी तक गयाथा और वहां लोगोंसे जो कुछ सुना वही लिखदियाहै । क्योंकि उससमय तक अंशुवर्म्माकी मृत्यु नहीं हुईथी ।

उक्त समालोचना ठीक नहीं है । क्योंकि, "जिस पुरुषका यश नेपालमें सर्वत्र फैला हुआहो," उसकी मृत्युका समाचार जाननेमें भूल होना असम्भव है । चीनी सन्यासीने अंशुवर्म्माके बनाये ग्रंथोंकाभी परिचय दियाहै । अतएव उसकी बातको निर्मूल नहीं समझ सकते । निःसन्देह चीनी सन्यासीके नेपाल आनेसे पहिले ही अंशुवर्म्माकी मृत्यु होगई थी । इसकारण अंशुवर्म्माकी खोदित लिपिके अङ्कोंको श्रीहर्ष सम्वत्के अङ्क नहीं मानसकते । उनको गुप्त सम्वत्के अङ्क मानसकते हैं । इसके माननेका दूसरा कारणहै ।

"गुप्त सम्राटोंके संग लिच्छविराजगणका घनिष्ट सम्बंध था, इसमें कुछभी संदेह नहीं है । डाक्टर फ्लिटने स्पष्टही लिख दियाहै कि ' गुप्त सम्वतही यथार्थमें लिच्छवि सम्वत्है । आदि गुप्त राजाओंने लिच्छवि राजवंशसे इस सम्वत्को ग्रहण कियाथा, इस बातमें कुछभी तर्क नहीं उठ सकता ।

हम जानतेहैं कि, लिच्छिविराजगणमें साधारण तंत्र विलुप्त और राजतंत्रके आरंभसे अथवा पहिले जयदेवके राज्यारंभसेही उक्त सम्वत् आरंभ हुआहै (३)"

---

(1) Cunninghams Ancient geography of India,

(2) Beab's Records of Western World, Vol. II, P. 81.

(3) " And no objection could be taken by the early Gupta Kings to the adoption of the era of a royal house, in their connection with which they took special pride, I think, therefore, that in all probability the so called Gupta era is Lichchavi era, dating either from a time when the republican or tribal constitution of the Lichchavis was abolished in favour of a monarchy ; or from the commencement of the reign of Jayadeva I., as the founder of a royal house in a branch of the tribe that had settled in Nepal." (Fleet's carpus Inscriptionum Indicarum, Vol. III. Intro. P 136.)

यद्यपि गुप्तराजने लिच्छवि वंशके साथ सम्बंधसूत्रमें बंधनेसे अपना गौरव समझा, तथापि लिच्छविराजके सम्वत्‌को उनका ग्रहण करलेना अनुमानही मात्रहै, प्रमाणिक बात नहीं। परन्तु यह बात संभव जान पड़तीहै कि, लिच्छविलोग गुप्त संवत्‌का व्यवहार करतेथे।

पार्वतीयवंशावलीमें अंशुवर्म्मासे कुछ पहिले विक्रमादित्यके नैपालआनेका जो प्रसंग है, उसको सम्पूर्णत: अलीक नहीं कहा जासकता।

भारतवर्षमें कई विक्रमादित्योंने राज्य किया था। उनमेंसे जो नैपाल गयेथे, वह गुप्त सम्वत्‌के चलानेवाले प्रथम गुप्त सम्राट् हुए। उनका नाम चन्द्रगुप्तविक्रमादित्य था। उन्होंने (नैपालके) लिच्छविराजकी कन्या कुमारदेवीका पाणिग्रहण किया, इस सम्बंधसे गुप्त सम्राट्‌ने अपनेको विशेष सन्मानित समझा, कदाचित् इसही कारणसे उसके सिक्केमें "लिच्छवय" यह गौरव स्पर्शी शब्द छपा हुआथा। उक्त लिच्छविराजकी बेटी कुमारदेवीके गर्भसेही गुप्त सम्राट् समुद्रगुप्तने जन्म लिया।

इस गुप्तसम्राट्‌ने अपने बाहुबलसे नैपालके समस्त सीमान्त राजाओंको अपने वशमें किया था, यह बात इलाहाबाद वाली लिपिसे (जो समुद्र गुप्तनेही बनवाईथी) स्पष्ट विदित है। किन्तु नैपालके लिच्छविराजाओंने किस समय गुप्तराजाओंको पराजित किया था, इस बातका अबतक कोई प्रमाणभी नहीं मिला इससे ज्ञात होताहै कि, समुद्रगुप्तके पिता और लिच्छविराजके जामाता चन्द्रगुप्तविक्रमादित्यसे नैपालमें (गुप्त) सम्वत् चलाथा, पार्वतीयवंशावलीमें इसका ही कुछ २ आभास पाया जाताहै।

इस वंशावलीमें लिखाहै कि, 'अंशुवर्म्माके श्वशुर विश्वदेव जब नैपालमें राजाथे, उस समय विक्रमादित्यने नैपाल जाकर अपना सम्वत चलाया था। इस अंशको इस प्रकार पढ़नेसे कोई ऐतिहासिक झंझट नहीं रहता।

"चन्द्रगुप्तविक्रमादित्यके श्वसुर वृषदेव (।) जब नैपालके राजाथे (अंशुवर्म्माको तबभी ऊंचा राजपद नहीं मिलाथा) उस समय चन्द्रगुप्तविक्रमादित्यने नैपाल जाकर कुमार देवीका पाणिग्रहण किया, और अपना सम्वत् चलाया।"

प्रथम गुप्त सम्राट् चन्द्रगुप्त विक्रमादित्यने सन् ३१९–२०ई०से सन ३४७–४८ ईसवी तक राज्य किया। अतएव इसही समय वह नैपालमें गये होंगे।

लिच्छविराजमानदेवकी शिलालिपिसे जाना जासकताहै कि, वह शाके ३३६ (सन ४६४ ईसवीमें) राज्य करतेथे। वृषदेव उनके परदादा थे। तीन पुरुषोंमें एक शताब्दीका समय रखनेसे, जिस समय नैपालमें गुप्तसम्राट् आयेथे, उस समयमें ही हम वृषदेवको लिच्छविराज्यकी गद्दीपर विराजमान देखतेहैं। इससे ज्ञात होताहै कि, पार्वतीय वंशावलीके रचयिताने भूलसे वृषदेवकी जगह विश्वदेव, पाठ रखदिया होगा।

वृषदेवके पीछे ३५ गुप्त सम्वत्‌में अर्थात् सन ३५४–५ ईसवीमें महासामन्त अंशुवर्म्माका उदय हुआ। पंडित भगवानलाल आदि उपरोक्त विद्वानोंने लिखाहै कि, पहिले २ वह राजाकी उपाधिको पानेके लिये अत्यन्त उत्कंठितथा।

४८ वें अङ्कसे वह 'महाराजाधिराज' की उपाधिसे भूषित हुआ है, किन्तु हमारा विश्वासहै कि, वह अपनी इच्छासे राज्योपाधि पानेके लिये नहीं ललचाया ।

यद्यपि वह शौर्य्य वीर्य्य पराक्रम और विद्याबुद्धिमें प्रधान गिनाजाता था । तथापि उसने लिच्छविराजाओंका तिरस्कार करके कभी राज्योपाधि पानेकी इच्छा नहीं की । उसने स्वयं जो शिलालिपि खुदवाई उसमें राज्योपाधि नहीं है । वह महासामन्त उपाधिसे सन्तुष्ट था । पहिले शिवदेवकी शिलालिपिसे जाना जाताहै कि, लिच्छविराजने महासामन्त अंशुवर्म्मोके पराक्रमसे अपनी राजलक्ष्मीकी रक्षा कीथी । सम्भव है कि, जिस समय वह अपना राज मन्दिर छोड़कर दूरदेशमें युद्धकरनेके लिये गयेथे, उसही समय वह ४८ अंकवाली जिष्णुगुप्तकी लिपि बनाई गई होगी ।

पुराने और नये भारतीय सामन्त गण अपने २ अधिकारमें राजा उपाधिसे भूषित देखे जातेहैं और यहभी असंभव नहीं है कि, महासामन्त अंशुवर्म्माभी, वैसेही अपने अधिकारमें जिष्णु गुप्त इत्यादि अधीनके मनुष्योंद्वारा राजाधिराज नामसे विख्यात हुआ हो और ऐसी रा-ोपाधि देखकर लिच्छविराजाओंकी अधीनताको छोड़कर उसका एक स्वाधीन राजा बनजानाभी यथार्थ नहीं ज्ञात होता । जैसे नेपालके अधीनमें राजोपाधि धारी अबभी बहुतसे सामन्तहैं लिच्छविराजाओंके समयमें भी वैसेही थे । तथापि यह सम्भव होसकताहै कि, अंशुवर्म्मोने सर्व प्रधान सामन्तपद पायकर फिर लिच्छविराजाओंसे राजोचित महासन्मान पाया हो ।

उसके ऐश्वर्य्यकालमें ध्रुवदेव लिच्छविराजधानी मानगृहमें विराजमान था और गुप्त सम्राट् समुद्र गुप्तने सब भारतवर्षमें अपना अधिकार फैलाया था । जैसे मालव राज महासेन गुप्तकी बहिन महासेन गुप्ताके संग स्थाण्वीश्वराधिप आदित्य वर्द्धनका विवाह हुआ (१) कदाचित् वैसेही समुद्र गुप्तके पुत्र दूसरे चन्द्रगुप्त विक्रमाङ्कके संग ध्रुवदेवकी भगिनी ध्रुवदेवीका विवाह हुआ होता (२)

ध्रुवदेव ४६ (गुप्त) सम्वत्में अर्थात् सन् ३६७–८ईसवीमें राज सिंहासन पर विराजमान था । किन्तु उसने कितने दिन तक राज्य किया था, इस बातका ठीक २ पता नहीं लगता । उसके समयमें खुदी हुई जिष्णु गुप्तकी शिलालिपिको देखकर कोई २ समझतेहैं कि, उक्त सम्वत्से पहिलेही महासामन्त अंशुवर्म्माकी मृत्यु होगई थी, किन्तु वास्तवमें उस समय तक उसकी मृत्यु नहीं हुई थी । ३१६ (शक) सम्वत्में अर्थात सन् ३८४ ईसवीमें वह विद्यमान था, यह बात वेन्डल साहबकी प्रकाशित लिच्छविराज शिवदेवकी शिलालिपिसे जानीजाती है ।

---

(1) Epigraphica Indica, Vol. I. P. 68,73.

(२) दूसरे चन्द्रगुप्त विक्रमादित्यने सन् ४००–४१३ ई०में राज्य किया । ज्ञात होता है कि राज्याभिषेकके बहुत पहिले उसके संग ध्रुवदेवीका विवाह होगया था ।

महासामन्त अंशुवर्म्मा धुवदेव और शिवदेव दोनोंकेही राज्यकालमें विद्यमानथा। उसके यत्नसे नैपालकी बड़ी उन्नति हुईथी। इस समयमें नैपालके लिच्छविराजालोग बौद्ध और सनातन धर्मियोंको समान भावसे देखतेथे। अंशुवर्म्माके समयकी शिलालिपिसे जानाजाताहै कि, वह जैसी भक्ति हिन्दू धर्म्ममें करतेथे, वैसीही बौद्धोंमें रखतेथे, ऐसा ज्ञात होताहै कि, नैपालमें गुप्त सम्वत् बहुत दिन तक नहीं रहे। क्योंकि शिवदेवके समयसे फिर पहिले चले हुए (शक) सम्वत्का प्रचार देखाजाताहै।

धुवदेव और शिवदेवके पीछे समयानुसार फिर मानदेवका नाम मिलताहै। यह तो नहीं कहसकते कि, उसके साथ धुवदेव और शिवदेवका कुछ सम्बंधथा, किन्तु शिलालिपियोंसे केवल इतना ज्ञात होताहै कि, वह सबही लिच्छविवंशके थे शिवदेवके पीछे धर्मदेव और उसके पीछे उसका पुत्र मानदेव राजा हुआ।

मानदेवनें ३८६ से लेकर ४१३ शक (सन४६४ से ४८१ ईसवी) तक अटल राज्य किया। वह अत्यन्त मातृभक्त और महावीर गिना जाताथा। उसके समयमें महासामन्त अंशुवर्म्माके वंशवाले ठाकुरी राजाओंने लिच्छविराजकी अधीनता न मानकर स्वाधीनता प्राप्त करनेकी चेष्टा की थी। मानदेवके शिलापट्टमें लिखा हुआहै कि, (१) उसने पहिले पूर्वकी ओर यात्राकी, वहांके समस्त सामन्तोंको वशीभूत करके राजा (मानदेव) निडर सिंहके समान पश्चिम देशकी ओर बढा। वहांके सामन्तका बुरा व्यवहार सुनकर उसने बड़े गर्वसे कहाथा कि, यदि वह मेरी आज्ञामें नहीं चलेगा तो (निश्चयही) मेरे विक्रम प्रभावसे पराजित होगा। (२) उक्त पश्चिमवासी सामन्त कदाचित् महासामन्त अंशुवर्म्माके वंशका ही कोई होगा।

इस मानदेवके राज्यकालमें जयवर्म्मा नामक एक पुरुषने वर्त्तमान पशुपतिनाथके मन्दिरमें जयेश्वर नामक लिङ्ग स्थापन किया था। वह लिङ्ग नष्ट होगया उस स्थानमें अब मानदेवके पिता शंकरदेवका स्थापित किया हुआ १४ हाथ ऊंचा एक त्रिशूल विद्यमान है।

---

(१) प्रायात् पूर्वपथेन तत्र च शठा ये पूर्व देशाश्रयाः
सामन्ताः प्रणिपातबन्धुरशिरः प्रभ्रष्टमौलिस्रजः ॥
तानाज्ञावशवर्त्तिनो नरपतिः संस्थाप्य तस्मात् पुनः।
निर्भीसिंह इवाकुलोत्कटसटः पश्चाद्भवञ्जग्मिवान् ॥
सामन्तस्य च तत्र दुष्टचरितं श्रुत्वा शिरः कम्पयन्।
बाहुं हस्तिकरोपमं स शनकैः स्पृष्ट्वा ब्रवीद्गर्वितम् ॥
आहूतो यदि नैति विक्रमवशा देष्यत्यसौ मे वशं।
किं वाक्यैर्बहुभिर्विधातृगदितैः संक्षेपतः कथ्यते ॥"
(मानदेवकी लिपि ३८६ (शक) संवत्)

(२) दुःखकी बातहै कि, आगेके श्लोक नष्ट होजानेसे उस सामन्तका नाम नहीं पायागया।

मानदेवके पीछे उसका पुत्र महीदेव सिंहासन पर बैठा। उसके समयका कुछ वृत्तान्त नहीं मिलता। फिर वसन्तदेवने पिताका राज्य पाया। ४३५ (शक) सम्बत् (सन् ५१३ ईसवी) में इसके समयकी खुदी हुई लिपि पाई गई है। दूसरे जयदेवकी शिलालिपिमें लिखाहै कि, यह एक बड़ा वीरथा, विजित सामन्तलोग इसकी वन्दना करतेथे।

संभवहै कि, इस वसन्तदेवके समयमें ही आर्य्यावलोकितेश्वरका प्रभाव नैपालमार्गमें फैलाथा। पार्वतीयवंशावलीमें लिखाहै कि, '३६२३ कलिगताब्दमें अवलोकितेश्वर नैपालमें उदय हुए (१)'

ऊपर लिखचुके हैं कि, पंडित भगवानलाल इत्यादि महाशयोंने इस बातको स्वीकार कियाहै कि, पार्वतीय वंशावलीमें बहुत सा अनैतिहासिक विषय रहने परभी उसमें ऐतिहासिक बातोंका अभाव नहींहै। अवलोकितेश्वरके विषयमें हमने जो कुछ आगे लिखाहै संभवहै कि, उसमें कुछ सत्यभी हो।

ज्ञात होताहै कि, ३६२३ कल्याब्दमें अर्थात् सन् ५२२ ईसवीमें वसन्तदेवने सब सामन्तोंको भलीभांति वशमें करके नैपालमें अवलोकितेश्वरकी पूजा और प्रधानताका प्रचार किया। उस समयसेही अबतक अवलोकितेश्वर या मत्स्येन्द्रनाथ नैपालके अधिष्ठातृदेवता समझकर माने और पूजे जातेहैं।

वसन्तदेवसे पीछे हुए दूसरे शिवदेव और दूसरे जयदेवकी शिलालिपिमें जो सम्वत् पड़ेहैं, हमारी समझमें वह उक्त अवलोकितेश्वरकी सार्वजनिक पूजा प्रकाश और राजा वसन्तसेनके द्वारा सार्वभौम राजा कहलानेके समयसे गिने जातेहैं।

वसन्त देवके पीछे उसका पुत्र उदयदेव राजा हुआ। डाक्टरफ्लिटके मतसे उदय देव लिच्छविवंशका नहीं, वरन ठाकुरीवंश अर्थात् अंशुवर्म्माके वंशका था। दूसरे जयदेवकी शिलालिपिमें उदयदेवसे पहिले जिन राजालोगोंकी वंशावली लिखी है, वह लिच्छवि वंशके हैं तथापि फ्लिटके मतसे उदयदेवसे ही ठाकुरी वंशका वर्णन आरंभ हुआहै। किन्तु मूल शिलालिपिके (२) पढ़नेसे उदयदेव लिच्छविवंशीय वसन्तदेवका पुत्रही जाना जाताहै। उदयदेवके पीछे कौन राजा हुआ सो शिलालिपिसे स्पष्ट ज्ञात नहीं होता। किन्तु उससे आगेको नरेन्द्रदेवका वृत्तान्त साफ २ पाया जाताहै।

---

(१) "अतीतकलिवर्षेषु शून्यद्वन्द्वरसाग्निषु।
नेपाले जयतिश्रीमान् आर्य्यावलोकितेश्वरः ॥"

(२) मूल श्लोक यहहैं।

"श्रीमान् बभूव वृषदेव इति प्रतीतो राजोत्तमः सुगतशासनपक्षपाती। अभूत्ततः शङ्करदेव नामा श्रीधर्म्मदेवोप्युदपादि तस्मात् ॥ श्रीमानदेवो नृपतिस्ततोऽभूत्ततो महीदेव इति प्रसिद्धः। आसीद्वसन्तदेवोस्माद्दान्तसामन्तवन्दितः॥ ०००० अस्यान्तरे प्युदयदेवइतिक्षितीशाज्जात००० स्ततश्चनरेन्द्रदेवः ॥ मानोन्नतो नतसमस्तनरेन्द्रमौलिमालारजोनिकर पांशुलपादपीठः ॥"

(दूसरे जयदेवकी लिपि।)

उक्त श्लोकमें "अस्यान्तरे" ऐसाहोनेसे डाक्टर फ्लिटने उदयदेवसे भिन्नवंशकी कल्पना-

इन नरेन्द्रदेवके पराक्रमकी बातें दूसरे जयदेवकी शिलालिपिमें विशेष रूपसे लिखी हैं। संभव है कि, इसके ही पराक्रमसे कान्यकुब्जके महाराज हर्षवर्द्धन नैपालजीतनेको समर्थ नहीं हुएथे। इसके राज्यकालमें चीनी सन्यासी हिओनसाङ्ग कुछ दिनके लिये नैपालमें गयाथा। चीनी सन्यासीने लिखाहै कि,–

"मैं बहुतसे पर्वतोंको कांपता व उपत्यकाओंमें होता हुआ नैपाल देशमें आया। यह देश तुषारमय पर्वत मालासे घिरा हुआ है। पर्वत और उपत्यकाका पर्त बराबर लगा हुआ पाया जाताहै।" इसप्रकारसे देशकी सुन्दरता और सर्व साधारणकी दशाका वर्णन करनेके पीछे उसने लिखाहै कि, "यहां विश्वासी और अविश्वासी (अर्थात् बौद्ध और हिन्दू) दोनों सम्प्रदाय एक साथ रहते हैं। संघाराम और देव मन्दिरोंके बहुत निकट बने रहनेसे यहां महायान और हीनयान मतावलम्बी २००० श्रमण रहते हैं। राजा क्षत्रिय और लिच्छविवंशीय हैं। वह विद्वान् निर्मल चरित्र और उदार हैं। बौद्ध धर्म्ममें इनको बड़ाभारी विश्वासहै।" इत्यादि २ ॥

चीनी सन्यासीने जिस लिच्छविराजका वर्णन कियाहै संभव है कि, वह नरेन्द्रदेव हों। नरेन्द्रदेवके विषयमें नैपाली बौद्धोंमें अब भी बहुतसी कहावतें नैपालियोंमें प्रचलितहैं। दूसरे जयदेवकी शिलालिपिसे जाना जाताहै कि, नरेन्द्रदेवके पहिलेसे ही लिच्छविराजगण बौद्धशासनके पक्षपाती होगयेथे (१)

नरेन्द्रदेवके पीछे उसका पुत्र दूसरा शिवदेव सिंहासनपर बैठा। मगधराज आदि सेनकी धेवती और मोखरी राज भोगवर्म्माकी कन्या वत्स देवीके संग शिवदेवका विवाह हुआ। इसके समयकी शिलालिपिमें १४३, १४५ और १४९ अनिर्दिष्ट सम्वत् अङ्कितहैं (२) अतएव अनुमान होता है कि, यह सन् ६६५ से ६७१ ईसवीके किसी समयमें

–की है। किन्तु पहिले श्लोकमें 'ततः' और 'अभूत्' पदसे पुत्र परम्परा निर्णीत होनेके कारण इस स्थानमें भी "अस्यान्तरे अभूत्" ऐसा अन्वय करना चाहिये। यहां भी उदय देवको वसन्तदेवका पुत्र कहकर निर्देश करनेके निमित्तही, पहिले श्लोकके समान "अस्यान्तरे" अर्थात् इस (वसन्तदेवके) पीछे ऐसा लिखा गयाहै इसमें कुछ सन्देह नहीं होसकता।

(१) "श्रीमान् बभूव वृषदेव इति प्रतीतो।
राजोत्तमः सुगतशासनपक्षपाती ॥
(जयदेवकी लिपिका आठवाँ श्लोक)

(२) पंडित भगवानलाल और डाक्टरफ्लीट आदि प्राचीन तत्त्ववेत्ता लोगोंने पूर्व वर्णित ध्रुवदे

राज्यकरताथा। फिर उसका पुत्र दूसरा जयदेव लिच्छवि सिंहासनपर शोभायमान हुआ।

इसका दूसरा नाम परचक्रकामहै। इसके समयकी १५९ संवत् वाली शिलालिपिसे जानाजाताहै कि, इसने, गौड़, वङ्ग, कलिङ्ग और कोशलाधिप हर्षदेवकी कन्या राज्य-मतीके संग विवाह कियाथा। इस हर्षदेवको ही पहिले हमने हर्षवर्द्धन समझाथा। किन्तु अब ज्ञात हुआ कि, यह कन्नौजराज हर्षवर्द्धन नहींहै। जिस वंशमें कामरूपके राजा कुमार भास्कर वर्म्माने जन्म लियाथा, दूसरे जयदेवके श्वशुर हर्षदेवनेभी उसही वंशको उज्ज्वल कियाथा। आसामसे निकले हुए ताम्रलेखोंके पढ़नेसे जानाजाताहै कि, यह कुमार, भास्करवर्म्माका पुत्र अथवा पौत्र था। तेजपुरके ताम्रलेखमें यह (हरिष) नामसे विख्यात हुआहै।

पार्वतीय वंशावलीमें शङ्करदेवसे चार पीढी पीछे, गुणकाम नामक राजाका नाम पायाजाताहै। वंशावलीके मतसे सन ७२३ ईसवीमें उसने- काठमांडूनगर बसाया। परचक्रकाम और गुणकाम यदि एकही पुरुषकी उपाधि होतो दूसरे जयदेवको सन७१३ ईसवी तक नेपालके राजसिंहासनपर विराजमान देखाजाताहै।

दूसरे जयदेवके पीछे, कोई ढाईसौ वर्षका सम्पूर्ण इतिहास अन्धकारमें छिपा हुआ है। नेपालके इतने समयका इतिहास अभीतक विश्वास योग्य नहीं मिला है। नेपालके राजा राघवदेवने सन ८७९ ईसवीमें २० अक्टूबरको एक नया सम्वत् चलाया था। जो नेपाली सम्वत्के नामसे विख्यात है फिर बेन्डल साहबने बड़े परिश्रमसे और अनु-सन्धानके द्वारा प्राचीन पोथियोंसे जो सूची संग्रह करके तयार कीहै, नीचे उसहीकी लिपि प्रकाश की जातीहै।

और अंशुवर्म्माकी लिपिके अंकोंको जैसे श्रीहर्ष सम्वत्का अंक मानाहै, वैसेही आगेके दूसरे शिवदेव और दूसरे जयदेवकी लिपिके अंकोंको भी श्रीहर्ष सम्वतका अङ्क समझाहै। किन्तु पहिलेके समान पिछले अङ्कोंकोभी श्रीहर्ष सम्वत्के अंकमाननेमें बखेड़ा पड़ता है।

ऊपर लिखचुकेहैं कि, नेपालमें हर्ष सम्वत् कब चला, इसका कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहीं, इसही कारण पिछले कहे दोनों राजालोगोंकी शिलालिपियोंमें खुदेअङ्कोंको किसी विशेष सम्वत्के नामसे ग्रहण किया गयाहै। इस विषयमें अबभी बहुत छान बीनकी आवश्यकता है।

राजाका नाम।	पोथीमें पाया हुआ समय।	राजधानी।
निर्भयरुद्र।	सन १००८ ईसवी।	
भोजरुद्र।	सन १०१५ ईसवी।	
लक्ष्मीकाम।	सन १०१५–१०३९ ई०	
जयदेव।		काठमाण्डू।
उदय।		,,
भास्कर।		पाटन।
बालदेव।		
प्रद्युम्न कामदेव।	सन १०६५ ईसवी।	
नागार्जुनदेव।		
शंकरदेव।	सन १०७१–१०७२ ई०	
वाणदेव।	सन १०८३ ईसवी।	
रामहर्षदेव।	सन १०९३ ईसवी।	
सदाशिवदेव।		
इन्द्रदेव।		
मानदेव।	सन ११३९ ईसवी।	
नरेन्द्र।	सन ११४१ ईसवी।	
आनन्द।	सन ११६५–११६६ ई०।	
रुद्रदेव।		
मित्र या अमृत।		
अरिदेव।		
रणसूर।	सन ११२२। ईसवी।	
सोमेश्वर। }		
राजकाम। }		
अन्यमल्ल। }		
अभयमल्ल।	सन १२२४ ईसवी।	
जयदेव।	सन १२५७	भातगांव।
अनन्त मल्ल ×	सन १२८६–१३०२ ई०	काठमाण्डू।
जयार्जुनमल्ल।	सन १३६४–१३८४ ई०	
जयस्थितिमल्ल।	सन १३८५–१३९२ ई०	
रत्नज्योतिमल्ल।	सन १३९२ ई०	
जयधर्ममल्ल।	सन १४०३ ई०	
जयज्योतिर्मल्ल।	सन १४१२ ई०	[काठमाण्डू]
यक्षमल्ल।	सन १४२९–१४५७ ई०	

यक्षमल्लसे पीछे उसकी सन्तानके पाससे नैपालका राज्य दो अंशोंमें बँटगया। एक अंशकी राजधानी भातगांव और दूसरेकी राजधानी काठमाण्डू हुई। राजवंशावली और उसके समयकी शिलालिपि तथा सिक्कोंसे जितने वर्ष पाए गये हैं सो नीचे लिखे जातेहैं।

× इसके पीछे६०वर्षतक किसर राजाने राज्य किया सो नाम न मिलनेसे नहीं जानाजाता.

यक्षमल्ल ।

(सन् १४६० ईसवीके लगभम)

भातगाँव		काठमाण्डू ।
राय (या) राम ।		रत्न ।
सुवर्ण (भुवन)		अमर ।
प्राण ।		सूर्य ।
विश्व ।		नरेन्द्र ।
त्रैलोक्य (सन १७५२ ई०)		महीन्द्र ।
		सदाशिव (सन १५७६ ई०)
जगज्ज्योतिः(सन१६२८-१६३३ई०)		शिवसिंह (सन १६०० ई०)
नरेन्द्र ।	काठमाण्डूमें	(पाटनमें)
जगत्प्रकाश (सन १६४२–१६६७ ई०)		लक्ष्मीनारायणसिंह सिद्धिनरसिंह (सन १६३१–१६५४ई०)
जिताभित्र (सन १६६३ ई०की मुद्रामें)	प्रताप	श्रीनिवास(सन१६६५–१६७८ई०)
भूपतीन्द्र(सन१६८५–सन१७१०ई०)	जयचन्द्र महेन्द्र	
रणजीत मल्ल(सन१७२२-१७५४ई०)		योगनरेन्द्र(स.१६८६स.१७०१ई०)
	जयनृपेन्द्र ।	
		लोकप्रकाश(स१७०५ई०)फिर रानीयोगमती
	भूपालेन्द्र ।	
	भास्कर	

काठमाण्डू	महीन्द्रसिंह (स. १७०९-सन् १७१५ ई०) पाटनमें ।
जगजय महीपतीन्द्र(स.१७२२–१७२८ ई०)	योगीन्द्र प्रकाश (स.१७२२ई०)
जयप्रकाश (स. १७३६ १७५३ ई०)	विष्णु (स.१७२९-१७३१ई०)
ज्योतिप्रकाश (१७४९ ई०)	विश्वजित ।
	दलमर्दन शाह ।
	तेज नरसिंह ।

इसके पीछेही नैपालमें गोर्खोंका राज्य हुआ । ऊपर कहे राजा लोगोंके संबन्धमें जैसा संक्षिप्त इतिहास पाया गयाहै, बहुत संक्षेपसे वही ऊपर लिखाहै ।

सन् ईसवीकी ग्यारहवीं शताब्दीमें जब मुसलमानोंने भारत वर्षपर आक्रमण कियाथा, उसके पहलेहीसे भारतका पश्चिमोत्तर प्रदेश छोटे २ खण्ड राज्योंमें विभक्तथा और यह राजा लोग ईर्षावश हो परस्पर युद्ध विग्रहमें लिप्त रहकर धन और सेनाके क्षय होनेसे दिन २ दुर्बल होते जातेथे । ऐसे समय उन्होंने परके शत्रुओंसे रक्षापाने तथा स्वदेशमें अपनी मान मर्य्यादा और सामर्थ्यको प्रतिष्ठित करनेके निमित्त बाहर देशके शत्रुओंको अपने हृदयमें आसन दिया । इसका यह फल हुआ कि, मुसलमानोंने भारत वासियोंके बुलाने और विशेष सत्कार करनेसे इस देशमें अपना अधिकार जमाया । यद्यपि मुसलमानोंने बन्धुभावसे भारतमें पैर रक्खाथा, किन्तु उनकी तीक्ष्ण दृष्टिको भारतकी भीतरी दशा सहजमें ही ज्ञात होगईथी, समय पातेही मित्रताके बदलेमें उन्होंने भारतको अपने पूरे अधिकारमें कर लिया । नैपालमें भी एक दिन यही दशा हुई थी ।

सन् १३२२ ईसवीमें सूर्यवंशी अयोध्या नरेश राजा हरिसिंह देवपर दिल्लीके मुसल्मान सम्राट्ने चढाई की, उन्होंने अयोध्यासे भागकर मिथिलाकी राजधानी सिमराओं गढमें दल सहित आकर रक्षा पाई । ४४४ नैपाली सम्वत् (सन् १३२४ ई०) में दिल्लीश्वर तुगलक शाहने फिर इनको घेर लिया, सिमराओं गढमें उन्होंने शत्रुओंसे विषम युद्ध किया, परन्तु अन्तमें पराजित होकर भागे और नैपालमें जा बसे । उस समय नैपालमें वर्म्म वंशीय राजालोग राज्य करतेथे । राजा हरिसिंहने जब देखा कि, अब यहांके राजामें पहिला सा तेज नहींहै । तब नैपाल राज्यको अपने अधिकारमें लेलिया । कहतेहैं कि, राजा हरिसिंहके राज्यमें यवनोंका उत्पात देखकर देवी तुलजा भवानीने राजाको यह आज्ञादी कि, तुम मुसलमानोंके छुए हुए राज्यको छोड नैपालके ऊंचे स्थानमें जाय अपना राज्यस्थापन करो । देवीकी आज्ञानुसार राजा नैपालमें गये,

उसकाल वहां भातगांवके ठाकुरी राजगण और अधिवासी लोगोंने देवीकी आज्ञा सुनकर नैपालका राज्य हरिसिंहके हाथमें सौंपदिया।

राज्यपातेही उन्होंने तुलजा देवीके स्मरणार्थ एक मन्दिर बनवाया, इस मन्दिरका नाम मुलचौकहै। भोटिया लोग तुलजा देवीका माहात्म्य सुन कर देवीजीकी मूर्तिको चुरानेके लिये भातगांओंकी ओर बढ़े और जब "सम्पुस" नदीके तट पर पहुँचे तो भोटियोंकी सेनाने देखा कि, भातगांओंके चारों ओर अग्नि जलरहीहै। देवीकी यह अद्भुत शक्ति देखकर भोटिया लोग भीत और विस्मित हो अपने २ नगरको लौटगये।

सन १३३७ ईसवीमें दिल्लीके बादशाह मोहम्मद तुगलकने चीन राज्यको हस्त गत करनेकी इच्छासे अपने बहनोई मलिक खुशरोको दश लाख घुड़सवार सेनाके सङ्ग चीनपर आक्रमण करनेकी आज्ञा दी। वह सेना नैपालके बीचमें ही होकर गई थी। उस समय सेनाके अत्याचारसे नैपालवासियोंको विशेष दुःख भोगना पड़ा। मुसलमानोंकी सेना बड़े कष्टसे पहाड़ोंको लांघती हुई नैपालकी अन्तिम सीमापर पहुँची, वहाँ चीनी सेनाके साथ उसका सामना हुआ और दोनों दलमें घनघोर युद्ध हुआ। एक तो शीतका प्रभाव, दूसरे उनके लिये वहाँका जलवायु ठीक नथा अतएव मुसलमानोंकी सेना दिन २ घटने लगी, अन्तमें बचे हुए सिपाही दिल्लीको भागे। सम्राट्ने जब उनके पराजित होकर भागनेका समाचार सुना, तब सबको मरवाडाला।

राजा हरिसिंह देवने २८ वर्षतक राज्य कियाथा। फिर उसका पुत्र मोतीसिंह देव १५ वर्ष और मोतीसिंह देवका पुत्र शक्तिसिंह देव २२ वर्ष राज्य करतारहा। उसके सङ्ग चीन सम्राट्की विशेष मित्रता थी, इसलिये "पनेप" (वणिकपुर) ग्रामके पूर्ववर्त्ती पलाम चौकमें अपनी राजधानी बनाई। वहांसे चीन राजसभामें अनेक प्रकारकी भेंट भेजी, जवाबसे चीन सम्राट्ने उसके लिये चीन सम्वत् ५३५ का लिखा हुआ एक अनुमोदन पत्र और राजमोहर भेजी थी। फिर उसके पुत्र श्यामसिंह देवने १५ वर्षतक राज्य किया। इसके कोई पुत्र नहीं था, अतएव अपनी इकलौती कन्या और जामाताको राज्यसिंहासन पर बैठाया। राजा नान्यप देवने जब नैपालपर चढ़ाईकी तो वहांका मल्ल वंशीय राजा त्रिहुतमें भागगया। उक्त मल्लवंशमें श्यामसिंह देवने अपनी कन्याको विवाह दिया। इस सम्बन्धसे नैपालमें दुबारा मल्लराज वंशकी प्रतिष्ठा हुई। ५२८ नैपाल सम्वत्में नैपालमें भयानक भूकम्प हुआ जिससे मत्स्येन्द्र नाथका मन्दिर और दूसरे बहुतसे मन्दिर भी गिरगये।

हरिसिंह देव वंशका राज्यकाल समाप्त होने पर मल्लराज जयभद्र मल्लने सबसे पहिले नैपालका राजसिंहासन पाया। यह १५ वर्ष तक राज्य करके परलोक सिधारा। फिर उसका पुत्र नागमल्ल गद्दी पर बैठा। इसने १५ वर्ष तक राज्य करके अपने पुत्र जय जगतमल्लको राज्य दिया। जयजगतमल्लने १५ वर्षतक राज्य करके अपने पुत्र नरेन्द्रमल्लके हाथमें प्रजापालनका भार सौंप दिया। राजा नगेन्द्र मल्लने १० वर्ष और

उसके पुत्र जयमल्लने १५ वर्ष तक राज्य किया । पीछे जयमल्लका पुत्र अशोक मल्लराज हुआ । उसने विष्णुमती वाग्मती और रुद्रमती नदियोंके मध्यवर्त्ती स्थानमें श्वेतकाली और रक्तकाली की स्थापना करके उस स्थानको भी पुण्यभूमि काशी धामके अनुकरण पर उत्तरकाशी या काशीपुर नामसे विख्यात किया राजा अशोकमल्लने अपने बाहुबलसे ठाकुरी राजा लोगोंको पराजित करके उनकी राजधानी पाटन नगरपर अधिकार किया ।

उसके पुत्र जयस्थिति मल्लने राज्यासन पर बैठकर पुराने राजालोगोंकी नीति और विधिका भली भांतिसे संशोधन किया और कई एक नये नियम भी चलाये । इसके ही समयमें जातिमर्य्यादा स्थापित हुई । समाजशासन और कई एक धर्म्म सम्बन्धी नवीन प्रथाओंको प्रचलित करके वह सब साधारणका श्रद्धा पात्र होगया था । आर्य्य तीर्थके दूसरी ओर वाग्मतीके किनारे श्री रामचन्द्रजी व उनके पुत्र लवकुश और गोरक्षनाथकी मूर्ति पुनः प्रतिष्ठित कराई । ललित पाटन का कुम्भेश्वर मन्दिर व दूसरे अनेक मन्दिर इसके ही प्रतिष्ठित हैं । इसके ४३ वर्ष राज्य करनेपर फिर इसका पुत्र राजा जयमल्ल गद्दी पर बैठा । जिसने शंकराचार्य्यकी धर्म्मशिक्षाका प्रचार किया । और दक्षिणसे भट्ट ब्राह्मण बुलवा कर पशुपति नाथकी पूजाका भार सौंपा । उस समयसे ही भारतवासी हिन्दू धर्म्मावलम्बी ब्राह्मणोंने यथार्थ सनातन मतके अनुसार देव पूजा चलाई । इसके राज्यकालमें धर्म्मराज मीननाथ लोकेश्वरका मन्दिर बना । इसमें सममन्तभद्र बोधिसत्व पद्मपाणि बोधसत्व और अन्यान्य बोधिसत्व व अनेक देव देवियोंकी मूर्त्तियें प्रतिष्ठित हैं । ५७३ नेपाल सम्वत्में इसमें एक किला बनवाया और इसकी रक्षाके लिये बहुतसे नियम चलाये । भातगांओंके तत्रपाल टोल ग्राममें दत्तात्रेयका एक मंदिर निर्म्माण कराया राजा गुणकामदेवकी प्रतिष्ठित लोकेश्वर देवकी मूर्त्ति ठाकुरी राजगणोंके समयमें यमला नामक स्थानके टूटे हुए मन्दिरके खंडहरमें पाई गई इस देव मूर्त्तिका संस्कार कराके काठमाण्डूमें स्थापना करादी । अब यह मूर्त्ति यमलेश्वर नामसे विख्यात है । इसने पाटन और काठमाण्डूके राजालोगोंको अपने अधिकारमें कर लियाथा ।

राजा यक्षमल्लके तीन पुत्र और एक कन्या थीं । उसने मृत्युसे पहिले बड़े पुत्रको भातगाओं, दूसरे पुत्र रणमल्लको बनेपा, तीसरेपुत्र रत्नमल्लको काठमाण्डू और कन्याको पाटनका राज्य देदिया । किन्तु परस्पर विवाद बढ़जानेसे धीरे २ सबही हीन बल होगये । यद्यपि राजा यक्षमल्लने उपरोक्त प्रकारसे अपने राज्यका विभाग करदियाथा । तथापि यथार्थ वंशधरके अभावसे या किसी अभावनीय कारणसे बनेपा और पाटन राज्य भातगांओं तथा काठमाण्डूके राजवंशमें मिलगये इस कारणसे नैपालके इतिहासमें गोर्खा आक्रमणके पहिले उक्त दो राज्योंका कुछ २ इतिहास पायाजाताहै ५९२ नैपाल सम्वत्में उसकी मृत्युसे नैपालका राज्य इस प्रकार बँट गया । ज्येष्ठ पुत्र रायमल्ल भातगांओंमें पिताके सिंहासनपर बैठा । उस समय भातगांओंका राज्य पूर्व दूधकोशी तक फैला हुआ था पीछे इसके पुत्र प्राणमल्ल और

प्राणके पुत्र विश्वमल्लने भातगांवमें राज्य किया। विश्वमल्लने बहुतसे मठ और देव मन्दिर स्थापन किये। फिर इसके पुत्र त्रैलोक्य मल्ल और त्रैलोक्य मल्लके पुत्र जगज्योति मल्लने राज्य कियाथा। इसने ही भातगांवके आदि भैरव देवताका रथयात्रा उत्सव चलाया। इसके परलोक सिधारने पर इसका पुत्र नरेन्द्रमल्ल राजा हुआ। अनन्तर नरेन्द्र मल्लका पुत्र जगत् प्रकाशमल्ल, राज सिंहासनपर बैठा। इसने ७७५ नेपाल सम्वत्में बहुतसे कीर्त्तिस्तम्भ स्थापित किये। तब पालटोले ग्राममें दारसिंह भारो और वासिंह भारो नामक दो सज्जनोंने भीमसेनकी प्रतिष्ठाके लिये एक मन्दिर बनवायाथा। ७८२ नेपाली सम्वत्में उन्होंने विमला खेह मण्डप और ७८७ नेपाल सम्वत्में गरुडध्वज नामक एक स्तम्भ निर्माण कराया। इसके पुत्र राजा जितामित्रने ८०२ नेपाली सम्वत में एक धर्म्मशाला नारायण मन्दिर और ८०३ नेपाली सम्वतमें दत्तात्रयेशका मन्दिर स्थापन किया। इसके पुत्र राजा भूपतीन्द्र मल्लके शासन कालमें नेपालके मध्य एक बहुत बड़ा दरबार और देवदेवियोंके मन्दिर प्रतिष्ठित हुए। इसने आप और पुत्र रणजीतकी सहायतासे ८३८ नेपाल सम्वत्में भैरव देवके मन्दिरमें सुवर्णकी छत्त बनवादी। रणजीत मल्लने पिताकी मृत्युके पीछे शासन भार ग्रहण करके अपनी कीर्तिका भलीभांतिसे प्रकाशकिया। नेपाली सम्वत् ८५७ में इन महाराजने अन्नपूर्णादेवीके मन्दिरमें एक बड़ा भारी घंटा चढ़ाया। इनके ही राज्यकालमें भातगाओं ललितपाटन और कान्तिपुरके राजा लोगोंमें परस्पर फूट बढ़ी। गोर्खा राजा नरभूपालने उस समयके राजाओंको बलहीन देखकर नेपालपर चढ़ाईकी। जब वह त्रिशूल गंगाके पार होकर आया तो नवकोट शैवराज उनसे युद्ध करनेके लिये आगे बढ़े। इस युद्धमें गोर्खा राजा पराजित होकर अपने देशको लौट गये।

गोर्खा राजा नरभूपालका पुत्र, राजा पृथ्वीनारायण रणजीतके शासनकालमें नेपाल देखनेको आया। रणजीतने उसका विनीत आचार व्यवहार देखकर अपने पुत्र वीर नृसिंहसे मित्रता करादी। किन्तु युवराज अकालमें ही इस असार संसारको छोड़ स्वर्ग सिधारा। इस कारण भातगांओंके सूर्य्यवंशीय राजा लोगोंका वंश नष्ट होगया।

राजा यक्षमल्लने दूसरे पुत्र रणमल्लको वणिकपुर (बनेपा) व दूसरे सात गांओंका अधिकार देदिया। उनकी अधिकार सीमा पूर्वमें दूधकोशी; पश्चिममें संगानामक स्थान; उत्तरमें संगाचौक और दक्षिणमें मेदिनामल कामक बनैली भूमितक फैली हुई थी। वणिकपुरके किसी पुरुषने ६२२ नेपाल सम्वत्में पशुपतिनाथके मूल्यवान कवच और एकमुखी मुद्रा उपहार देते समय राजाको भी एक शाल भेंट की थी। यह शाल अभीतक कान्तिपुर राजधानीमें रक्खी हुई है।

राजा यक्षमल्लके तीसरे पुत्र राजा रत्न या रत्नमल्लने पिताके विभागानुसार काठमाण्डूका राज्य भार प्राप्त किया। इस राज्यकी पूर्व सीमामें वाग्मती पश्चिममें नागगंगा उत्तरमें गोसाईं थान और दक्षिणमें पाटन विभागकी उत्तर सीमा है। राजा रत्नमल्लने

पिताके मरनेपर उनसे तुलजा देवीका बीजमन्त्र ग्रहण किया सुनाहै कि, इस मन्त्र बलसे उनके ऊपर सदा प्रसन्न रहती थी इन महाराजके जितने बडे भ्राता थे वह अपने भ्रान्त विश्वासके कारण भाईकी होनहार उन्नतिसे कातर होकर दिन २ छोटे भ्राताके ऊपर क्रोधित होने लगे। इसका फल यह हुआ कि, परस्पर घोर शत्रुता होगई।

राजा रत्नमल्लको एक दिन स्वप्नमें नीलतारा देवीने आज्ञा दी कि, यदि तुम कान्तिपुरमें जासको तो काजी लोग निश्चयही तुमको राजा बनादेंगे। स्वप्न देख राजा सवेरे-ही उठे और देवीको प्रणाम करके ठाकुरी राजा लोगोंके प्रधान काजी पर पहुंचे काजीने राज्य देनेका वचन दिया और अपनी प्रतिज्ञा पूरी करनेके लिये बारह ठाकुरी राजा लोगोंको नेवतेके बहानेसे अपने घर बुलाया और भोजनके संग विष देकर उनको मार डाला। रत्नमल्लने कान्तिपुरके सिंहासन पर बैठते ही उस काजीको मरवादिया स्वप्नकी बात मिथ्या मानलेने पर भी यह बात साफ है कि, उन्होंने भाइयोंके संग विवाद करके ही कान्तिपुरको अपने अधिकारमें किया था। रत्नमल्लने ६११ नेपाली सम्वत्में नव-कोटके ठाकुरी लोगोंको पराजित करके उनके राज्य पर अधिकार करलिया। यहांसे उन्होंने अनेक फल फूल लेकर पशुपतिनाथकी पूजा की थी। इस कारण अबतक भी नवकोटसे द्रव्यादि लाकर उक्त देव मूर्तिकी पूजा की जातीहै।

इनके राज्यकालमें कुलु नामक भोटिया जातिने विद्रोही होकर राजाके ऊपर विशेष अत्याचार किया राजाको भोटिया लोगोंके दमन करनेमें विफल मनोरथ देखकर देव धर्म्मा ग्रामवासी चार तिरहुती ब्राह्मणोंने पाल्पाके सेन राजगणकी अधीनस्थ सेनाको लेकर रत्नमल्लकी सहायता की। जब इस कुकुस्यानाजोर नामक ग्राममें भोटिया लोग-हारगये। तो राजाने इन ब्राह्मणोंको कई ग्राम और बहुत सा धन पुरस्कारमें दिया इसके ही शासन कालमें भोटिया विद्रोहके पीछे नैपालमें यवन (मुसलमान) जातिका निवास आरम्भ हुआ।

इन्होंनेही ६२९ नैपाली सम्वत्में तुलजादेवीका एक मन्दिर बनवा कर देवीकी मूर्ति स्थापनकी। कान्तिपुर और ललितपाटनके निवासियोंको अधिकारमें लाकर शेखागढि पर्वतकी चितलिङ्ग उपत्यका वाली ताम्बेकी खानसे तांबा लिया और सुकिया (१) बदलेमें तांबेका पैसा चलाया।

रत्नमल्लकी मृत्युके पीछे उसका पुत्र अमरमल्ल काठमाण्डूके सिंहासन पर बैठा। इसके राज्यकालमें वणिकपुरके कुम्हारोंने अनन्त नारायणकी मूर्ति लेकर पशुपतिनाथके मन्दिरमें स्थापन करनेकी चेष्टा की किन्तु आज्ञा न पाकर उन्होंने उसी रातमें बाछला देवीके मन्दिरके पास और एक मन्दिर बनवाया और उसमें नारायणकी मूर्त्तिको स्थापन किया भुवनेश्वरके उपासक मणि आचार्य्यके वंशधर लोगोंने कुमार और कुमारीके

(१) सुकिया 'या' सुकी प्राचीन नेपाली मुद्राका नामहै। इसका वर्त्तमान मूल्य आठ पयसे या दो आनेहैं।

लिये एक यात्रा उत्सव किया कहतेहैं कि ६७७ नैपाली सम्वत्‌में जिस दिन मणिआचार्य "मृतसञ्जीवनी" खोजनेके लिये बाहर निकले थे उसी दिनके स्मरणमें यह उत्सव होताहै। उनके वंशधर लोगोंने उनकी मृत्युका समाचार सुनकर अन्त्येष्टि क्रियाका उद्योग किया। जब उन्होंने देव पाटनसे लौटकर उन लोगोंका अभिप्राय समझा तो अपनी इच्छासे अग्निमें प्रवेश करगये।

राजा अमरमल्लने मदनके पुत्र अभयराजको मुद्राङ्कणका अधिनायक करके टङ्क नायकके पदपर अभिषिक्त किया। इस अभयराजने अपने धनसे बहुतसे मन्दिर आदिक बनवायेथे।

इस राजाने खोकनाकी महालक्ष्मी देवी हलचौक देवी मानमइजुदेवी पचलि भैरव तथा लुम्भिकालीकी दुर्गादेवी कनकेश्वरी घंटेश्वरी और हरिसिद्धिकी पूजामें नाचका उत्सव नियत किया था। पहिले कनकेश्वरीदेवीकी पूजा नरवलिसे होती थी। यही कारणहै जो अब इन देवीओंकी पूजा और उत्सव बन्दकर दिये गयेहैं। उपरोक्त उत्सवोंमेंसे कोई २ उत्सव बारह वर्षमें होताहै।

ललितपुर, बन्दगांओ, खेचो, हरिसिद्धि, लुभु, चम्पागांओ, फरफिङ्ग, मत्स्येंद्रपुर या वागमती, खोकना, पाङ्गा, कीर्त्तिपुर, थानकोट, वलम्बु, शतङ्गल, हलचोक, फुट्टम, धर्म्मस्थली, टोखा, चपलिगांओ, लेलेग्राम, चुकग्राम, गोकर्ण, देवपाटन, नन्दीग्राम, नमशाल, मालीग्राम, इत्यादि अच्छे स्थान २ उसके अधिकारमें थे, काठमाण्डूसे पशुपति ग्राम जानेके मार्गमें नन्दीग्राम है। यह नमशाल और मालीग्राम एक समय विशाल नगरके नामसे विख्यात थे। यहां प्राचीन कीर्त्तियोंके चिन्ह पायेजातेहैं।

नैपाली गणनासे ४७ वर्ष तक राज्य करनेके पीछे अमरमल्ल परलोक सिधारा फिर उसका पुत्र सूर्यमल्ल राजाहुआ सूर्यमल्लने राज्यासन पातेही भातगांओंके राजासे शंकर देवका स्थापित किया हुआ चाङ्गुनारायण और शंखपुरग्राम छीन लिया। व शंखपुरमें जाकर ६ वर्ष तक वज्रयोगिनीकी उपासना की फिर कान्तिपुरमें लौट आये। इनकी मृत्युके पीछे पुत्र नरेन्द्रमल्लने राज्य किया, इनके परलोक वासी होनेपर इनके पुत्र महीन्द्रमल्ल राजा हुए। इन्होंने दरबारके सामने महीन्द्रेश्वरी और पशुपतिनाथका मन्दिर बनवाया और भारतकी राजधानी दिल्लीमें जाकर बादशाहको अनेक प्रकारके हंस और शिकारी पक्षी भेंटमें दिये बादशाहके प्रसन्न होनेपर इन्होंने अपना सिक्का चलानेकी आज्ञा मांगी। सम्राट्‌ने चांदीका सिक्का चलानेकी आज्ञा दी।

राजा महीन्द्रमल्लने अपने नगरमें आय अपने नामका 'मोहर' नामक चान्दीका सिक्का चलाया। यह सिक्काही नैपालकी प्रथम रौप्यमुद्रा है इससे पहिले कभी नैपालमें चांदीका सिक्का प्रचलित था या नहीं सो कुछ पता नहीं मिलता उस समयसे पहिले नेपालमें जितने तांबेके सिक्के पाये जाते हैं उनके ऊपर बैल, सिंह, हाथी आदिकी मूर्त्ति बनीहैं।

इनकेही यत्नसे कान्तिपुर बहुत लोगोंकी बस्ती बनाया। ६६९ सम्वत्के माघमासमें इन्होंने उक्त नगरमें तुलजाभवानीकी प्रतिष्ठाके निमित्त एक मन्दिर निर्म्माण करायां, इनके शासन काल ६८६ नैपाल सम्वत्में विष्णुसिंहके पुत्र पुरंदर राजवंशीने ललित-पाटनके दरबारके सामने नारायणका मंदिर बनवायाथा। राजा महीन्द्रमल्लके दो पुत्र थे। बड़ेका नाम सदाशिवमल्ल और छोटेका नाम शिवसिंहमल्ल था। इनकी माता ठाकुरी-वंशकी थी।

पिताकी मृत्युके पीछे सदाशिव मल्लने राज्यका भार अपने हाथमें लिया किन्तु वह लम्पट और स्वेच्छाचारी राजा था किसी मेले या यात्राके समय राजमार्ग पर जिस सुन्दर स्त्रीको देखता उसीको पकड़वा कर मंगालेता इस प्रकार इसने कई सौ स्त्रियोंके धर्म्मको बिगाड़ा था। भोग विलासमें पड़कर वह खजानेको खाली करने लगा। प्रजाने उसका ऐसा व्यवहार देखकर अपने चित्तसे राजभक्तिको दूर कर दिया। एक दिन राजा मनोहराकी ओर जा रहा था उसी समय लोगोंने लाठी मुद्गर लेकर उसके ऊपर प्रहार किया। राजा डरकर भातगांवमें भागगया किन्तु भक्तपुरके राजाने उसके बुरे चरित्रकी बात सुनकर बन्दी कर लिया राजा सदाशिव कुछ पीछे नेपालसे भाग गया। उसके भाग जानेसे सूर्य्यवंशका यथार्थ स्वामित्व नैपालसे विदा हुआ।

प्रजाने सदाशिवको दूर करके उसके सौतेले भाई शिवसिंहको राज्यासन दिया राजा-शिवसिंह ज्ञानी थे उन्होंने महाराष्ट्रदेशसे ब्राह्मणोंको बुलवाया और अपना गुरु बनाया। इनके शासन कालमें सूर्य्यवल्लनामक कांतिपुरवासी एक तांत्रिक पुरुष तिब्बतकी राज-धानी लासा नगरको गया था। महाराजके दो पुत्रथे बड़ा लक्ष्मीनृसिंहमल्ल और छोटेका नाम हरिहरसिंहमल्ल था। हरिहरसिंह कुछ २ तेजस्वभाववाला था। इसलिये पिताकी जीवदशामेंही ललित पाटनका शासन करनेको तइयार हुआ। इनकी माता गंगारानीने कांतिपुर और बडे नील कण्ठके बीचमें एक बाग बनवाया था। वह रानीवन नामसे विख्यात है। उस बागकी टूटी फूटी दीवारें अंग्रेजी रेजीडेंसीके पास अभी देखी जा-ती हैं कुछ काल पहिले इसही बागमें जंगबहादुरके शिकारके लिये हरिणके बच्चे पाले जातेथे।

एक दिन हरिहरसिंहके पिता शिकार खेलनेको बाहर चले गयेथे। उनके पीछे हरिहरसिंहने अपने भाई लक्ष्मीश्वरसिंहसे लड़ाई झगड़ा करके उनको दरबारसे बाहर निकलवा दिया था ७२४ नैपाली सम्वत्में राजा शिवसिंहने स्वयंभूनाथके मन्दिरकी मरम्मत करादी कुछ दिन पीछे जब राजा रानी गंगा देवीके साथ परलोक वासी हुआ तो उसका बड़ा पुत्र लक्ष्मी नरसिंह कान्तिपुरका राजा हुआ। इनके किसी कुटुम्बीने जिसका नाम भीममल्ल था भोट देशमें जाकर कान्तिपुर और भोटके व्यापारको मिला दिया इस वाणिराज्यसे भोटका सोना और चांदी नैपालमें आया था काभी भीममल्लकी चेष्टासे और यत्नसे भोट राजके संग राजा लक्ष्मी नरसिंहकी इस प्रकार सन्धि हुई थी कि, वाणिराज्य करनेको जाकर जो कोइ मनुष्य तिब्बतकी राजधानी लासामें मरेगा

उसकी अस्थावर स्थावर समस्त सम्पत्ति नेपाल गवर्नमेंटको लौटा दी जायगी इसकी ही सहायतासे सिवानेका कुटी नामक देश नेपालके इलाकेमें मिलगया था ।

भीममल्लने तिब्बत की राजधानी लासासे लौटकर राजाकी उन्नतिके लिये विशेष सहायता की थी वास्तवमें वह राजा लक्ष्मीमल्लको नेपालका एक छत्र राजा बनाना चाहताथा । किसीने राजासे भीममल्लकी चुगली खाई कि भीममल्ल स्वयं राज्य लेनेकी चेष्टा करता है आपके संग उसका कपट व्यवहार है । राजाने यह बात सुनते ही भीममल्लका शिर काटनेकी आज्ञा दी भीममल्लने अपने जीते जी धर्म्म शिला विग्रह पर तांबेका पत्तर चढ़ा दिया था कहतेहैं कि, दक्षिण भारतवासी नित्यानन्द स्वामी नामक एक ब्रह्मचारी उस समय नेपालमें आया था । परन्तु उसने किसी मूर्तिको प्रणाम नहीं किया । राजाने इस समाचारको सुनतेही क्रोधित हो ब्रह्मचारीको प्रणाम करनेकी आज्ञादी । आज्ञानुसार नित्यानन्द स्वामीने मूर्तिके सामने वैसेही शिर झुकाया वैसेही चन्द्रेश्वरी, धर्म्मशिला व कामदेव आदिकी मूर्त्तियें टूट गईं भीममल्लकी मरवानेके पीछे उसकी स्त्रीने राजाको शाप दिया; जिससे वह विक्षिप्त होने लगा, जब राजकाज करनेमें राजा बिलकुल असमर्थ होगया; तो उसका पुत्र प्रतापमल्ल ७५१ नेपाली सम्वत्‌में राजा गद्दीपर बैठा ७७७ नेपाली सम्वत्‌में १६ वर्ष तक राज्य करके राजा लक्ष्मीनृसिंह स्वर्गवासी हुआ राजा लक्ष्मीनृसिंहने इन्द्रपुर नगर और जगन्नाथ देवालय स्थापन किया तथा ७७४ नेपाली सम्वत् माघमासकी शुक्ल पंचमीको कालिका देवीका स्तोत्र रचकर पत्थरोंके ऊपर खुदवादिया और स्थान २ के देवालयोंमें जड़वा दिया यह देवगीत १५ भाषाओंकी वर्णमालामें लिखा गया है । ÷

इस राजाको अनेक शास्त्र कण्ठगत थे तथा पन्द्रह सोलह भाषा जानता था ।

इसके ही समयमें श्यामार्पालामा नामक एक भोटवासीने नेपालमें आकर ७६० नेपाली सम्वत्‌में स्वयंभूनाथका गर्भकाष्ठ बदलवादिया । और वहांकी मूर्त्तियोंके ऊपर गिलटी कराढी तथा उक्त मन्दिरके दक्षिणवाले छज्जेमें राजा लक्ष्मीनरसिंहका नाम खुदवाया ७७० नेपाली सम्वत्‌में राजा प्रतापमल्लने स्वयंभूनाथके माहात्म्यमें एक दूसरी कविता रचकर पत्थरोंपर खुदवादी और उन पत्थरोंको मन्दिरमें लगवादिया । प्रतापमल्ल अपने प्रचलित मुद्रामें निजनामके संग कवीन्द्र "उपाधि" अंकित कराके अपनेको विशेष गौरवान्वित समझाथा ।

प्रतापमल्लने पहिले त्रिहुतकी दो राजकन्याओंसे विवाह किया फिर युवा अवस्थाके मदमें भर कर नेपाली रीतिके अनुसार लगभग तीन हज़ार स्त्रियोंको अपनी पत्नी बनाया इसी अतृप्त वासनाके वशमें होकर एक समय उसने किसी कन्याको मारडाला; अपने किये इस पापसे भीत होकर स्वयं राजाने अपने परिवारके सब लोगोंसे तुलादान करवाया था और आपभी किया था ।

÷नामक पुस्तकमें इस शिला लिपिकी एक नकलहै । D. Wright's History of Nepal,

इसकेही समयमें महाराष्ट्रसे लम्बकर्ण भट्ट और त्रिहुतसे नरसिंह ठाकुर दो ब्राह्मण नेपालमें आये और राजासे साक्षात् कर गुरु उपाधिसे विभूषित हुए राजा प्रतापमल्लके पार्थिवेन्द्रमल्ल नृपेन्द्रमल्ल महीपेन्द्र (महीपतीन्द्र) मल्ल और चक्रवर्त्तीन्द्रमल्ल नामक चार पुत्र उत्पन्न हुए। चारोंने पिताकी इच्छानुसार पिताके जीवित रहतेही एक २ वर्ष राज्य-शासनका सुख भोगा तीसरे पुत्र महीपतीन्द्रके शासन कालमें राजाने पुत्रकी सहायताके निमित्त ७८८ नैपाली सम्वत्में अक्षोभ्य बुद्ध मन्दिर सामने धर्म्मधातु मण्डलपर इन्द्रके वज्रको स्थापित किया। चौथा पुत्र चक्रवर्त्तीन्द्र एक वर्षतक राज्य करके परलोकको सिधारा। ७८९ नेपाली सम्वत्में चक्रवर्त्तीन्द्रने जो सिक्का चलाया था उसकी पीठपर तीर, पाश, अङ्कुश, कमल और चामरका ठप्पा है।

पुत्रकी मृत्युसे रानीको बहुत दुःखी देखकर राजाने उसका शोक शान्त करनेके लिये एक बड़ी पुष्करिणी और मन्दिर बनवाया। यह पुष्करिणी रानी पोखरीके नामसे विख्यात है। ८०९ नैपाली सम्वत्में राजाके परलोक सिधारने पर उसका पुत्र महीन्द्र-मल्ल, 'भूपालेन्द्र नाम धारणकर राजसिंहासनपर बैठा। ८१४ नैपाली संवत्में उसकी मृत्यु हुई। तब पुत्र श्रीभास्करमल्लने चौदहवर्षकी अवस्थामें राजभार संभाला। भास्कर मल्लके राज्य कालका जब आठवां वर्ष चलरहाथा; तब आश्विन मासके दशहरेके उत्सवपर पाटन और भातगांओंके लोगोंमें बड़ा विरोध फैला। उसी वर्ष नैपालमें महामारीका भी भय हुआ और उसी रोगसे ८२२ नैपाली संवत्में राजाकी मृत्यु हुई। उसकी मृत्युके संग २ ही कान्तिपुरके सूर्य वंशीय राजवंशका लोप होगया राजाकी रानी और दूसरी स्त्रियें सती दाह होनेसे पहिले ही अपने कुटुम्बी जगज्जयमल्लको राजगद्दी देकर स्वर्गको सिधार गई।

राजा जगज्जयके पांच पुत्र थे राजेन्द्रप्रकाश और जयप्रकाश पिताकी राज्य प्राप्तिके पहिले ही जन्मेथे। तथा राज्यप्रकाश नरेन्द्रप्रकाश और चन्द्रप्रकाशका जन्म पीछे हुआथा। राजाके जीवित रहते ही बड़ा राजेन्द्र और छोटा चन्द्रप्रकाश परलोक वासी होगया।

राजाको दोनों पुत्रोंके वियोगका बड़ा दुःख हुआ। शोक शान्तकरनेके लिये उनके खास सिपाही समझानेलगे और राजकुमार राज्यप्रकाशको राजगद्दी देनेका अनुरोध करनेलगे।

उसी समय राजाने सुना कि, गोर्खाली राजा पृथ्वीनारायणने नवकोट तक अपना राज्य फैलालिया। अतएव अपनी दी हुई देवोत्तर सम्पत्तिको शत्रुके हाथमें देखकर वह बहुत घबराया। ८५२ नैपाली सम्वत्में उसकी मृत्युके पीछे पुत्र जय प्रकाशमल्ल काठमाण्डूके सिंहासनपर बैठा। कुमार राज्यप्रकाशमल्ल राज्य सिंहासन पाकर पाटनको चलागया और राजा विष्णुमल्लके सत्कारसे प्रसन्न होकर वहां रहगया। राजा विष्णुमल्लके कोई पुत्र नहीं था। इस कारण राज्य प्रकाशमल्लको ही उसने अपना सिंहासन देनेकी प्रतिज्ञा की।

राज कर्म्मचारी ठारीलोगोंने छोटे भाई नरेन्द्रप्रकाशको देव, पाटन 'शङ्ख' चांगु गोकर्ण और नन्दीग्राम नामक पांच गांव देदिये । राजाने ठारी लोगोंके इस कामसे अप्रसन्नहो उनको बन्दी किया और भाईको उक्त पांच गांवोंके अधिकारसे बेदखल करा । इसलिये नरेन्द्र प्रकाशको पिताकी राजधानी काठमाण्डू छोड़कर भातगांवमें आकर रहना पड़ा । इसके कुछही दिन पीछे नरेन्द्र प्रकाशकी मृत्यु होगई ।

समय पाकर उक्त ठारी लोग छुटगये और रानी दयावतीकी ओर होकर उसके आठ महीनेके पुत्र ज्योतिप्रकाशको सबके सामने राजा बना दिया । राजा जय प्रकाश दरबारको छोड़कर ललित पाटनमें भाग गया । किन्तु वहांके प्रधानलोगोंने उसको आश्रय नहीं दिया । इस कारण रानी दयावतीके आश्रय लेनेके लिये वह गोदावरीको चलागया । वहांसे भागकर गोकर्णेश्वरमें और फिर गुह्येश्वरीके मन्दिरमें आकर आश्रय लिया । यहांपर एक भक्त पुरुषने उसको देवीका खड्ग देकर शत्रुओंसे युद्ध करनेका उत्साह दिया उससे लड़नेका कान्तिपुरसे जो सेना आतीथी, वह सेना इसकेही हाथसे मारीगई राजा कान्तिपुरमें लौटकर दरबारमें गया और बालक ज्योति प्रकाशके दो टुकड़े करके उसकी माता रानी दयामतीको लक्ष्मीपुरके चौकमें कैद करदिया ।

राजा जयप्रकाशने इस प्रकार अपने शत्रुओंको दबाकर नवकोटपर चढ़ाई की गोर्खा राजा पृथ्वीनारायण हारकर अपने देशको भागगया । इससे आठ वर्ष पीछे पृथ्वी-नारायणने फिर भी नवकोटपर चढ़ाईकी और त्रिशूलवासी बत्तीस ब्राह्मणोंकी ब्रह्मोत्तर भूमि छीनली । उक्त ब्राह्मणोंने नेपालके राजासे यह सब बातें कहीं । इसी समय राजा-के अभाग्यने बल किया और उसकी समझमें फेर हुआ । जब उसने सुना कि काशी-राम थापा नामक एक पुरुष नवकोटका अधिकार दिलानेमें पृथ्वीनारायणकी सहायता करता है । तब उसने थापाको बुलाकर सब बात पूंछी । यद्यपि काशीरामने अपना नि-र्दोष होना सब प्रकारसे प्रमाणित करदिया । तथापि राजाने चावहिलके गौरीघाटपर जब कि, काशीराम सन्ध्या करता था गुप्तघातकसे उसका संहार कराडाला ।

गुह्येश्वरीकी कृपासे जयप्रकाशने पुनर्वार राज्य प्राप्त करके कृतज्ञताके निमित्त मंदि-रके सामने घाट और गृहादिक बनवाये और देवीकी पूजा खर्चके लिये भूमिदान की थी । इसी राजाने उक्त देवीजीकी पूजाके उत्सवमें ज्योनारकी रीति चलाई थी । पशुपति नाथके मन्दिरके निकटही उसने एक देवीके ऊपर करोड़ मृण्मय शिवलिंगकी पूजा पद्धतिका प्रचार किया था जो आजतक कोटिपार्थिव पूजाके नामसे विख्यात है ।

उसीसमयमें पृथ्वीनारायणने बहुतसी सेना लेकर कीर्त्तिपुरपर चढ़ाई की दोनों दलोंमें घोर संग्राम हुआ । इस युद्धमें नेपालराज की ओरके सर्दार शक्तिबल्लभकी बारह हजार सेना मारी गई । दोनों पक्षकी विशेष हानि होनेपर भी राजा जयप्रकाशने पृथ्वीनारा-यणको राज्यसे बाहर निकाल दिया था । किन्तु ठारी लोग सीमान्तवर्त्ती त्रिशूलवासी

ब्राह्मणोंसे डाह रखतेथे। इस कारण पृथ्वीनारायणके पास गये। और उसको नैपालका कुछ अंश देदिया।

इस समय राजा रणजीतमल्ल भातगांवके सिंहासनपर विराजमान था। वह भी गोर्खालियोंको पराजित करनेकी इच्छासे नागा सिपाहियोंको सताने लगा। ८८७ नैपाली सम्वत्‌के आषाढ मासमें भातगांवके बीच २४ घंटेके भीतर २१ बार भूकम्प हुआ था। इसके आठ मास पीछे ८८८ सम्वत्‌में पृथ्वीनारायणने पुनर्वार कान्तिपुरपर चढाई की। उस दिन इंद्रयात्राका उत्सव था। नैपालकी सेनाके साथ सब नगरवासी भी शराब पीकर उन्मत्त थे। इस कारण दो एक घंटेसे अधिक युद्ध न हुआ। राजा देवीके मन्दिरमें पूजा कररहा था। उसी समयमें राजा पृथ्वीनारायणने आकर पहिले कान्तिपुर और पीछे ललितपुरको अपने अधिकारमें कर लिया।

राजा यक्षमल्लने पाटनपर अधिकार करके अपनी इकलौती कन्याको पाटनका राज्य देदिया समय पाकर यही नगर काठमाण्डूके अधिकारमें आगया राजा शिवसिंहका छोटा बेटा हरिहर सिंहमल्ल इस प्रदेशका शासन करने आया हरिहर सिंहकी मृत्युके पीछे उसके पुत्र सिद्ध नरसिंहको राज्य मिला। यह बड़ा ज्ञानी था। उसकी अनेक कीर्ति नैपालके स्थान २ में विद्यमान हैं। ७४० नैपाली सम्वत्‌में उसने अपने गुरु विश्वनाथ उपाध्यायकी अनुमतिसे पुनर्वार तुलजादेवीकी प्रतिष्ठा की। ७५७ नैपाली सम्वत्‌के फाल्गुनमास व पुनर्वसुनक्षत्र और आयुष्मान योगमें उसने कोट्याहुति यज्ञ करके राधाकृष्णके मन्दिरकी प्रतिष्ठा कराई।

इस राजाकी बौद्धधर्म्ममें विशेष श्रद्धा थी। राजाने हटको विहार गिरवाकर फिरसे निर्माण कराया। इसके अतिरिक्त औरोंकी चेष्टासे ज्येष्ठवर्णतकुल धर्म्माकृति तथ मयूर वर्ण विष्ण्वाक्ष 'वैष्णववर्ण, ओंकाली रुद्रवर्ण, हक, हिरण्यवर्ण, यशोधराव्यूह, चक्र, शाक, दत्त, यण्णु, नम्बाहा, ज्योबाहा, और धूमवाहा नामक कई एक विहार बनेथे। यहांका जम्बी विहार निर्वाणिक अर्थात् जो लोग निर्वाण तत्त्वके जाननेकी इच्छा करतेथे। उनके निमित्तहैं यह लोग विवाह नहीं करते इस जगह निर्वाण सम्प्रदायी लोगोंके और भी पांच विहार हैं।

ऊपरही लिख चुकेहैं कि, राजा लक्ष्मी नरसिंहके कुटुम्बी, काजी भीममल्ल की सहायतासे नैपालमें तिब्बत बासियोंके संग वाणिज्य व्यापारके लिये संधि हुई थी। उसके नियमसे ललितपुरके बनियोंके संग भोटजातिका वाणिज्य आरम्भ हुआ।

७६९ नैपाली सम्वत्‌में भण्डार थानके पासकी पुष्करिणीके निकट उसने एक २ भूगोल मण्डप बनाया। इस मन्दिरके ऊपरी भागके काठमें नक्षत्र और स्वर्गीय देवताओंकी मूर्तियें बनीहैं। उक्त वर्ष पौषमासकी मकरसंक्रान्तिके उत्सवमें उसने हालूखोंवासी जानकीनाथ चक्रवर्त्ती नामक एक ब्राह्मणको अठारह पुराण दानकिये थे। ७७२ नैपाली सम्वत्‌में वह तीर्थ यात्राको चला। ७७४ नैपाली सम्वत्‌में भयानक आंधी आई जिस्से

नैपालके बहुतसे मन्दिर और घर टूटगयेथे । राजाने धर्म्मरत होकर मन्दिरादि स्थापन और भूमिदान आदि सत्कर्म्मोंमें जीवनका शेष काल बिताया । ७७७ नैपाली सम्वत्में उसने राजसिंहासनको छोड़कर संन्यास धर्म्म लेलिया । कहावत है कि, नैपालमें श्रेष्ठ गुणवाला ऐसा राजा नहीं हुआ उसका नाम लेनेसे सब पाप नष्ट होतेहैं ।

उसके पीछे श्रीनिवास मल्ल ज्येष्ठ शुक्ल १२ को (७७७ नै० सं) में मत्स्येन्द्रनाथके उत्सवके दिन नैपालके सिंहासनपर बैठा । ७७८ नैपाली सम्वत्में भातगांओ और ललितपुर राज्यने मिलकर कान्तिपुरके राजासे युद्ध किया । उस काल श्रीनिवास और प्रतापमल्लमें कालिका पुराण और हरिवंश ग्रंथको छूकर मित्रता स्थापितहुई थी । तथा ललितपुर और कान्तिपुरमें आने जानेके लिये जो एक मार्ग है, उसके खुले रखनेकी परस्पर प्रतिज्ञा कीगई ।

७८० नैपाली सम्वत्में भातगांओंके राजा जगत्प्रकाशमल्लने चाङ्गुके पासकी छावनीमें आग लगाकर आठ आदमियोंको मारा और २१ लोगोंको बन्दीकरके लेगये । इसमें राजा श्रीनिवासने प्रतापमल्लके संग मिलकर पहिले बन्देग्राम और चम्पारनकी छावनीपर अधिकार किया । पीछे चोरपुरीको जीता । तब भातगांओंके राजाने हाथी और धन देकर उससे संधि करली । वहां सात दिनतक रहनेके पीछे उन्होंने नकदेश गांओं-को जीतकर लूटा और थेमी अधिकार करके अपनी २ राजधानीको लौट गये ।

राजा श्रीनिवासने ७८३—७९८ नैपाली सम्वत्में बहुतसे मन्दिर बनवाये और संस्कार कराये । ८०१ नैपाली सम्वत्में उसने भीमसेनका एक बड़ा मन्दिर बनवाया । फिर उसके पुत्र योगनरेन्द्रमल्लने सिंहासन पाया । इसने मणिमण्डप नामक एक बड़ा घर बनाया । उसका पुत्र बालकपनमें ही मरगया । इस कारण राजाने उदासीन होकर संसार धर्म्म छोड़ दिया । उस समय सर्व साधारणके बहुत कहनेसे कान्तिपुरका राजा महीपतीन्द्र या महीन्द्र पाटनका राजा हुआ । इसके मरनेपर जययोगप्रकाशने राज्यभार लिया । इसके पीछे योगनरेन्द्रकी इकलौती कन्या रुद्रमतीका पुत्र विष्णुमल्ल ८४३ नैपाली सम्वत्में राजा हुआ । इसके समय भयंकर दुर्भिक्ष और अनावृष्टि हुई । इसने बहुतसे पुरश्चरण और नाग साधन करके रूठे हुए देवतोंको मनाया । इनके कोई पुत्र नहीं था । अतएव राज्यप्रकाशमल्लको गोदलिया । राज्यप्रकाश शान्त स्वभाववाला था । इस कारण प्रधान लोगोंने कपटसे उसकी दोनों आंखें फोड़ दीं । राजा राज्यप्रकाशने इस दारुण दुःखको न सहकर अकालमेंही इस असार संसारको छोड़दिया ।

तब पाटनके दालाछिकाछ जातिके और २ प्रधान लोगोंने भातगांओंसे राजा रणजीतको लाकर पाटनका शासन भार सौंपा । किन्तु उसके शासनसे प्रसन्न न होकर एक वर्षमें राज्यसे अलग करदिया और कान्तिपुरके राजा जयप्रकाशको पाटनका शासन भार सौंपा । किन्तु आश्चर्य्यकी बात है कि, उसके भी राज्यसे प्रधान लोग निश्चिन्त न रहसके और एक वर्ष पीछे विष्णुमल्लके भेवते विश्वजितको राजा बनाया । विश्वजितके चार वर्ष

राज्यकरनेपर प्रधान लोगोंने उसका भी प्राणसंहार किया। अनन्तर नवकोट आय वहां पृथ्वीनारायणकी अनुमतिसे उसके छोटे भाई दलमर्द्दनशाहको लाकर पाटनके सिंहासनपर बैठाया। एक समय पृथ्वीनारायण और उसके छोटे भाईमें विरोध होगया। और दोनोंमें घोर युद्ध हुआ। राजा दलमर्द्दनके इस आचरणसे अप्रसन्न होकर प्रधान लोगोंने उसको चौथे वर्ष राजगद्दीसे उतार दिया और विश्वजित्‌के वंशमें उत्पन्न हुए तेज नरसिंह मल्लको राजसिंहासन पर सुशोभित किया।

तेज नरसिंहके तीन वर्ष राज्य करनेपर राजा पृथ्वीनारायण नैपालमें आया। जब उसने पाटनपर चढाई की तो राजा तेजनरसिंह भातगांओंको भाग गया। जब पृथ्वीनारायणने देखा कि, प्रधान लोगही यहांके हर्त्ता कर्ता हैं, तो उन विश्वासघातकोंको मरवादिया। ईसवीकी अठारहवीं शताब्दीके मध्यभागमें जब लार्डक्लाइव धीरे २ बंगालकी ओर पैर पसारकर भारतमें अंग्रेज जातिकी होनहार साम्राज्य भीतको बनारहेथे। ठीक उसी समय बंगालके उत्तर ओर हिमालयकी तलेटीमें नैपाल राज्य छोटे, २ सामन्तोंकि अधीनमें बैठकर परस्परकी विपत्तिको सहन कररहाथा। ऊपर लिखे हुए भातगांओं काठमाण्डू और पाटनके पिछले इतिहाससे जाना जाता है कि जब तेज नरसिंह पाटनके सिंहासनपर और अपुत्रक राजा जयप्रकाश काठमाण्डूकी गद्दी पर बैठे थे, तब भातगांओंके स्वामी राजा रणजीतमल्ल किसी साधारण कारणसे उक्त दोनों राजाओंके प्रतिद्वंद्वी होकर सेना सहित उनके ऊपर चढाई करनेके लिये आगे बढे। राजा रणजीतने अपने शत्रुओंके हाथसे रक्षा पाने और अपनेको काठमाण्डू, पाटन और भातगांओंका एकही स्वामी बनानेकी इच्छासे विदेशी शत्रु पृथ्वीनारायणको आदरसे लाया। अभिमानी रणजीतने यह नहीं समझा कि, विदेशी शत्रुको घरमें बुलानेसे कैसा विषेला फल फैलेगा राजा पृथ्वीनारायण इस बुलावेसे बड़ा प्रसन्न हुआ उसके हृदयमें पुनर्वार नैपालकी जय आशा उत्पन्न हुई। जिस नैपालपर उसके बडे बूढे चढाई करके अपना मुंह लेकर फिरआये थे और आपभी वहांसे युद्ध करके भागा था उसी नैपालकी लालसा उसके हृदयसे अब तक दूर नहीं हुई थी। अपने भाई दलमर्द्दन को पहिले पाटनका राज्य दिलाने और चालाकीसे उसको भगानेकी बात अब तक उसके हृदयमें खटकती थी। इस कारण रणमल्लका बुलाना अच्छा समझा चतुर रणजीत सहजसे ही समझ गया कि, मेरा सहायकारी मित्रही मुझसे शत्रुता करनेके लिये तैयार है। अतएव अपनेको हीन बल देखकर परस्पर संधि करनेका प्रस्ताव किया और उस संधिबलसे दृढ होकर शत्रुको सेना सहित भगानेका उपाय करनेलगा। किन्तु उपायका फल कुछ अच्छा नहीं हुआ।

राजा पृथ्वीनारायणने राजा लोगोंको एकत्र देखकर उनसे युद्ध नहीं किया। किन्तु अपना बल बढानेके लिये पहाडी सरदारोंको छलबल करके अपने दलमें लानेकी चेष्टा करने लगा। पहिले पहिले भातगांओंके पूर्ववाल धूम खेत आर चौकोटवालोंके संग छः

बार युद्ध करके उनको अपने वशमें किया, फिर चौकोटमें गढबनवाकर अपनी सेनाको बढाया उस समय महेन्द्रसिंहराय नामक एक राजपुरुषने गोर्खाके संग १५ दिन तक संग्राम किया। इस युद्धमें पहिले गोर्खा लोग पराजित होकर भागे किन्तु अगली लड़ाईमें महेन्द्ररायसिंहके मारेजानेपर चौकोटियाकी सेना संग्राम छोडकर भागी। दूसरे दिन प्रभात होतेही पृथ्वीनारायण रणभूमिको देखने गया। महेन्द्रसिंहका बूढा मृतक देह देखकर उसकी वीरताको सराहा। और उसके परिवारको कई दिन तक राजमहलमें रखकर बड़े आदरसे भोजन कराया फिर भरण पोषणके निमित्त पनावती 'बनेपा' नाला खदपु, सङ्गा आदि पांच गांव देकर अपने पूर्व अधिकृत नवकोट राज्यमें लौट आया।

कीर्तिपुरका पहिला युद्ध सन् १७६५ ईसवीमें हुआ था। इसके कई मास पीछे राजा पृथ्वीनारायणने फिर भी इस नगर पर दो बार चढाई की। तीसरी बारकी चढाई और जयके पीछे जो भयानक अत्याचार हुआ था वह फादर गैसिपीके द्वारा लिखित नेपाल मिसनकी प्रकाशित सूचीसे भलीभांति जाना जाता है।

कीर्तिपुरमें यह पाशविक अत्याचार दिखाकर राजा पृथ्वीनारायण पाटनको जीतनेकी इच्छासे आगे बढा। पाटनके राजा तेजनरसिंहके शरण आनेसे पहिले पृथ्वीनारायणने सुना कि, कप्तान 'कीनलो'कके साथ अंग्रेजी सेना नैपालतराईकी दक्षिण ओर आपहुंची है। यह सुनकर वह शीघ्रही दूसरे मार्गसे चलागया, पृथ्वीनारायणके लौटआनेसे पाटनका राजा तेजनरसिंह एक वर्षतक निश्चिन्त रहा।

कीर्तिपुरकी उस अत्याचारकी बात जिसमें सबही लोगोंकी नाकें कटवाली, गई थीं नेवारके राजाने अंग्रेजोंको सूचित की। सन् १७६७ ई० के आरंभमें कीनलोक साहब नैपालपर्वतके निकट पहुंचे। उस समय वर्षाऋतु थी, अंग्रेजी सेना विपरीत: जलवायु और भोजनके अभावसे बड़ाही कष्ट पानेलगी। यही कारण हुआ जो उसको हरिदुर्गके सामनेसे लौटना पड़ा। अंग्रेजी सेनाके लौटआनेपर भी गुरखिये लोग एक वर्ष तक नेपालमें नहीं घुसे। सन् १७६८ ई० के समय जब नेपालमें इन्द्र यात्राका उत्सव होरहा था, पृथ्वीनारायणने काठमाण्डूको आघेरा। काठमाण्डूके राजा और तेजनरसिंहने बहुतेरा यत्न किया परन्तु सब निष्फल हुआ। जब इन दोनों भूपालोंने नेपालके धनवाना व अपने कुटुम्बियोंको भी पृथ्वीनारायणकी ओर देखा, तो बिना किसी विरोधके किये हुए भातगांवसे चले गये।

राजा रणजीतके इकलौते पुत्र वीर नृसिंहको राज्यसे दूर करनेके लिये उसकी दूसरी रखेलीसे उत्पन्न (सातबाहाल्यों) जारज पुत्रोंने कपट चाल चलकर गोर्खापतिको केवल नाम मात्रका राजा बनाय परस्पर सम्पत्ति और सिंहासन व राज्यके बाँटनेका प्रबन्ध कर लिया फिर अपने इस अभिप्राय और प्रस्तावको राजा पृथ्वीनारायणसे निवेदन किया उसको सुनकर राजा पृथ्वीनारायण प्रसन्नतापूर्वक भातगांवका राज्य लेनेकी इच्छासे आगे बढा।

गोर्खाकी राजाने जारजपुत्रोंकी सम्मतिसे भातगांवपर चढाई की। सातबाहल्या-

लोगोंने कई घंटे तक खाली फैर कर करके युद्ध किया और फिर अपनी गोली बांरूद शत्रुओंके पास भेजदी। अनन्तर उस दरवाजेको जहां वह लड़रहेथे—छोड़कर पीछे हटगये। गोर्खोंने नगरमें घुसते ही बसर अधिकार किया। फिरभी दरबारके सामने एकबार भयंकर युद्ध हुआ, राजा जय प्रकाशके पाँवोंमें गोली लगी और वह मूर्छित होकर गिरपड़ा। सन् १७६९ ई० के आरम्भमें ही यह युद्ध हुआ था। इस युद्धसे ही नेपालके पुराने राजवंशका पतन हुआ और गोर्खालियोंका राज्य जमा।

राजा पृथ्वीनारायणने विजयी होकर दरबारमें प्रवेश किया। उस समय वहाँपर राजा जयप्रकाश, रणजीतसिंह और तेजनरसिंह आदि सबही लोग वर्त्तमान थे। परस्पर प्रसन्नतासे बातें हुईं। राजा पृथ्वीनारायणजीने रणजीतमल्लसे कहा कि, आप अपने भातगांवमें पहलेके समान राज्य करें परन्तु रणजीतसिंहने अस्वीकार करके कहा कि 'मैं अपने मित्रोंकी विश्वासघातकसे बहुतही घबड़ागयाहूं, इस कारण अब राज्य नहीं करूंगा, मेरी इच्छा है कि, काशी जाकर जीवनके दिन पूरे करूं। यह सुनकर राजा पृथ्वीनारायणने रणजीतसिंहके काशी जानेका प्रबन्ध करदिया। जानेके समय चन्द्रगिरि पर्वतपर खड़े होकर थारज (सातबाहाल्यों) पुत्रोंकी शठता तथा अपने पुत्र वीर नरसिंहके वधका वृत्तान्त पृथ्वीनारायणसे निवेदन किया। यह सुनकर राजा पृथ्वीनारायणने सातबाहाल्योंको उनके परिवार सहित बुलवाकर सबकी नाकें कटवालीं और सम्पत्ति छीन ली।

तदनन्तर राजप्रकाशने प्रार्थना की कि, मैं गोलीकी चोटसे अधमरा हो रहाहूं, इस लिये मुझको पशुपतिनाथके आर्य घाटपर पहुँचादिया जावे वहाँ प्राण छूटनेपर अग्निसंस्कार करवादेना।

ललितपुरके राजा तेजनरसिंहने जब देखा कि, हमारे मित्र रणजीतके ही द्वारा यह विपत्ति अपने ऊपर आई, अब किसको दोष लगाया जाय। इनबातोंका विचार करनेसे हृदयमें बड़ी घबराहट हुई परन्तु धीरज धरकर मनही मनमें ईश्वरका स्मरण किया। ठीक उसही समयमें राजा पृथ्वी नारायणने तेजनरसिंहसे उसके मनकी बात पूछी, परन्तु वह चुपरहा। राजा पृथ्वीनारायणने इस बातसे अप्रसन्न होकर तेजनरसिंहको लक्ष्मीपुरमें कैदकरदिया। नेपालके पिछले मल्लवंशीय राजा तेज नरसिंहने लक्ष्मीपुरमें ही अपने जीवनके पिछले दिनोंको बिताया था।

राजा पृथ्वी नारायणने नेपालके सिंहासनपर बैठकर किरात और लिम्बु जातिकी भूमिको अपने अधिकारमें करलिया और धीरे २ वह सब स्थानभी जो नेपालकी सीमाके बाहर थे उसके अधिकारमें चलेगये। उत्तरमें किरोण और कुटी, पूरबमें बिजयपुर और शिकमकी सीमापर बहतीहुई मेची नदी, दक्षिणमें मकवनपुर (माखनपुर) और तरुपाणी (तराई) तथा पश्चिममें सतगंडकी; इस सीमाका बड़ा भूभाग पृथ्वी नारायणके अधिकारमें आगया। भातगाँवसे कान्तिपुरमें आकर उसने एक बड़ी धर्मशाला बनवाई।

इसही राजाने सबसे पहले नीच "युतवर" जातिको राजाके निकट आनेकी आज्ञादी× भारतवर्षतक राज्य करनेके पीछे गंडकीके किनारे मोहनतीर्थकी पवित्रभूमिमें नेपाली संवद् ८९५ के समय राजा पृथ्वी नारायणने परलोककी यात्रा की ।

पृथ्वी नारायणके दो पुत्रथे इनमेंसे बड़ा सिंहप्रतापशाह पिताके पीछे राज्यसिंहासनपर बैठा तथा छोटा पुत्र शाहबहादुर बेतिया राज्यको चलागया । इधर सिंहप्रतापशाहने ८९८ नेपाली संवद्में आचार्योंके कपट जालमें फँसकर अपने शरीरको छोड़ा । सिंहप्रतापशाहकी मृत्युके पीछे उसका पुत्र रणबहादुर राजा हुआ और आचार्योंकी ओरसे शंकितहो उन सबको इन्द्राणीपीठके सामने मरवा डाला । फिर मंत्रिनायक वंशराजपांडेसे अप्रसन्न होकर उसका शिर कटवाया । तदनन्तर रणबहादुरका चचा शाहबहादुर नेपालमें लौट आया और अपने भतीजेका प्रतिनिधि बना । परन्तु रानी राजेन्द्र लक्ष्मीके साथ वैमनस्य होजानेके कारण पुनर्वार राज्यसे बाहर चलागया । उसके जातेही रानीने राज्यका समस्त भार अपने हाथमें लेलिया । इस बुद्धिमती रानीकी चेष्टासे गोर्खाराज्यके पश्चिममें बसा हुआ पाल्पा और कोकसीके बीचका समस्त देश नेपालमें मिलगया । रानीकी मृत्युके पीछे शाहबहादुर पुनर्वार नेपालको लौट आया और समस्त राजकाज करनेलगा । शाहबहादुरके परिश्रमसे सामन्त राज्य चौबीसी और बाईसी, लमजुंग, टनही; पश्चिममें गंगाजीके किनारेवाले स्थान श्रीनगर और कोकसी तकका समस्त भूभाग, पूर्वमें किरातराज्य व शुम्भेश्वरके स्थान नेपालकी सीमामें मिलगये ।

सन् १७९१ ई० में गोरखियोंने नेपाल तिब्बत और भारतवर्षसे अपना व्यौपार रक्षितहोनेके लिये अंग्रेजोंसे प्रार्थना की । उसही कालमें चीनके महाराजसे गोर्खाली राजाका दिगगारचा नामक स्थानके लिये घोर युद्ध हो रहा था । यह स्थान महाराज चीनके गुरूका था । चीनके मंत्री " धूमधाम " और काजी थुरिनने सेना लेकर खत्रिया रसवआ, और गोसाईं थानके नीचे देवराली नामक स्थानमें नेपालियोंको कई बार पराजित किया, नेपालीगण पराजित होकर पहिले धुनचू और फिर खबोराको भागगये । इस युद्धमें प्रधानमन्त्री दामोदर पांडेने बड़ा साहस दिखाया था ।

सन् १७७२ ई० में नेपालियोंने चीनियोंसे पराजित होकर सितम्बर मासमें लार्ड कार्नवालिससे सहायता माँगी। परन्तु उक्त लार्ड महोदयने पहले तो चीनवालोंसे युद्ध करना स्वीकार नहीं किया । पीछे बहुत वादानुवाद होनेपर मार्च सन् १७९३ ई० में मेजर कार्क

× कीर्त्तिपुरकी पहली लड़ाईमें जब राजा पृथ्वी नारायण राजा जयप्रकाशमल्लसे हार खाय एक डोलीमें बैठकर भागरहाथा । उस समय एक सिपाहीने राजा पृथ्वीनारायणका प्राण लेनेके लिये खड्ग उठाया, तत्काल एक दूसरे सिपाहीने उसका हाथ रोककर कहा "राजाको हम नहीं मारसकते" फिर एक दुआन तथा एक कसाई राजाको कन्धेपर चढ़ाकर नवकोट पहुँचे । राजा पृथ्वीनारायणने दुआनकी कार्यतत्परतासे प्रसन्न होकर कहा "शाबास पूत" उस दिनसे दुआन जाति "पूतवर" नामसे पुकारी जातीहै । इस जातिके लोग राजाके शरीरको भी स्पर्शकरसकते हैं ।

पेट्रिकको काठमाण्डू भेजा। परन्तु अंगरेजी सेनाके पहुँचनेसे पहले ही नैपालके महाराजने चीनवालोंसे सन्धि करली थी।

सन १७९५ ई० में रणबहादुरकी अवस्था बीस वर्षपर पहुँची तब उसने राज्यका भार अपने हाथमें लेलिया। राज्य लेनेपर चचा शाहबहादुरसे कुछ मनोमालिन्य होगया। इसी कारणसे शाह बहादुरको जन्मभरका कारागार हुआ।

महाराज रणबहादुरने सन १७०० ई० तक अत्याचारके साथ राज्य किया, अतएव प्रजाने अप्रसन्न होकर मंत्रियोंकी सहायतासे उसको राजगद्दीसे उतारा और बनारस भेजदिया। राजाकी पहिली स्त्री गुल्मी राजकन्याके कोई पुत्र न था, इसकारणसे महाराजने दूसरी एक विधवास्त्रीसे जो ब्राह्मणोंके मिश्रवंशमें उत्पन्नहुई थी विवाह करलिया उस्से गीर्वाण योधविक्रमशाह नामक पुत्र उत्पन्नहुआ। तदोपरान्त सर्दारोंने इस बातका प्रमाण दिखाकर कि, राजपूत राजाको ब्राह्मणीके संग विवाह करना उचित नहीं महाराजको गद्दीसे उतारदिया।

सन १८०१ ई० में नैपालियों और अंग्रेजोंमें एक सन्धि हुई। इस सन्धिके अनुसार नैपालके राजकार्यपर दृष्टि रखनेंके लिये कप्तान डबल्यू, डी, नाक्स साहेब रेजिडेंट होकर नैपालमें रहनेलगे। पहले २ तो नैपालियोंनें इन रेजीडेंट साहबको नगरमें नहीं घुसने दिया था, परन्तु पीछे अप्रेल सन १८०२ ई० में रेजीडेंट साहब नैपालके भीतर गये और एक वर्षतक वहां रहकर सन १८०३ में लौटे। सन १८०४ ईसवीमें लार्डवेल्सलीने नैपालके संधिनियमोंको तोड़दिया और सन १८१० ईसवीके मई मासमें पुनर्वार संधिकी बात चली।

महाराज रणबहादुरजी चार वर्ष तक सन्यासीके वेशमें काशीजीमें रहकर फिर नैपालको लौट आये और तत्काल अपने समस्त शत्रुओंके साथ दामोदर मंत्रीको मारडाला तथा राज्यमें नया आईन चलाकर काँगड़ेकी ओर बढ़े। कांगड़ेके राजा संसारचन्द्रको युद्धमें पराजितकर उसके राज्यको भी नैपालमें मिलालिया।

महाराज रणबहादुरकी मृत्युके पीछे उनके पुत्र गीर्वाणयोधविक्रमशाह राजा हुए, महाराज योधविक्रमशाहने राज्यकी रक्षाके लिये भीमसेन थापाको अपना प्रधान मंत्री बनाया। सन१८०८ ईसवीको नैपालमें भयानक भूचाल आया जिसमें बहुतसे मनुष्य मरे और मंदिरादि भी टूट गये।

इन महाराजके पितानेही सबसे पहले नैपालमें सोनेका सिक्का (अशर्फी) चलाया था। अतएव गीर्वाण योधविक्रम शाहने भी पिताकी भांति नामपानेके लिये ढाक (डबल पयसा) नामक तांबेके सिक्केका प्रचार किया और उसपर अपना नाम भी छपवाया तथा थमवहिल–खेल नामक स्थानमें गोली बारूदका कारखाना स्थापित किया।

सन् १८१० इसवीमें अंग्रेजोंकी ओरसे सन्धि प्रस्ताव होनेपर भी नैपालके संग अंग्रेजोंका वाणिज्य दिन २ मन्द होनेलगा। सन् १७४७ ईसवीसे लेकर सन् १८१४ ई०

तक नेपाली लोग अंग्रेजी सीमामें आन २ कर उपद्रव करते रहे, इस कारण अंग्रेजोंने सन् १८१४ ईसवीके नवंबर मासमें नेपालसे युद्ध करनेकी डोंडी फेर दी । इस युद्धमें जनरल जिलिसपि मारेगये और जनरल मरलि तथा वुड विशेषरूपसे आहत हुए, किन्तु जनरल अक्टरलोनीने वृटिशगौरवकी रक्षा की थी अंग्रेजोंके मकवानपुर नगर और दुर्ग अधिकार करलेनेपर सन् १८१६ ईसवीमें नेपालके महाराजने अंग्रेजोंसे सन्धिकरके नये अधिकार किये हुए देशको छोडदिया, कुछदिन पीछे अंग्रेजोंने उन देशोंके बदलेमें नेपालके महाराजको तराई स्थान देदिया ।

सन् १८१६ ईसवीके सन्धिनियमोंको स्थिर रखनेके लिये गार्डनर नामक अंग्रेजी रेसिडेण्ट काठमाण्डूमें आये । उस समय महाराजा, बालक थे इसकारण नेपालका राज्य सर्दार भीमसेनथापाके ही हाथमें था । इस युद्धके कुछ दिन पीछे नेपालमें भयंकर वसन्त रोग फैला । शीतलाके भयसे नेपालवासी बहुत घबरागये थे । कुत्ते और गीध, नरमांसको लिये हुए दिन दहाडे सडकोंपर घूमतेथे । नेपालका यह भयानक दिखाव देखकर सबका धीरज जाता रहा । महाराज दरबारमेंही रहते थे । तथापि उनके भी शीतला निकली, और इस रोगसे ही वह परलोकको सिधारे ।

महाराजकी मृत्युके पीछे उनके तीन वर्षके पुत्र राजेंद्रविक्रमशाह बहादुर शमशेरजङ्ग नेपालके सिंहासनपर बैठे तथा रणबहादुरकी विधवा स्त्री ललितत्रिपुरासुन्दरी देवीने राज्यका भार अपने हाथमें रक्खा और सरदार भीमसेनथापा उसकी ही आज्ञानुसार राज्यकार्य करने लगे । सन् १८१७ ईसवीमें डाक्टर वालिस उद्भिद् तत्वको जाननेके लिये नेपाल गये । सन् १८२९ ईसवीमें राजाके एक पुत्र उत्पन्न हुआ ।

भीमसेनथापाके प्रभावसे सब ही विस्मित और स्तंभित होगये । पशुपतिनाथके मंदिरमें भीमसेनने जो सोने चाँदीके किवाड चढायेथे उनको और उनकी बनाई धारा और धर्मशालाको देखकर राजाने मनहीमन अपनेको धिक्कारा और सन् १८३२ ईसवीमें रानीकी इच्छासे भीमसेनको कैद करके जेलखानेमें रखना चाहा ।

सन् १८३४ ई०की भयंकर आंधीसे नेपालके बारूद खानेमें आग लगी जिससे बहुत सी थानेंगई और रेजीडेंटी भी टूटगई ।

सन् १८३५ ई० में महाराजने सेनापति मातवरसिंहको कलकत्ते भेजदिया ।

सन् १८३८ ई० में महारानीने रणरंग पांडेको नेपालका सेनापति बनाया । इस कार्यसे भीमसेन थापा और मातवरसिंह निराश हुए । उस काल मातवरसिंह, पंजाबके महाराज रणजीत सिंहके पास किसी कार्यको भेजे गये । इधर महाराजने कई वर्षतक चेष्टा करके सन् १८३९ ईसवीमें भीमसेन थापाको कैद करलिया । भीमसेनथापाने आत्महत्या करके कारागारसे छुटकारा पाया । नेपालके इस महावीर पुरुषने २५ वर्ष तक नेपालका प्रबन्ध उत्तमतासे कियाथा । भीमसेनकी मृत्युके पीछे उसका मृतक शरीर राजमार्गमें घसीटागया और फिर विष्णुमती नदीके किनारे जला ।

भीमसेनकी मृत्युके पीछे सन् १८४३ ई० तक नैपालके शासन विभागमें बड़ी अव्यवस्था रही। इसही कारणसे अंग्रेजोंके साथ युद्ध होनेके लक्षण दिखाई दिये। बुद्धिमान हजसन साहबकी चेष्टासे युद्धका समरति भय जातारहा। इसही वर्षमें बड़ी महारानीने रणरंग पांडेका पक्ष लेकर उसको ही राज्यका प्रधान मंत्री बनाया। उधर छोटी रानीजीने भी भीमसेनके मित्र मातबरसिंहको पंजाबसे बुलाकर प्रधान मंत्री बनाना चाहा। राजपुरुष और सेनाके लोगोंने भी मातबर सिंहकी तरफदारी की अंतरव मातबर सिंहने अपने बल विक्रमसे शीघ्रही पांडे वंशका नाश करडाला।

इसही समयमें नैपालके गौरवस्थल अद्‌भुतबली महाबुद्धिमान श्रीमान् जंगबहादुर साधारण सैनिकरूपसे अपनी होनहार उन्नतिका आभास देरहेथे। श्रीयुत जंगबहादुर नैपाली काजीके पुत्र और मातबरसिंहके सम्बन्धी थे। मातबरसिंह, बालक जंगबहादुरकी भावी शक्तिका विचार करनेसे डरगये। अंग्रेजोंके रेजीडेंट हेनरी लॉरेंस साहबने भी जंगबहादुरकी बड़ी प्रशंसा की थी।

जंगबहादुरने रनवासकी प्रधान रानीके साथ परामर्श करके सन् १८४५ ई० के मई-मासमें मातबरको मारडाला और स्वयंही राज्यके सर्व सर्वा होगये, उस समय भी गगन सिंह प्रधान मन्त्री रहा। सन् १८४६ ई० में सर हेनरी लारेंसके नैपाल छोड़नेपर मिस्टर काल्विन नैपालके रेजीडेन्ट हुए।

मातबरसिंहकी मृत्युके पीछे राजा और रानी दोनों ही जंगबहादुरके अधिकारमें होगये। उसकाल राजमन्त्री गगनसिंह तथा फतहजंग इत्यादि सरदारोंके संग रानी और जंगबहादुर का किसी बातपर विवाद होगया। बढ़ते २ यह झगड़ा यहां तक बढ़ा कि, १४ और १५ सितम्बर सन् १८४६ को नैपालमें भयंकर हत्यालीला हुई महाराज अँधेरी रातमें भागकर काल्विन साहबके पास चलेगये। इधर जंगबहादुरने अपनी सेनाके साथ नैपालके बड़े २ सरदारोंको मारडाला। महाराजने रेजीडेंसीसे लौटनेके समय अपने कोट महलके चारों ओर रुधिर बहताहुआ देखा।

बुद्धिवान् जंगबहादुर अपने भाइयोंके बलसे दृढ होकर नैपालमें शक्तिशाली पुरुष गिनेजाने लगे। जिन पुराने सर्दारोंने जंगबहादुरके विरुद्ध शिर उठाया था वह सब ही उसके भयंकर खड्गका वार पाकर यमपुरीको सिधारगये। नैपालके महाराजभी अपने सामने विपत्तिका सामना देखकर बनारसको चले गये। जिस रानीने अपने पुत्रको राज्यदिलानेके लिये जंगबहादुरकी सहायता की थी वह भी काशीजीको भेज दीगई। सन् १८४७ ई० में महाराजने नैपालका राज्य पानेकी इच्छासे दोबार चढ़ाई की किन्तु दोबार विफलमनोरथ हुए और लड़ाईके युद्धमें उन्हें कैद होना पड़ा। इस प्रकारसे महाराजके राज्यभ्रष्ट होनेपर उनके वंशजके हाथमें राजसिंहासन सौंपागया।

राजा राजेन्द्रविक्रमशाह नैपालके बाहर रहे थे कुछ दिनमें वह पागल होगये। अतएव सर्वसाधारणके कहने और सहानुभूतिसे राजकुलतिलक महाराज सुरेन्द्रविक्रमशाह

शमशेरजंग नेपालके सिंहासनपर बैठे। उनके स्वर्गवासी होनेपर पुत्र त्रैलोक्य वीरविक्रम-शाह बहादुर शमशेरजंग नेपालके राजा हुए। इनका जन्म १ दिसम्बर सन् १८४७ को हुआथा।

महाराज वीर विक्रमशाह शमशेर जंगबहादुरने, जंगबहादुरकी कन्याके साथ विवाह किया जिसके गर्भसे ८ अगस्त सन् १८७५ ई० को जंगबहादुरके पोते तथा नेपालसिंहासनके भावी उत्तराधिकारीने जन्मलिया।

नेपालका नवीन इतिहास और राज्यकी एकेश्वर शक्ति मंत्रियोंके ऊपर निर्भर रहनेसे नेपालका इतिहास मंत्रियोंकी कार्यावलीके ऊपर ही लिखा गया है। नेपालमें प्रधान मंत्री ही महाराज समझाजाताहै। महाराजका किसी विषयमें कोई अधिकार नहीं। राना जंगबहादुरके समयसे ही मंत्रियोंकी ऐसी शक्ति बढ़ी है, और उनके समयसे ही नेपालका इतिहास एक नए मार्गपर चलाहै। नेपालकी पुरानी राजवंशावलीका इतिहास यहींपर समाप्त होताहै आगे जंगबहादुर तथा उसके साथ मिली हुई बातोंको लिखकर नेपालका इतिहास समाप्त करदिया जायगा। सन् १८४९ ई० में दलीपसिंहकी माता चांदकुमारी भागकर नेपालमें चली आई। राना जंगबहादुरने नेपालके समस्त बड़े २ घरानोंमें अपने लड़की लड़कोंका विवाह करदिया था। विलायतसे लौटकर अपने देशमें नये कानून चलाये, सामरिक विभागका संस्कार किया और अपनी रक्षाके लिये शत्रुओंको अपना प्रभाव दिखाया।

राना जंगबहादुरने अपने एक भाईको पापला और मुतबलदेशका हाकिम बनादिया। सन् १७५५ ई० में इलामिन टूईटने वैज्ञानिक तत्त्वकी खोजके लिये नेपालके मध्यभागमें जानेकी अनुमति मांगी, जंगबहादुरने बड़ी सरलतासे वैज्ञानिककी इस प्रार्थनाको स्वीकार किया।

पहली संधिके नियमानुसार नेपालके महाराज पांच वर्ष पीछे चीनके सम्राट्को नजराना दियाकरते थे। नजराना लेकर दूत तिब्बतके मार्गसे जायाकरता था। एक बार तिब्बतवालोंने इस दूतका अनादर किया अतएव सन् १८५४ ईसवीमें नेपालके महाराजने तिब्बतवालोंको इस व्यवहारका दंड देनेके लिये उनके ऊपर सेना भेजी। भलीभांतिसे तइयारी करलेनेपर भी पहाड़ी मार्गोंके पार करनेमें नेपाली सेनाको बड़ा कष्ट उठाना पड़ा। यथेष्ट भोजन न मिलनेके कारण राना जंगबहादुरने आज्ञा दे दी कि, चामरीका मांस खाना दोषकी बात नहीं है। यद्यपि सपाट जमीनमें तिब्बती और भोटिये लोग परास्त हुए तथापि नैपालीलोग उनको शूना, केरंग और कुटी गिरिमार्गसे नहीं हटासके। नवम्बर सन् १८९५ में भोटवालोंने केरंग और जुंगापर अधिकार किया तथा काठमाण्डूसे दूसरी सेना भेजीजानेपर वह एक २ करके सब स्थानोंको छोड़गये। जब यह बखेड़ा दबगया तब जंगबहादुरने नया सामरिक कर लगाकर सेनाके नये छः दल तइयार किये। सन् १८५६ ईसवीके मार्च

मासमें तिब्बत-वालोंके संग जो संधि हुई, उसके अनुसार नैपालियोंने भी तिब्बतके छीने हुए स्थानोंको फेरदिया और तिब्बतके लामा (राजा) ने भी वरसौढीमें नेपालके महाराजको १०००० रुपया देना स्वीकार किया और लासा राजधानीमें एक गोर्खा कर्मचारीका रक्खा जानाभी माना।

अगस्त सन १८५६ ई० में राना जंगबहादुरने नेपालके महामंत्रीका पद अपने भाई बमबहादुरको देकर स्वयं "महाराज" की उपाधि धारणकी तथा ककरी और लमजुंग देशमें जाकर वहांका शासन करनेलगे। उस काल मि० इरविन टूईटने नेपालमें जानेकी आज्ञा पाईथी। सन १८५७ ईसवीमें नैपालकी सेनामें विद्रोहके लक्षण दिखाई दिये परन्तु महाराज जंगबहादुरकी चेष्टासे शीघ्रही शान्ति होगई। इसही वर्षके जून मासमें भारत वर्षके बीच गदर हुआ। उसकाल महाराज जंगबहादुरने १२००० पैदल और ५०० गोलंदाज भेजकर अंग्रेजोंकी विशेष सहायता की। जून मासके अंतमें महामंत्री और सेनापतिका पद ग्रहण करके स्वयं भी अंग्रेजोंके शत्रुओंको दंड देनेके लिये आगे बढे। सन १८५८ ई० के समय विद्रोहियोंमेंसे लखनऊकी बेगमें और उसका पुत्र बिरजिसकद्र, नाना साहब, बालाराव, मम्मूखाँ, बेनीमाधव आदि प्रधान विद्रोही-सरदारोंने नेपालमें आकर अपनी रक्षा की। सन १८५९ ईसवीमें नेपालके महाराजने अंग्रेजोंके अनुरोधसे बागियोंको राज्यसे बाहर निकाल दिया। सन १८६० ईसवीमें नाना साहबकी स्त्रियोंने नेपालमें आकर आश्रय पाया। १८७५ ईसवी तक लखनऊकी बेगम नेपालमें थापतलीके निकट रही थी।

सिपाहियोंके युद्धमें इस प्रकार सहायता करनेसे अंग्रेजोंने नेपालराज्यको तराईका कुछ हिस्सा छोड़दिया और सरदार जंगबहादुरको जी, सी, बी (Grand Cross of the Bath 71) की उपाधि दी। भारतके सिपाही विद्रोहके पीछे नेपालराजके इतिहासमें लिखने योग्य कोई भी बात नहीं हुई। केवल पहिली कीहुई सन्धिमें अंग्रेजी राज्यसे भागा हुआ कोई दोषी यदि नेपालमें आ छिपे तो उसका लौटा देना और नेपालसे कोई दोषी भागकर अंग्रेजी राज्यमें छिपे, तो अंग्रेजोंको उसका लौटा देना ऐसा एक नियम जोड़ दिया गया।

सन १८७३ ईसवीमें तिब्बतके संग पुनर्वार विरोध हुआ किन्तु शीघ्रही शान्त होगया। इसही वर्षमें जङ्गबहादुरने अंग्रेजोंसे सन्मान सूचक जी. सी. एस. आई. की उपाधि पाई और चीन सम्राट्ने भी "थोंग-लिन-पिम-मा-को-काङ्ग-वांग-स्यान-" ÷ की उपाधिसे विभूषित किया। सन १८७४ ईसवीमें महाराज जंगबहादुर इंग्लेन्ड यात्राके निमित्त परिवार सहित बम्बईमें गये और वहांसे पीडित होकर अपने देशको लौट आये जंगबहादुरके पीछे महाराज वीरसमशेरजङ्ग रणाबहादुर के. सी. एस. आई. नैपालके

÷ इस उपाधिका अर्थ "सेनाके नेता सब कार्योंमें बड़े वीर सब प्रबन्धोंमें सेनाके पक्के स्वामी महाराज"।

प्रधान मन्त्री बनाये गये। जो सन् १८९९ ईसवीमें लार्ड कर्जनसे मुलाकात करनेके लिये कलकत्ते गये थे।

नेपालके असली इतिहासका ठीक पता तो मिलताही नहीं क्योंकि नेपाली लोग अंग्रेज या दूसरे किसी विदेशीको काठमाण्डू राजधानीसे १५ मील दूरही तक आने देते हैं। किन्तु अंग्रेजोंकी विशेष चेष्टासे इस नियममें कुछ २ ढिलाई हुई है। बहुधा नेपाली लोग चान्द्रमाससे वर्षकी गणना करते हैं। इसके अतिरिक्त तिथि, नक्षत्र मिलानेके निमित्त समय २ पर मास और दिन भी घटा लेते हैं। इन कारणोंसे वर्त्तमान वर्ष गणनांक संग पूर्ववर्त्ती नैयायिकोंका अधिकतर मतभेद दिखाई देताहै और यही बात पुराने नेपाली राजाओंका राज्य काल निर्णय करनेमें विघ्नस्वरूप है।

नेपालका धर्म्म।

नेपालमें हिन्दू और बौद्धोंका समान प्रभाव देखा जाता है हिन्दू शिवमार्गी और बौद्ध लोग बुद्धमार्गी नामसे पुकारे जातेहैं। समयके प्रभावसे दोनों धर्म्मोंका ऐसा मेल होगयाहै कि, बहुतसे स्थलोंमें धर्म्मकार्य और आचार व्यवहार बौद्ध धर्म्म मूलकहैं या शैव धर्म्म मूलक सो जाननेका उपाय नहीं है।

वर्त्तमान बौद्धके कार्य, कर्त्तव्य, रीति, नीति, पुरोहितोंका विशेष अधिकार नीचे दरजे की सामाजिक व्यवस्था यह सबही जातिभेद की विधिके नियमोंपर स्थितहैं। नेवारी लोगोंमें आधे हिन्दू और आधे बौद्धहैं। बुद्धमार्गी नेवारी लोग हिन्दू लोग संघर्षमें पड़कर तीन श्रेणीमें बटगयेहैं। हिन्दू चतुर्वर्ण, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रके समान इनमें भी बांदा, उदास, और जापू इन तीन श्रेणियोंकी उत्पत्ति हुईहै। हिन्दुओंके क्षत्रिय वर्णके समान यहांके बौद्धोंमें कोई जाति नहीं है। हिन्दुओंमें वर्णकी पृथकताके लिये जैसी दृढ संधि है। यहांके नेवारी बौद्धोंमें उक्त तीन श्रेणियोंकी पार्थक्यरक्षा भी ठीक वैसीहै। हिन्दूलोग जैसे वर्णगत नियमादिका अपव्यवहार करनेपर श्रेष्ठवर्णसे पतित होजातेहैं, नेपाली बौद्ध भी श्रेणिगत पार्थक्य रक्षा न करनेसे ठीक वैसेही पतित मानेजातेहैं। कसाई या पशुमांस बेचनेवाले, एक प्रकारके गाने बजानेसे जीविका निर्वाह करनेवाले काठका कोयला बेचनेवाले, चमड़ेका बनज करनेवाले, मत्स्यजीवी, नगरका कूड़ा हटानेवाले (भंगी) और कपड़े धोनेवाले) यह कई प्रकारके व्यापारी लोग जैसे हिन्दुओंमें बहुत नीच गिने जातेहैं वैसेही बौद्धोंमें भी।

बौद्धोंके तीन वर्णोंमें बांदा नामक याजक श्रेणी हिन्दू ब्राह्मणोंके समान है। इन दोनों श्रेणियोंके सिवाय और सब लोग जापू नामसे विख्यात हैं शूद्रके संग इनका मिलान हो सकताहै, जापुओंमें अधिक लोग किसान हैं, इस श्रेणीमें नेपाली दास दासी पाये जातेहैं। नीचश्रेणीका काम धन्धाभी यही लोग करतेहैं।

बांदा और उदास लोगोंकोही एक प्रकारसे यथार्थ बौद्धाचारी कहा जा सकताहै। जापू लोग शैव और बौद्ध दोनोंके आचार विचारका पालन करतेहैं। बहुतसे

स्थानोंमें आपू-लोग; शैव देवताको बौद्ध और बौद्ध देवताको शैव देवता समझकर पूजते हैं ।

हिन्दुओंके चार वर्णोंमें जैसे अनेक प्रकारके छोटे २ विभाग हैं, बौद्ध त्रिवर्णमें भी वैसेही बहुतसे विभाग हैं । हिन्दू जाति भेदमें जैसे जीविका निर्वाहके लिये वंशका पुश्तेनी पेशा करतेहैं बौद्धोंमें ठीक वैसेही प्रकारके कितने ही विभाग होगयेहैं । इन लोगोंमें भी वैसेही वंशागत वनज होताहै । इस वंशागत व्यौपारमें अब ऐसे बहुत वणिज हैं जिनमें जीविका निर्वाहके योग्य धन-नहीं मिलता ऐसे अवसरपर यह लोग किसी प्रकारका एक साधारण वणिज (जैसे खेती) अवलम्बन करतेहैं । किन्तु दूसरे वंशके व्यौपारको नहीं करते । अर्थात् लुहार लोहेसे जीविका न मिलनेपर खेती करेगा । किन्तु कुंभार या सुनारका काम नहीं करेगा । प्रत्येक नेवारीका । (चाहे बौद्ध हो या हिन्दू) एक एक रोजगार पुश्तेनी रोजगारहै। जीविकाके निमित्त वह चाहे जिस कार्यको करते हों, किन्तु किसी न किसी समय उनको पुराना वंश करनाही पड़ेगा । और सब कार्य्य वंशके अनुसारही होंगे ।

बौद्धोंमें बाँदा श्रेणीही सर्वसे श्रेष्ठ और माननीय है । पूर्वकालमें जो लोग वैराग्य अवलम्बन करतेथे नेवारी लोग उनको ही बान्डा या बाँदा (संस्कृत पंडित) नामसे पुकारते थे । हिन्दोस्थानके बौद्ध संन्यासियोंको जैसे श्रमण कहा जाताहै, यहां भी वैसेही बाँदा नाम माना जाताहै । पहिले यह श्रेणी अर्हत भिक्षुक और श्रावक इत्यादि लोगोंमें विभक्त थी । पूर्वकालमें यहा लोग संन्यासी थे । अब इन विभागोंका चिन्ह तक नहीं पाया जाता । जब बौद्ध मठोंके निर्माणका काम बन्द होगया । उस समय इन लोगोंके संन्यास ग्रहणकी एकान्त कर्त्तव्यता भी लोप होगई । अर्हत और श्रावक लोग आजकल देखे तो जातेहैं, किन्तु वह अब किसी मतसे 'भिक्षु' नहीं हैं और इस समय से ने बाँदोका वंश करते हैं । यहाके बाँदा लोगोंमें नौ श्रेणी हैं प्रत्येक श्रेणीका एक २ पुराना पेशाहै । इन नौ श्रेणियोंमें गुभाल या गुभाजु नामक श्रेणीही प्रधानहै । "गुरुभज" या "गुरुसाहेब" शब्दसे यह शब्द निकलाहै प्रोहिताई करना ही इनका वंशागतकर्त्तव्य कार्य्य है । किन्तु अब यह लोग केवल इसही कार्यको नहीं करते, इनमें बहुतसे लोग दरिद्रहैं । बहुतसे लोग अट्टालिका निर्म्माण दाजीका काम और सिक्कादि ढालनेका काम करतेहैं, बहुतसे महाजनीभी करते हैं इनमें जो लोग पढे लिखे और धर्म्म इत्यादि जानतेहैं, वही पंडित और पुरोहितका कार्य्य करते हैं । इस धर्म्मकार्य्यको कराते इनमी कोई २ दूसरे वणिज करतेहैं । गुभाजुओंमें जो लोग प्रोहिताई करतेहैं उनको वज्राचार्य्य की उपाधि मिलती है । प्रत्येक गुभाजुको जवानीसे पहिले वज्राचार्य्यका काम सीखना पड़ताहै । वज्राचार्य्य लोग घी और अन्नसे अग्निमें होम करतेहैं, होम और मंत्रादिकों को बालकपनमें ही सीखना पड़ताहै सीखनेके समयतक उनको भिक्षुक कहते हैं । कोई अपने घरमें भी सीखनेकी दशामें प्रोहिताई नहीं कर सकता । प्रत्येक शिक्षित भिक्षुक-

को सन्तान उत्पन्न करनेसे पहिले वज्राचार्य्यकी उपाधिसे दीक्षित होना पड़ताहै। दारिद्र मूर्खता पापाचार या दूसरे किसी कारणसे यदि कोई सन्तान उत्पन्न करनेसे पहिले वज्राचार्य्य न होसके तो वह और उसके वंशवाले सदाके लिये वज्राचार्य्यकी उपाधि पानेसे निराश हो जातेहैं और भिक्षुक नामसे पुकारे जाते हैं गुभाजुश्रेणीके बालकोंको वज्राचार्य होनेका अधिकार नहीं है। वज्राचार्य्य जब यजन करते हैं, तब शिक्षार्थी भिक्षुक लोग उनकी सहायता करतेहैं।

सुवर्ण चाँदीका वजन करनेवाले भिक्षुक नामक श्रेणीके लोगभी ऐसी सहायतामें अनधिकारी नहीं हैं। भिक्षुक लोग देवताको स्नान कराना, शृंगार कराना, 'उत्सवके समय उठाना' देव सम्पत्तिकी रक्षा करना, उत्सवकी तैयारी और तत्त्वावधान इत्यादि कार्य करते हैं गुभाजु सन्तान दीक्षा भ्रष्ट होनेपर वज्राचार्य्यकी पदवी तो नहीं पासकती, किन्तु श्रेष्ठ वंशकी ब्राह्मण सन्तान हिन्दू होनेपर भी यदि गुभाजु लोगोंके द्वारा दत्तक रूपसे ग्रहण कीजाय तो उसको नियमानुसार शिक्षादानके पीछे वज्राचार्य्य बनाया जासकता है।

गुभाजु और भिक्षुकोंके सिवाय बाँड़ा लोगोंमें और कोई श्रेणी याजकताका कोई कार्य्य नहीं कर सकती। दूसरी सात श्रेणियोंके अतिरिक्त बाँड़ा लोगोंमेंसे बहुतसे वंश-रीतिके अनुसार सुवर्ण चाँदीके गहने पीतल और लोहेके बर्त्तन बनाना, देवतागठन; तोप बन्दूक आदि बनाना, और काठमें खुदाईका काम इत्यादि पेशा करते हैं। इन नौ श्रेणियोंमें परस्पर लेन देन और खान पान चलता है। बाँड़ालोग अपनी नौ श्रेणीके सिवाय और किसीके संग भोजन पान नहीं करते यदि यह लोग नीच बौद्धोंके संग लेन देनका व्यवहार और भोजन पान करें तो पतित होजाते हैं और उनलोगोंमें मिल-जाते हैं जिनके छूनेसे उनकी जाति नष्ट होतीहै। बाँड़ालोग शिर मुंड़ा हुआ रखते हैं। किन्तु दूसरे लोग रुचिके अनुसार बाल रखते हैं। बहुतसे बौद्धलोग बाल नहीं कटवाते और बहुतसे शिखाकी जगह लम्बी वेणी रखाते हैं। कितनेही इस वेणीको कुण्डला-कार करके रखते हैं, बाँड़ालोगोंकी स्त्रियोंको बालोंके सिंगारका बड़ा शोक होता है, पहरावेमें कोई विशेषता नहीं है। किसी उत्सवादिके समयमें यह लोग प्राचीन कालके बौद्धमठ वासियोंके समान वस्त्र पहर लेते हैं। पहिले एक चुस्त अंगरखा पहरते हैं जिसका नाम "निवास" है। एक चादर कमरमें बाँध लेते हैं। चीवर कमर तक लट-कता रहता है और निवास पैरोंतक लटकताहै कमरके पास चौबन्दी जोड़के समान एक कोंचकान रहता है चीवर और निवासका कमरमें भी एक जोड़ रहता है। पूर्वकालमें नेवारियोंकी एक साम्प्रदायिक पहिरावा था बाँड़ा लोग सदा उसकोही काममें लाते हैं। उत्सवके समय जब उनको देव मूर्त्ति लेकर कोई काम करना पड़ता है तब केवल दहिना हाथ जामेंसे बाहर निकाल लेतेहैं। इससे दहिने हाथके संग २ आधी छाती भी उघड़ जाती है। यह पहिरावे लाल या महावरी रंगके होतेहैं। बहुतसे लोग पीले रंगके

करदेभी पहिरते हैं वज्राचार्य्य और भिक्षुक लोगोंके पहिरावेमें कुछ भेद नहीं है, केवल शिरकी सजावट ही अलगहै। वज्राचार्य्यके शिरपर लाल रंगका मुकुट हाथ या कटिबन्धमें शास्त्रीय ग्रन्थ तथा वज्रदण्ड और घण्टा, गलेमें १०८ दानेवाली विचित्र रंगकी स्फाटिक माला या और किसी प्रकारकी माला पड़ी रहतीहै, माला और छोटा घंटा एक ओर और दूसरी ओर छोटा वज्र लटकताहै;तथा एक विचित्र वर्णका स्फाटिक जड़ाऊ वज्रभी घुकघुकीकी समान झूलता रहता है। भिक्षुकोंके शिरपर रंगी हुई पगड़ी जिसको वज्रान टोपी कहते हैं शोभा पाती है। इस टोपीके ऊपर एक पीतलका बटन या वज्र रहता है और टोपीके सामने एक चैत्यकी आकृति रहती है। साधारण उत्सवोंमें और बांडायात्रामें वज्राचार्य्यलोग भी वज्रान टोपीका व्यवहार करतेहैं। भिक्षुकोंके गलेमें साधारण माला दहिने हाथमें "खिखिलिका" नामक दण्ड और बांयें हाथमें "पिंडपात्र" नामक पीतलकी बटलोई रहती है। लोग इसमें भीख डाल देतेहैं।

बांडालोग जहांपर सदा निवास करते हैं, वह स्थान विहार या मठके नामसे विख्यात है। यह विहार या मठ प्रधान २ बौद्ध मन्दिरोंके निकट बने हुएहैं जो वहां प्राचीन कालसे जिस विहार या मठमें वास करते आये हैं उनमें एक प्रकारका ऐसा घना संबंध होगया है कि, एक बिहार या मठ वासियोंको एक२ छोटा सम्प्रदाय भी कहा जाय तो अतिशयोक्ति न होगी इस प्रकार एक २ सम्प्रदायमें कितनेही आचार व्यवहार और रीति नीति प्रचलित होगई हैं। अपनी रीति नीतिसे प्रत्येक मठका आदमी जानाजाताहै। बांडालोग शान्त स्वभाव; परिश्रमी और सदाचारी होते हैं, "किन्तु अब उनमें बौद्धधर्म्मोक्त सन्यासी और गृहस्थियोंका आचार व्यवहार पहला सा नहीं है। बौद्ध धर्म्ममें कहीं परभी मत्स्य मांसाहार या मादक पदार्थोंके सेवनका नियम नहीं है और मध्यान्हके पहिलेही दैनिक भोजन समाप्त करनेका विधान है। किन्तु यह लोग पुराने बौद्ध सन्यासियोंके स्थानापन्न होकर भी इन साधारण नियमोंका पालन नहीं करते हैं। और अवसर पातेही बकरे व भैंसोंका भोजन करजाते हैं अपने हाथसे बकरा मारते हैं। सुरा अधिक पीते हैं और दिनमें इच्छानुसार चार पांच बार भोजन करते हैं। सुरापी होनेपर यह लोग मतवाले नहीं बनते। दूसरे बौद्ध बांडालोगोंको ठीक ब्राह्मणके समान मानते हैं। जैसे हिन्दूगण ब्राह्मणोंको दान देना पुण्यदायक समझते हैं। वैसेही बौद्ध लोग भी बांडालोगोंको दान देना उत्तम समझते हैं। बांडालोगभी धर्म्मात्मा लोगोंसे दान लेनेके लिये सदा तयार रहते हैं।

उदास लोग वाणिज्य व्यवसायी तथा हिन्दू वैश्य वर्णके समानहैं। इनमें सात दरजेहैं। पहिले श्रेणीका नाम उदास है। तिब्बत और चीनके संग जितना वाणिज्य होता है, वह सब उदास लोगोंके हाथमें है। इन सात श्रेणीके कई व्योपार वंशानुगत हैं। किन्तु बांडालोगोंके समान व्योपार करनेके लिये विवश नहीं है। यह सबही लोग महाजनी करते हैं, विशेषकर मिश्र धातुओंके द्रव्यादि तयार करना नित्यके व-

सेने योग्य बरतन बनाना, सुनारका कार्य्य, खरडे और ईंटबनाना; इत्यादि कार्य करते हैं। उदास लोग गौण बौद्ध हैं । प्रगटमें हिन्दू देव देवियोंकी पूजा नहीं करते अथवा ब्राह्मणोंसे पुरोहिताईका कार्य नहीं कराते । धर्म्म कर्म्ममें बज्राचार्य्यका उपदेश लेते हैं । यह लोग कभी भी बाँडा श्रेणीमें प्रवेश नहीं करसकते । किन्तु खान पानके लिये उनके दलमें मिल सकते हैं सातों श्रेणीके उदास लोग एकत्र खान पान करते हैं । परन्तु जापुओंके संग आहार नहीं करते एक समय विशेष दरिद्री होगयेथे । व्योपारकी हीनतासे अबतक ऊंची दशा नहीं हुई है । इस समय बाँडा लोगही व्योपारमें प्रधान गिने जाते हैं।

शेष समस्त बौद्धही जापू श्रेणीमें हैं । इनकी रीति नीति और आचार व्यवहार विशेष बिगड़ा हुआ है इन्होंने बौद्धाचार विचारके संग हिन्दुओंका आचार व्यवहार अप्रगट रूपसे मिलालिया है । यह लोग उत्सवके समय हिन्दू मन्दिरोंमें जाकर पूजा करते हैं । विवाह और मृतक संस्कारमें भी बौद्ध और हिन्दुओंके आचार व्यवहार मिलाकरही कार्य्य करते है । इनके सामाजिक कार्य्यके समय बज्राचार्य्यके संग एक पुरोहित रहता है इन लोगोंमें तीन श्रेणी हैं, सब श्रेणियोंमें वंशागत व्योपार है । छः श्रेणियोंके खेती आदि कर्म्म हैं एक श्रेणी भूमिका परिमाणादि कार्य्य और एक कुम्हारकी वृत्ति करतीहै कृषिकार्य्यसे जीविका निर्वाह करने वाली छः श्रेणियोंका नाम जापू है । उदास लोगोंके पीछेही इनका दरजा है । तीस प्रकारके जापुओंमेंसे यथार्थ जापूलोग समाजिक विधानमें दूसरी श्रेणियोंकी अपेक्षा आदरके योग्य है । असली जापूलोग अपनी छः श्रेणियोंके अतिरिक्त दूसरी श्रेणियोंके संग भोजन पान और लेन देनका व्यवहार नहीं करते दूसरी चौबीस श्रेणियोंमेंसे पटवे,रंगरेज, 'लुहार' ' कुलु' 'माली' ठीकेदार, बर्धाह, नाई, नाची श्रेणियोंके लुहार, डोम, ग्वाले, बढ़ई, द्वारपाल, डोली उठानेवाले इत्यादि प्रधान हैं इनमेंसे एक श्रेणीका नाम सम्मीं है । तेल बनाना उनका जातिव्योपार है । नेवारियोंमें अब यह सम्मीं लोगही धनी हैं । अब इन्होंने भी उदासी लोगोंके समान महाजनी और व्योपार करना आरंभ किया है । हिन्दूलोग पिछले कहे मिश्रित बौद्ध लोगोंके हाथका पानी नहीं पीते तथापि सम्मीं आदि कई श्रेणियें नेपाल राज सरकारकी कृपासे जला चरणीय (जिनके हाथका जल पीलिया जाय) बन गई हैं ।

अब बौद्धोंका यह जातिभेद धीरे २ दृढ़ होता जाताहै । इनके अतिरिक्त जिन व्योपारोंके करनेसे बौद्धोंकी जाति चली जाती है उनके करनेवाले आठ श्रेणीके लोग पतित गिने जाते हैं इनकी छुई हुई किसी वस्तुको हिन्दू या बौद्ध कोई भी नहीं लेता । इन आठ श्रेणियोंमें परस्पर खान पानका व्यवहार नहीं है । इस देशके वर्ण ब्राह्मणोंके समान नीच श्रेणीके वर्ण बाँडा लोगही उक्त नीच श्रेणीके लोगोंकी याजकता करते हैं ।

नेपाली बौद्धोंमेंसे बाँडा लोगोंका पंचायतमें धर्म्मसम्बन्धीय बातोंकी मीमांसा होतीहै और "गत्ति" के विधानानुसार सामाजिक रीतिकी भी मीमांसा कीजाती है । किन्तु कोई बात विचाराधीन होनेपर गोर्खालोगोंको ब्राह्मण-प्रधान पुरोहित या राजगुरुके

अधीनही होना पड़ता है। इस विषयमें बौद्ध विचारक नहीं होताहै। राजगुरुके विचारालयका नाम धर्म्माधिकरणहै और राजगुरु स्वयंही धर्म्माधिकारीहैं। वह हिन्दूशास्त्रके अनुसार जातिगत विवादका विचार करता है विचारमें धनदण्ड, कारावास, प्राणदण्ड आदिमेंसे चाहे कोई सा दण्ड हो अपराधी बौद्ध होनेपर भी हिन्दू शास्त्रके अनुसार बराबरही दण्ड पाताहै। राजगुरुलोग इनको दण्ड देनेके लिये बौद्ध शास्त्रका विचार नहीं करते।

नेपाली बौद्ध तिब्बती लामा लोगोंको प्रधान बौद्ध मानते हैं। यह लोग ल्हासाकोबौद्ध धर्म्मका प्रधान स्थान जानते हैं। किन्तु धर्म्म विषयमें दोनों दशाओंमें कोई सम्बन्ध वर्त्तमान नहीं है। तिब्बती लोग नेपाली बौद्धोंको हिन्दुओंसे अच्छा समझतेहैं। वह स्वयंभूनाथ बोधनाथ और केशा चैत्यका दर्शन करने आते हैं, किन्तु नेपाली बौद्धोंका समाचार कोई भी नहीं लेता, और न उनके उत्सवादिमें कोई जाता है।

"गचि" के नियमानुसार प्रत्येक श्रेणीके प्रत्येक परिवारके स्वामीको सामाजिक लोगोंका एकवार न्योता करना पड़ताहै। इस प्रकार एक २ भोजमें हजार २ रुपयेसे भी अधिक लगजातेहैं। गरीबको इसप्रकारका भोज देना बड़ा कठिन पड़जाताहै। ऐसा भोज देनेवाला जातिमें गिना जाने लगताहै। एक नियम यहै है कि, यदि किसी परिवारका कोई पुरुष मरजाय तो उस जातिके प्रत्येक परिवारसे एक २ आदमीको मृतकके संग श्मशान तक जाना पड़ताहै और वारहवींमें अशौचान्तके दिन भी उपस्थित होना पड़ता है। नेपाली बौद्धोंका मृतकदेह जलादिया जाताहै। प्रत्येक श्रेणीका दाह स्थान अलग २ है। तथापि सब नदीके किनारे ही हैं। गचिका नियम तोड़नेसे अपराधी अपनी जातिके प्रधान लोगोंके विचारमें धनदण्ड पाता है भारी अपराधमें जातिसे छूटताहै। जातिसे छूटेहुए पुरुषका मृतक देह मार्गमें डालदिया जाताहै। अन्तमें मुर्देफरोश लोग वहांसे उठाकर वनमें फेंक देतेहैं।

नैपालीबौद्धोंकी उपासना।

नेपाली बौद्धलोग आदि चैतन्यको आदि बुद्धनामसे और आदिकारण रूपिणीको आदि प्रज्ञानामसे पुकारकर सर्व श्रेष्ठ देवी रूपसे उपासना करतेहैं। आदि बुद्ध स्वयंभू ज्ञानमय और कर्त्ता हीन हैं। वह स्वयंही सबके कर्त्ता हैं।

अधिकारणरूपिणी आदि प्रज्ञा आक्षि बुद्धकाही आश्रय रूपहैं। इनके मतमें आदि बुद्ध या आदि प्रज्ञाकी कोई मूर्ति कल्पित नहीं होसकती, न किसी मंदिर या शिलामें कोई मूर्ति देखी जातीहै। नेपालका प्रधान बौद्धमंदिर आदि बुद्धके नामपर उत्सर्ग किया हुआ है।

नैपालमें ज्योतिकोही आदि बुद्धका स्वरूप समझकर नमस्कारादि करतेहैं। समस्त ज्योतियोंकी पूजा इस प्रकारसे नहीं की जाती। सूर्यकिरणसे निकली हुई ज्योतिही आदि बुद्धकी भाँति पूजी जातीहै। सूर्यके प्रकाशको भी वह ज्योति मानकर ही पूजा करते हैं।

बौद्धलोग त्रिमूर्ति या त्रिरत्नको पूजतेहैं। बुद्ध, धर्म, संघ, इनकोही त्रिरत्न माना गयाहै। साधारण रीतिसे संघ पुरुषरूपसे और धर्म स्त्री रूपसे कल्पित होताहै। यह स्त्री मूर्ति धर्म ही प्रज्ञादेवी, धर्मदेवी और उग्रतारा देवीके नामसे पुकारा जाताहै। त्रिरत्न सेवामें अधिकार भेदभीहै। प्रायः सब मंदिरोंमें ही त्रिरत्न या त्रिमूर्तिकी स्थापना रहतीहै और लोग उनकी पूजा करतेहैं। घरके बड़े दरवाजेपर चौखट या भीतमें, शयनागारकी दीवारपर, बुद्ध और बोधिसत्वके मंदिरोंपर बहुधा यह त्रिमूर्ति बनी रहतीहै। त्रिमूर्तिकी तीनों मूर्तियें निकटही बनी होतीहैं। कहींपर धर्मकी और कहीं बुद्धकी मूर्ति निकट बनी रहतीहै यह तीनों मूर्त्तियें खिले हुए कमलके ऊपर विराजतीहैं बीचकी मूर्ति बड़ी होती है। बुद्ध मूर्त्ति प्रौढ़ पुरुषकी भांति, धर्म–मूर्त्ति युवती स्त्रीकी भाँति और संघ किशोर अवस्थाके पुरुषरूपसे बनाई जातीहै। त्रिरत्नमें अक्षोभ्य अथवा सिंहबुद्धका आकारही ग्रहण किया जाताहै। चतुर्भुज धर्म होताहै, दोनों ओर दो दो हाथहैं जो छातीपर फैलेहुएसे रक्खेहैं। अंगूठेके पोरुएसे तर्जनीकी नोक मिली हुई है। ऊपरके दोनों हाथोंमेंसे एकमें कमल या जपमाला व शेष दोनों हाथोंमें ग्रंथहैं। कोई २ बोधिसत्त्वकी मूर्तिही संघरूपसे मानी जातीहै। किसी संघ-मूर्त्तिके दो और किसीके चार हाथ होतेहैं। दोनों हाथ जुड़े होतेहैं।

सबसे पहले आदि बुद्ध और आदि प्रज्ञाकी उपासना, त्रिरत्नपूजा, फिर ध्यानी और मानव भेदसे दो प्रकारकी श्रेणियोंके बुद्ध तथा उनकी शक्ति और बोधिसत्वोंकी पूजा की जातीहै।

ध्यानी बुद्ध पांच (और किसीके मतसे छः) माने जाते हैं। मानव बुद्ध सात (और मतान्तरसे भी) हैं। ध्यानी बुद्धोंकी शक्ति उनकी स्त्रियें और बोधिसत्वलोग उनके पुत्र हैं। ध्यानी बुद्धोंकी संज्ञा, शक्ति, बोधिसत्व, गुण, भूतइन्द्रिय, आयतन, वाहन, वर्ण, चूड़ा और मुद्रा अलग २ हैं, जिनके नाम नीचे लिखे जाते हैं। यथा,–

संज्ञा या बुद्ध नाम।	शक्ति या तारा नाम।	पुत्र या बोधिसत्वनाम।	गुण या धातु नाम।
१ वैरोचन।	वज्रधातीश्वरी।१	समन्तभद्र।२	सुविशुद्धधर्मधातु।
२ अक्षोभ्य।	लोचना।	वज्रपाणि।	अदर्शन।
३ रत्नसम्भव।	मामकी।	रत्नपाणि	प्रतिवेक्षण।
४ अमिताभ।	पाण्डरा।	पद्मपाणि।	शांति।

१ वज्रधातीश्वरी, खड्गधारिणी, सप्तनेत्रा (दो नेत्र मुखपर, दो कपालमें, दो हथेलियोंमे, दो नेत्र, दोनों चरण और गुल्फोंमें) नेपालमें सप्तलोचिनी नामसे प्रसिद्धहैं। पाण्डरा पद्मपाणिकी माता होनेके कारण 'पद्मिनी' भी कही जातीहैं, इनके बायेंसे हाथमें जपमाला रहती है। शेष सब देवियें मृणालसहित पद्म धारण किये हुए स्वामीके चूड़ और चिन्होंसे युक्त रहतीहैं।

२ [समन्तभद्रका नेवारी नाम " अब वह देव " है। यह छोटी मत्स्येंद्रयात्राके उत्सवाधिष्ठाता हैं। वज्रपाणिका नेवारी नाम " महाकाल देव " है। पद्मपाणिके हाथवाले पद्ममें तीन मणिहैं। यह ' महाकालदेव ' मणि और पद्मके अधिष्ठाता हैं। इनका मन्त्र ' ओंमणि पद्मे हुम' है। वज्रपाणिके हाथमेंभी ऊपरको उठा हुआ खड्गहै। समस्त बोधिसत्वोंके मुकुटमें पितृमूर्त्ति तथा दोनों ओर डंडीसमेत पद्म रहता है। घंटापाणिके हाथमें घंटा शोभित है।

५ अमोघसिद्ध ।	तारा ।	विश्वपाणि ।	कृत्यानुष्ठान ।
६ वज्रसत्व ।÷	वज्रसत्वात्मिका ।	घण्टापाणि ।	० ० ०

तन्मात्रा या ।

संज्ञा या बुद्ध नाम ।	भूतनाम ।	अधिष्ठानइन्द्रिय नाम ।	आयतन नाम ।	वाहन	वर्ण	चूड़ाचिन्ह	मुद्रा
१ वैरोचन ।	क्षिति या पृथ्वी	चक्षु या दृष्टि शक्ति ।	रूप या वर्ण और आकार ।	दो सिंह ।	सफेद ।	चक्र ।	धर्मचक्र मुद्रा ।
२ अक्षोभ्य ।	अप या जल ।	कर्ण या श्रवण शक्ति ।	शब्द ।	दो हाथी ।	नीला ।	वज्र ।	भूमिस्पर्शमुद्रा ।
३ रत्नसंभव ।	अग्नि या तेज ।	नासिका या घ्राणशक्ति ।	गन्ध ।	दो घोड़े ।	पीला ।	मोरपंख ।	वद्धन (मद्रा) मुद्रा ।
४ अमिताभ ।	मरुत या वायु ।	जिव्हा या स्वाद ग्रहण शक्ति ।	रस ।	दो मोर ।	लाल ।	खिला हुआ कमल ।	ध्यानमुद्रा ।
५ अमोघ । सिद्ध ।	व्योम या आकाश ।	त्वच या स्पर्श शक्ति ।	स्पर्श ।	दो गरुड़ ।	हरा ।	दो वज्र या विश्ववज्र ।	आवाहनमुद्रा ।
६ वज्रसत्व ।	बुद्धि ।	मन ।	धारण और धर्म ।	* * * *	● ●	घंटी ।	* * *

÷ प्राचीन बौद्धग्रन्थोंमें छठवें बुद्धके नामादि नहींहैं । तांत्रिक धर्मावलम्बी बौद्धलोगोंके मतसेही यह छठे ध्यानी बुद्ध रूपसे मानेजातेहैं । इन्होंनेही तन्त्रमत तरुण शक्ति साधनाका प्रचार किया था । यही कारण है जो इनका नाम 'योगाम्बर' हुआहै । और मूर्त्ति नंगी होनेके कारणसे यह 'दिगम्बर' नामसे भी पुकारे जाते हैं ।

२ मानव बुद्ध ।

बुद्ध ।	तारा ।	बोधिसत्व ।
१ विपश्वी बुद्ध ।	विपश्यन्ती ।	महामति ।
२ शिखी ।	शिखामालिनी ।	रत्नधर ।
३ विश्वभू ।	विश्वधारा ।	आकाशगञ्ज ।
४ ककुच्छन्द ।	ककुद्मती ।	शकमंगल ।
५ कनकमुनि ।	कंठमालिनी ।	कनकराज ।
६ कश्यप ।	महीधरा ।	धर्मधर ।
७ शाक्यसिंह ।	यशोधरा या वसुतरा ।	आनन्द ।

८ दीपशंकर बुद्ध ।
९ रत्नगर्भ बुद्ध । } ❋

मानव बुद्धोंकी स्त्रियें ताराहैं, परन्तु बोधिसत्व पुत्र नहीं शिष्य हैं। यह सबही पीले या सुनहरी रंगके भूमिस्पर्श मुद्रायुक्त और सिंहवाहनं हैं। जो लोग ध्यानी बुद्ध पांच मानतेहैं वह तन्त्र मतानुसारी नामसे दक्षिणाचारी, और छः ध्यानी बुद्धोंके माननेवाले तंत्रमतानुसार वामाचारी नामसे पुकारे जाते हैं।

सातवें मानव-बुद्ध शाक्यसिंहकी चरण पूजाभी नेपालमें होतीहै। इनमें आठ मंगल चिन्ह हैं,श्रीवत्स या कौस्तुभ चिन्ह, पद्म, ध्वज, कलश, चामर, छत्र, दो मत्स्य, यह क्रमानुसार बने होते हैं, इसही भांतिसे सहस्र चक्र चिन्हभी हैं।

मंजुश्री बोधिसत्व नेपालियोंमें विशेषतः पूजे जातेहैं जो मंजुश्री मंजुघोष और मंजुनाथके नामसे विख्यातहैं, नेपालके समस्त स्थानोंमें उनके मंदिर हैं, प्रधान मंदिर वह है जो स्वयंभूनाथके निकट बना हुआ है। नेपाली लोग उनको विघ्न विनाशक और रक्षा करता समझतेहैं। शिलाजीवी लोग इनको इस प्रकारसे पूजते हैं जैसे हिन्दूलोग विश्वकर्मा और सरस्वतीको। इनकी प्रतिमा कहीं दो भुजा और कहीं चारभुजाकी होती हैं। दो भुजावाली प्रतिमाके एक हाथमें खड्ग और एक हाथमें पुस्तक होती है। चौभुजी प्रतिमाके दो हाथोंमें धनुष बाण रहता है। इनके मन्दिरके सामने एक पत्थरका टुकड़ा रहता है, उसमें मंजुश्रीके चरण चिन्ह बने रहते हैं। चम्पादेवी पर्वतपर इनकी एक स्त्री वरदा (लक्ष्मी) का और फूलचोंया पर्वत पर दूसरी पत्नी मोक्षदा (सरस्वती) का मंदिर बना हुआ है।

नेपाली बौद्धोंमें हिन्दुओंका शैवाचार और तंत्राचार मिलजानेसे वह लोग शैवदेवता और योन्यादि की उपासना किया करते हैं। नेपालमें स्वयम्भूनाथ ही आदि बुद्धरूपसे और गुह्येश्वरी आदि प्रज्ञारूपसे पूजी जातीहैं। ध्यानी बुद्धोंमें अमिताभ, उनकी शक्ति और पुत्र तथा मानवें बुद्धोंमें शाक्यसिंह और बोधिसत्व मंजुश्री सबसे प्रधान देवता

के अतिरिक्त, बुद्धचरण, मंजुश्रीचरण और त्रिकोण आदि भी विशेष भावसे ।

लोग धातुमंडल नामक एक दूसरे चिन्हकी पूजा भी करतेहैं धातुमंडल दो प्रकारके हैं;—वज्रधातुमंडल और धर्मधातुमंडल वज्रधातुमंडल वैरोचन बुद्धके संग और धातुमंडल मंजुश्री बोधिसत्वके संग संबंध रखताहै । बड़ेर बौद्ध मंदिरोंके पास यह धातुमंडल स्थापित होतेहैं, इनका आकार गोल और अष्टकोण रहताहै । पद्मका चिन्ह भी इनमें बना होताहै । प्रतिमा स्थापन या चरणचिन्ह बनानेके लिये ऐसे मंडलकी आवश्यकता होतीहै । जिसप्रकार बुद्ध या बोधिसत्वोंके पवित्र स्थानादिमें या उनके ऊपर चैत्य बना रहताहै, वैसेही देवताओंके पवित्र स्थानादिमें बड़ेर धातुमंडल बने हुए देखेजातेहैं । इन मंडलोंमें बौद्ध देवी देवताओंकी मूर्तियें या चरणचिन्ह विराजमान होतेहैं । इस प्रकारसे और भी अनेक मंडल हैं ।

पौराणिक देवताओंकी भांति बौद्धोंमें भी दिग्पाल देवता होते हैं जैसे;—खड्गधारी खड्गराज पश्चिम, चैत्यधारी चैत्यराज दक्षिण, इत्यादि २ ।

शैवमार्गियोंके निम्नलिखित देवता बुद्ध और हिन्दू दोनों सम्प्रदायमें ही पूजे जातेहैं ।

भैरव और महाकाल, भैरवी या काली, गणेश, इन्द्र, और गरुड़, भैरवका मुख मत्स्येन्द्रनाथके रथके सन्मुखभागमें लगा रहताहै । यद्यपि बौद्धलोग इस मुखको रथका साजही बताते हैं, तथापि पवित्र होनेके कारण वपिताडु विहारमें स्थापितहै । दैत्यके म देहपर आरूढ़ हुई भैरवकी मूर्त्तियें अनेक बौद्ध मन्दिरोंके सन्मुख मंदिरकी रक्षा या द्वारपालरूपसे प्रतिष्ठित देखी जातीहैं । महाकाल गणाधिपति गणेशके मुक्त पर भी इनकी प्रतिमा मन्दिरके दोनों ओर देखी जातीहै । मंजुश्रीके चरणमंडलकी एक ओर गणेश और दूसरी ओर त्रिशूलधारी महाकालकी मूर्त्ति है यही महाकालकी प्रतिमा बहुतसे स्थानोंमें वज्रपाणि बोधिसत्वके रूपसे पूजी जातीहै ।

बौद्धगण सिद्धिदाता गणेशको बुद्धिदाता जानकर पूजतेहैं । जहां पशुपति दंडदेवका मंदिर है, वहींपर अशोककन्या चारुमतीका बनाया हुआ गणेशजीका एक पुराना मंदिर विराजमान है । चारूबीथी विहारके बांडा प्रोहितही इन गणेशजीके पुजारी हैं ।

यद्यपि काली या भैरवी मूर्त्ति किसी बौद्ध मंदिरमें या मंदिरके निकट नहीं पायीजाती है, तथापि काली इत्यादिके मंदिरमें जाकर बौद्धलोग उनकी पूजा करते हैं और बहुतसे बांडा लोग इन मंदिरोंके पुजारी भी हैं ।

इन्द्रकी अपेक्षा इन्द्रके वज्रको बौद्धलोग पवित्र और माननीय समझते हैं । बौद्धशास्त्रोंमें लिखाहै कि, एक समय बुद्धने इन्द्रको जीतकर उसके वज्रको जयचिन्ह जानके छीनलिया था । भोटिये इस वज्रको "दोर्जी" कहते हैं ।

स्वयंभूनाथके मंदिरके सामने धर्मधातुमंडलके ऊपर पांच फुटका एक वज्र लगाहुआ है । अक्षोभ्य बुद्धका चिन्ह वज्रहै । एक वज्रसीधा और एक आड़ा रखनेपर विश्ववज्र

कहा जाताहै ।, यह अमोघसिद्धि बुद्धका चिन्हहै । बौद्धलोग इसको इस भांतिसे जैसे तांत्रिक लोग महादेवजीको ।

हारीती (शीतला) और गरुड़की मूर्ति सब बौद्धमंदिरोंमें है । गरुड़के पांवतले अर्द्धनारी सर्पाकार नागकन्याकी मूर्ति है । अमोघसिद्ध बुद्धका वाहन भी गरुड़ है, इस वाहनका मंदिर अलग नहीं होता । योनि आदि की पूजा भी बौद्धलोग करतेहैं ।

जैसे बौद्धगण हिन्दू देवी देवताओंकी उपासना करतेहैं वैसेही बहुतसे सनातन धर्मावलंबी भी बौद्धदेवी देवताओं को पौराणिक प्रतिमा समझकर पूजतेहैं । यथा,–गुह्येश्वरीको भगवतीकी प्रतिमा और मंजुश्रीको सरस्वती मानकर मानते हैं । और मंजुश्रीकी दोनों स्त्रियें भी लक्ष्मी और सरस्वतीकी भाँति पूजी जातीहैं । वंशीचूड़ अमिताभ बुद्धभी विष्णुजीके अवतार जानकर पूजे जातेहैं ।

नेपालके शैव हिन्दूगण अधिकांश तांत्रिक शैव हैं; परन्तु शाक्त बहुत थोड़े हैं । देवी देवताओंका वर्णन वस्तवादि वर्णन स्थानमें करही आयेहैं अतएव यहांपर पुनर्वार लिखनेकी कोई आवश्यकता नहीं समझी जाती ।

इति नेपालका इतिहास समाप्त ।

पुस्तक मिलनेका पता–

खेमराज श्रीकृष्णदास,

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस–बंबई.

